Agyeya Ke Sahitya Me Vyakthi Aur Samaj

अज्ञेय के साहित्य मे व्यक्ति और समाज

Thesis Submitted to

Cochin University of Science and Technology

For Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

By

ELSY AUGUSTINE

Supervising Teacher

Dr. P. V. VIJAYAN

Professor and Head of the Department

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI 682 022

1994

CERTIFICATE

This is to certify that this ***THESIS*** *is a bonafide record of work carried out by* ***ELSY AUGUSTINE*** *under my supervision for Ph. D. and no part of this has hither to been submitted for a degree in any University.*

Dr. P. V. Vijayan
(Supervising Teacher)

Dept, of Hindi
Cochin University
Science and Technology
Kochi 682 022

Place Kochi

Date 25-4-1994

प्राक्कथन

अज्ञेय आधुनिक हिन्दी साहित्य के बहुमुखी प्रतिभा के रचनाकार हैं । कहानी उपन्यास कविता निबन्ध आदि साहित्य विभिन्न विधाओं को उन्होंने अपने कृतित्व से समृद्ध किया है । प्रस्तुत शोध प्रबन्ध " अज्ञेय के साहित्य में व्यक्ति और समाज" विषय पर केन्द्रित एक विश्लेषणात्मक अध्ययन है । अज्ञेय का साहित्य समाज के विशिष्ट व्यक्तियों के लिये रचित साहित्य लगता है । उन्होंने अपने साहित्य में व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध जिस रूप में निरूपित किया है, इस शोध प्रबन्ध में इसका अध्ययन किया गया है ।

"शेखर एक जीवनी" नदी के द्वीप, और अपने अपने अजनबी अज्ञेय के उपन्यास है । अज्ञेय के तीनों उपन्यासों के विशिष्ट पात्रों की मानसिकता विशेष प्रकार की है । अपने विशिष्ट व्यक्तित्व की उपेक्षा कर मात्र समाज के लिए जीना उन्हें स्वीकार्य नहीं है । व्यक्तित्व को सुरक्षित रखकर ही वे सामाजिक होना चाहते हैं । अपनी कविताओं में अज्ञेय एक ओर अपने सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति हमेशा सजग तो दूसरी ओर अपनी वैयक्तिक विशिष्टता की रक्षा के लिये सतर्क है । इसीलिए नयी राहों की तलाश में भटकता है । अज्ञेय की शब्द और सत्य, हमारा देश, हिरोशिमा, औद्योगिक बस्ती में वहाँ हूँ, मौन मछली, बंदी स्वप्न, कितनी नावों में कितनी बार आदि कविताओं में व्यक्ति और समाज सम्बन्धी उनकी धारणा अभिव्यक्त है । "हमारा देश" नामक उनकी कविता की कुछ पंक्तियों में भारत के ग्रामों के प्रति उनकी संवेदना प्रकट है । ग्रामों की दुर्दशा का शब्दचित्र देखिए-

"उन तृण फूस छप्पर से
ढंके ढुलमुल गंवार
झोंपड़ों में ही हमारा देश बसता है।"

अज्ञेय ज़रूर व्यक्ति से ही समाज की ओर जाना चाहते हैं। वे समाज की नदी के द्वीप की तरह अपने विशिष्ट व्यक्तित्व को बनाये रखना साथ ही साथ समाज के साथ अपना रिश्ता जोड़े रहना चाहते हैं। यही उनका जीवन-दर्शन है।

अमरवल्लरी, पगोडावृक्ष, अछूते फूल, सेब और देव, कोठरी की बात, जीजीविषा, कलाकार की मुक्ति आदि कहानियों का अध्ययन करने पर व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध अटूट रूप से परिलक्षित दिखाई पड़ता है। रोज़, शरणदाता, बदला, नटरवस आदि कहानियों में बाह्य और आंतरिक संघर्ष चित्रित है। लेकिन सांप्रदायिक दंगे भी वर्णित हैं। बाह्य घटनायें और कार्यक्रम कथानक को सुनिश्चित रूप देते हैं, राजनीति तथा बंदी जीवन से सम्बन्धित कहानियों में आंतरिक संघर्ष और बाह्य समाज समान रूप से वर्णित है। उपन्यास, कविता, कहानी आदि साहित्यिक विधाओं के विशेष अध्ययन के बाद पाठक के मन में ज़रूर यह विचार उभरेगा कि अज्ञेय के साहित्य में जीवित समाज दर्शित है। वे व्यक्ति के ही नहीं समाज के भी रचनाकार हैं। अज्ञेय की सामाजिकता में आम जनता पूर्णः मौजूद नहीं है लेकिन विशिष्ट व्यक्तियों का समाज वहाँ द्रष्टव्य है।

प्रस्तुत प्रबन्ध पाँच अध्यायों में विभाजित है।

पहले अध्ययन में उनकी "जीवनरेखा और सृजनात्मक व्यक्तित्व का अध्ययन है। इस अध्याय में अज्ञेय के जन्म, परिवार, पढाई, विवाह आदि उनके जीवन से संबन्धित बातों की चर्चा है । साथ ही साहित्य में उनका जीवन कहाँ तक परिलक्षित है इसका अध्ययन है ।

व्यक्ति और समाज सम्बन्धी अज्ञेय की धारणायें दूसरे अध्याय में व्यक्त है ।

तीसरे अध्याय में उनके उपन्यास साहित्य में व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध किस प्रकार है यही व्यक्त किया गया है ।

चौथे अध्याय में उनकी अमरवल्लरी, पगोडावृक्ष, अछूते फूल सेब और देव जीजीविषा जैसी कहानियों का अध्ययन है जिससे समाज और व्यक्ति सम्बन्धी अज्ञेय के विचार पाठकों के मन में जम जाते है ।

पाँचवाँ अध्याय में अज्ञेय की सामाजिक कविताओं का अध्ययन है ।

उपसंहार के रूप में कहा गया है कि अज्ञेय के साहित्य में विशिष्ट व्यक्ति है, उनका समाज है, उनके रचना संसार में समाज से जुड़नेवाला व्यक्ति है । समाज से जुड़नेवाले व्यक्तियों का विशिष्ट समाज ही मौजूद है ।

कोचिन विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के अध्यक्ष व प्रोफेसर डॉ. पी. वी. विजयन के विद्वतापूर्ण निर्देश की सहायता से मैं ने यह शोधकार्य किया है । विषय चुनाव से लेकर इसकी प्रस्तुति तक उनके उपदेश से मुझे प्रोत्साहन मिला है । इसकेलिए मैं बहुत आभारी हूँ ।

इस विभाग के पुस्तकालय की अध्यक्षा श्रीमती कुंजिक्कुट्टी तम्पुरान और पी. ओ. आन्टणी के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करती हूँ । केन्द्रीय विश्वविद्यालय हैदराबाद, उसमानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और कोचिन विश्वविद्यालय के प्रति भी मैं कृतज्ञ हूँ ।

अज्ञेय के रचना संसार के समग्र अध्ययन से उनकी साहित्य में जो सामाजिकता वर्तमान है, उसे अपने ढंग से उभारने का मैं ने प्रयत्न किया है । मेरी सफलता का मूल्यांकन केलिए यह शोध प्रबन्ध पाठकों के सामने सविनय समर्पित करती हूँ ।

एलसी अग [illegible] स

अनुक्रमणिका

अध्याय - एक

जीवन रेखा और सृजनात्मक व्यक्तित्व

अज्ञेय - विलक्षण प्रतिभा के धनी साहित्यकार - जीवन रेखा - परिवार- जन्म और बचपन - क्रान्ति दर्शिता - क्रान्ति से वापसी - नाम - सृजनात्मकता - व्यक्तित्व - सामाजिक पक्ष - सर्जनात्मकता के प्रति समर्पण का भाव - व्यक्ति सत्ता की रक्षा - कविता में अज्ञेय की सर्जनात्मकता - शेखर एक जीवनी में सर्जक अज्ञेय - नदी के द्वीप का र[illegible] - अज्ञेय की कहानियों में प्रतिफलित व्यक्तित्व - निष्कर्ष ।

अध्याय - दो 32

व्यक्ति और समाज सम्बन्धी अज्ञेय की धारणायें

व्यक्ति की परिभाषा, समाज क्या है ? अज्ञेय के साहित्य में प्रतिबिम्बित [illegible]ज, समाज और व्यक्ति परस्पर पूरक है ।

अध्याय - तीन 61

अज्ञेय के उपन्यास साहित्य में व्यक्ति और समाज

अज्ञेय के पूर्व के उपन्यासों में व्यक्ति और समाज, अज्ञेय के उपन्यास, युद्धोत्तर परिस्थितियाँ, नये मूल्यों की खोज, [illegible] सम्बन्ध, रचना

का अनोखापन, अज्ञेय के उपन्यासों में व्यक्ति की स्वतंत्रता और विद्रोह के स्वर, शेखर एक जीवनी, कथावस्तु, शेखर का चरित्रगत अध्ययन, नदी के द्वीप, रेखा का वैयक्तिक अध्ययन भुवन, उपन्यास के पात्रों की असामान्य मनोवृत्ति, अपने अपने अजनबी, चरित्र चित्रण, योके, सेल्मा, समाज के प्रभाव अज्ञेय के पात्रों पर, वैयक्तिकता अज्ञेय के पात्रों में, उपन्यासों में लेखक के दर्शन का प्रभाव, व्यक्ति और समाज, अज्ञेय की सामाजिक मान्यताएं, परंपरा के प्रति व्यक्ति का विद्रोह, अज्ञेय के उपन्यासों में वैयक्तिकता, निष्कर्ष ।

अध्याय - चार 124

अज्ञेय के कहानी साहित्य में व्यक्ति और समाज

युगप्रवर्तक साहित्यकार प्रेमचन्द, अज्ञेय की कहानियाँ, अस्तित्ववाद और अज्ञेय की कहानियाँ, मानवस्वतंत्रता, व्यक्ति और समाज के बारे में सार्त्र के विचार, पगोडावृक्ष, अछूते फूल, सेब और देव, कोठरी की बात, जीजीविषा, शरणदाता, कलाकार की मुक्ति, गैंग्रीन या रोज़, निष्कर्ष ।

अध्याय - पाँच 161

अज्ञेय की कविता में व्यक्ति और समाज

साहित्य में वैयक्तिकता का स्थान, अज्ञेय की कविता में समाज, अज्ञेय के काव्य में वैयक्तिकता, अज्ञेय के काव्य में आत्मसंघर्ष, लघुमानव का चित्र, मैं से हम की ओर की यात्रा, निष्कर्ष ।

उपसंहार

अध्याय १

जीवनरेखा और सृजनात्मक व्यक्तित्व

अज्ञेय – विलक्षण प्रतिभा के धनी साहित्यकार

बहुमुखी प्रतिभा के बहुआयामी व्यक्तित्व के सिद्धहस्त रचनाकार है अज्ञेय । भोक्ता और सर्जक अज्ञेय के व्यक्तित्व की अपनी मौलिक विशेषतायें है । अज्ञेय के बहुमुखी और संश्लिष्ट व्यक्तित्व का पूरा का पूरा परिचय पाने को उनके साहित्य का अध्ययन करना आवश्यक है । उन्हें दंभी या आत्मलीन मान बैठना ठीक नहीं है । उपन्यास, कहानी, कविता, निबन्ध, यात्राविवरण आदि साहित्य की सभी श्रेष्ठ विधाओं में उनकी रचना महत्वपूर्ण है । अज्ञेय का कहना है "मुझ में साधारण होकर जीने का कोई आग्रह नहीं है केवल सहज होना चाहता है।" अज्ञेय के साहित्य में एक विशिष्टता की मुद्रा प्राप्त होती है । उनके साहित्य में आत्मगौरव झलकता है । वे अपने को रचनाकार या सर्जक की विशिष्ट भूमिका में रखते है ।

जीवन रेखा

अज्ञेय के पूर्वज पंजाब के निवासी भणोत सारस्वत ब्राह्मण थे । उनके दादा संस्कृत के प्रकांड पंडित थे । अज्ञेय के पिताजी हीरानन्दशास्त्री प्रतिभाशाली थे । वे पुरातत्व विभाग के अधिकारी थे । पारिवारिक दृष्टि से अज्ञेय मध्यवर्गीय परिवार के है । अज्ञेय के शब्दों में "दैन्य हमने नहीं जाना तो जिसे संपन्नता कहना चाहिए । अर्थात्-जिसका आधार आर्थिक निश्चिंतता हो वैसी व्यय-क्षमता वह भी हमारी नहीं थी ।"

परिवार

अज्ञेय के पिता श्री हीरानन्द शास्त्री था । वह माँ से अधिक प्रेम नहीं रखता था । उनकी बहिन है इन्दुमती और अन्ना । अपनी बड़ी बहिन जो उनसे आठ वर्ष बड़ी थी, अज्ञेय को प्यारी थी । उनके बड़े भाई थे ब्रह्मानन्द और जीवानन्द । छोटा भाई वात्सराज था । उनसे वे बहुत अधिक प्यार करते थे । सन् 1934 में उनके बड़े भाई और छोटे भाई दोनों मर गये । उनकी पत्नी थी डा॰ कपिला वात्स्यायन और बाद को सत्यवती वात्स्यायन । इला डालमिया उनके जीवन में हमेशा ही उनके साथ थी । वे उससे पुत्री का-सा सम्बन्ध र थे।

जन्म और बचपन

मार्च 1911 को एक मध्यवित्तीय परिवार में उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के कसिया नामक स्थान में अज्ञेय का जन्म हुआ । उनके बचपन के प्रारंभिक पाँच वर्ष लखनऊ में बीते । उसके बाद अपने माता-पिता के साथ चार वर्ष श्रीनगर में रहे । अज्ञेय की शिक्षा कुल-परंपरा के अनुसार पद्धति से आरंभ हुई जिसमें पहले को विभिन्न प्रकार के मंत्र श्लोक, व्याकरण के नियम आदि जबानी याद कराए जाते है । अज्ञेय की विधिवत् शिक्षा उस अवधि में शुरू हुई जब वे काश्मीर में थे । अज्ञेय ने श्रीनगर में एक संस्कृत पंडित से "रघुवंश" रामायण हितोपदेश" आदि तथा फारसी के मौलवी से "शेख सादी" पढी । लखनऊ में ही अज्ञेय ने अपने शैशव के प्रारंभिक वर्ष बिताये । लखनऊ खड़ीबोली हिन्दी ही मानी जाती है । हिन्दी लिखने और पढने का अभ्यास उन्होंने पिता के साथ काश्मीर से बिहार आने पर शुरू किया ।

1919 में अज्ञेय के पिताजी का तबादला नालंदा में हुआ और ये उनके साथ नालंदा आ गये । 1921 में अज्ञेय अपने पिता के साथ उटकमंड गये । और 1921 में उडिपी के माध्वाचार्य के द्वारा उनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ । उसी मठ के पंडित से उन्होंने छह महीने तक संस्कृत और तमिल पढ़ी । उटकमंड में ही अज्ञेय के गंभीर अध्ययन की नींव पड़ी । इसी समय उन्होंने प्रथमः "गीता" पढ़ी । देवरिया जिले से उटकमंड तक की एक यायावरी वृत्ति उनके बचपन के समय दिखाई पड़ती है ।

उटकमंड में रहते समय उन्होंने वर्डसवर्थ, टेनीसन, लांगफ़ेलो और व्हिटमान की कवितायें शेक्सपीयर मारलो वेब्स्टर के नाटक तथा मिल्टन जार्ज इलियट, थैकरे, गोल्डस्मित्थ, तोल्स्तोय, विक्टर ह्यूगो और मेलविल के उपन्यास पढ़े । टेनिसन से वे इतने प्रभावित थे कि उसके अनुकरण में उन्होंने कुछ कवितायें भी लिखी । उपन्यासों में ह्यूगो का टायलर्स आफ द सी " का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा । इन्हीं दिनों अज्ञेय का परिचय मैथिलीशरणगुप्त, मुकुटधर पांडेय, श्रीधर पाठक, हरिऔध रामचरित उपाध्याय और आरा के ब्रजयोगी देवेन्द्र आदि की कविताओं से हुआ ।

अज्ञेय के व्यक्तित्व में उटकमंड प्रवास का महत्वपूर्ण योगदान है । वे उटकमंड से तीन मील दूर फर्नीहिल नामक स्थान के एक बंगले में रहते थे । स्थान, भाषा और समुदाय तीनों उनकेलिए अपरिचित थे । इसी पृष्ठभूमि में व्यक्ति एकांतप्रिय बन जाता है । जम्मु के प्रवास ने उनके स्वभाव में एकांत तथा प्रकृति के प्रति प्रेम पैदा कर दिया । अज्ञेय ने स्वयं लिखा है - मैं स्वभाव से ही एकांतप्रिय था और परिस्थितियाँ भी अकेला रखती आयी थी । पर उटकमंड में एकांत में डूब ही गया,

यद्यपि प्रकृति के स्पंदन भरे एकांत में जिसमें इस बात की चिंता नहीं थी कि परिवार के बाहर का कोई भी हमारा एक शब्द भी समझनेवाला न था, न हम किसी का एक भी शब्द समझते थे।"

1925 में अज्ञेय न मैट्रिक की परीक्षा पास की। उसके बाद मद्रास क्रिश्चियन कालेज में आई. एस. सी कक्षा में प्रवेश किया। अज्ञेय ने यहाँ उनके अंग्रेज़ी प्रोफेसर डैंडरसन के साथ टैगोर अध्ययन मंडल की स्थापना की और रेस्किन का सौन्दर्यशास्त्र तथा आचार-शास्त्र का अध्ययन किया। उस अवधि में उन्होंने दक्षिण का भ्रमण किया। दक्षिण के मंदिरों और नीलगिरी की प्राकृतिक सुषमा ने उनके कलाप्रेम तथा प्रकृतिप्रेम को और भी निखार दिया। 1927 में उन्होंने आई. एस. सी की परीक्षा पास की।

क्रान्तिदर्शिता

1927 में उन्होंने आई. एस. सी की परीक्षा पास की। उसी वर्ष उन्होंने लाहौर के फारमन कालेज में बी. एस. सी में प्रवेश किया। उसी समय वे "नवजवान-भारत-सभा" के सम्पर्क में आए और हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी के प्रमुख सदस्य चन्द्रशेखर आज़ाद, सुखदेव और भगवतीचरण बोहरा से उनका परिचय हुआ। 1929 में लाहौर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमें उन्होंने स्वयंसेवक के रूप में हिस्सा लिया था। 1929 में अज्ञेय ने बी. एस. सी के बाद एम. ए में नाम लिखाया। इसी वर्ष वे क्रान्तिकारी दल में सक्रिय रूप से शामिल हो गए। उनके कार्यक्रम के अनुसार बम बनाने का कारखाना स्थापित किया। वे 1930 को गिरफ्तार हुए। एक महीने तक लाहौर किले में रखने के बाद अमृतसर की हवालात में लाया गया जहाँ उन्हें अनेक यातनापूर्ण

स्थितियों से गुज़रना पड़ा । अज्ञेय ने बन्दी के रूप में एक महीना लाहौर किले में और साढ़े तीन साल दिल्ली और पंजाब की जेलों में बिताए फिर दो मास किले में और दो वर्ष नज़रबन्दी में रहे ।

जेल में अज्ञेय ने जो जीवन बिताया वह अवधि, आत्ममंथन, शारीरिक यातना और स्वप्नभंग की होगी । 1934 में घर जाने पर एक साथ छोटे भाई और माता की मृत्यु तथा पिता की सेवानिवृत्ति ने नये आघात तो पहुँचाया । जेल जाने के बाद अज्ञेय ने जोरों से लिखना शुरू किया । उपन्यास, कहानी, कविता, निबन्ध सब कुछ । "शेखर एक जीवनी" इसी काल का उपन्यास है । नज़रबन्दी से मुक्त होने पर आश्रम खोलने का विचार किया । लेकिन पराजय था फल । इसके बाद अज्ञेय आगरा से प्रकाशित होनेवाले "सैनिक" के संपादक मंडल में आये । 1937 में प. बनारसीदास के आग्रह पर ये "विशाल भारत" के संपादक मंडल में आये । 1940 में उन्होंने [illegible] मैरिज की जो बाद में तलाक में समाप्त हुई ।

अज्ञेय क्रांति और युद्ध के प्रेमी थे । 1946 में उन्होंने सैनिक सेवा से मुक्ति की प्रार्थना की । उनको युद्ध में शामिल होने की इच्छा थी । उसकी पूर्ति भी हुई । युद्ध समाप्त हो गया था और वे शांतिकाल के सैनिक बनकर रहना नहीं चाहते थे ।

क्रान्ति से वापसी

1946 में अज्ञेय के पिता का देहावसान गुरूदासपुर में हो गया । बचपन से ही अज्ञेय स्वाभिमानी और विद्रोही थे । लेकिन पिता के

साथ उनका बहुत ही गहरा सम्बन्ध था । पिता की मृत्यु ने उन्हें आघात् दिया और वहीं से वे साहित्य साधना में जुड़ गये । 1947 में इलाहाबाद में रहकर उन्होंने प्रतीक नामक मासिक पत्रिका का संपादन करना आरंभ कर दिया । प्रतीक के बंद होने के बाद 1952 में उन्हें फिर आल इंडिया रेडियो, दिल्ली में नौकरी मिल गयी । 1956 में कपिला जी से अज्ञेय का विवाह दुबारा हुआ । 1955 युनेस्को के निमंत्रण पर अज्ञेय पश्चिम यूरोप की यात्रा पर गये । इस यात्रा के आसपास स्वीडिश लेखिका सारा लीडमैन ने बर्फ में कैद हो जाने की एक वास्तविक घटना सुनाई ।

1960 में दूसरी बार यूरोप-यात्रा में निकले । इसके बाद 1961 में अज्ञेय कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति और साहित्य के अध्यापक होकर गये । 1964 तक प्रायः वहीं रहे । विद्यानिवासमिश्र के अनुसार "अमेरिका में रहकर उन्होंने केवल अध्ययन की विस्तार ही नहीं किया भारतीय साहित्य को अधिक सहज ग्राह्य बनाने के लिये केवल ज्ञान ही नहीं तैयार की बल्कि वे भीतर ही भीतर अनुभव के एक नई प्रक्रिया से गुजरते रहे अपने अकेलेपन में विराट होते रहे, भारत के अकेलेपन से जुड़ते रहे" स्वदेश लौटते ही उन्हें दिल का दौरा पड़ा और अस्पताल में दुःसह कष्ट झेलना पड़ा । विद्यानिवास मिश्र के अनुसार "उस बीमारी के बाद एक ऐसा व्यक्तित्व उनमें उभरा जो पहले की अपेक्षा अधिक दुःख की चोट सहने में अधिक जागरूक और अपने धैर्य के लिए अधिक आश्रित भी ।" इसके बाद 1965 में दिनमान साप्ताहिक का संपादन आरंभ किया । दिनमान को उनकी संगठन शक्ति, कल्पना और निष्ठा ने हिन्दी का अन्यतम साप्ताहिक पत्र बना दिया । 1965 में अज्ञेय के छोटे भाई पूर्णानन्दजी की मृत्यु हुई

और उन्हें उनके परिवार का दायित्व संभालना पड़ा । मैथिलीशरण
गुप्त और मुक्तिबोध की मृत्यु ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला ।

1966 में अज्ञेय पूर्वयूरोप की यात्रा में निकले । वे रूमानिया, युगोस्लाविया, रूस और मंगोलिया भी गये । वहाँ उन्होंने हिन्दी कविता एवं उपन्यास के युगोस्लाव अनुवाद की योजना तैयार की तथा युगोस्लाव कविता और उपन्यास का हिन्दी अनुवाद की योजना की । 1968 में अज्ञेय जी कालिफोर्निया विश्वविद्यालय के निमंत्रण पर वहाँ गये । 1972 में जयप्रकाशजी आग्रह पर उन्होंने दिल्ली से "एवरीमैन्स" का संगठन, संपादन स्वीकार किया । 197.. विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन ने अज्ञेय को डिलिट की मानद उपाधि दे चुका था । 1972 में उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने उन्हें "विद्यावारिधि" की उपाधि प्रदान की फिर 1973 से अज्ञेय ने "प्रतीक" का पुनः प्रकाशन "नयाप्रतीक" शीर्षक से करना आरंभ किया है ।

नाम

अज्ञेय का पूरा नाम है, सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन । उनके उपनाम है अज्ञेय । उनके बचपन का नाम है सच्चिदानन्द । उनके पिता का नाम है हीरानन्द । उनके नाम के बाद पिता के नाम भी जोड़ने पर सच्चिदानन्द हीरानन्द हो जाता है । उपनयन संस्कार के समय पर उ... गोत्र, वत्स के आधार पर उन्हें तो वात्स्यायन नाम दिया । उनके कुलनाम था "भणोत" इस प्रकार उनका नाम सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन हो गया फिर उनका सरनाम अज्ञेय किस प्रकार उसे मिला । क्रांतिकारी दलों के कारण वात्स्यायन जेल में थे । जेल

में से उनकी चिट्ठियाँ आने लगी । रचनायें आने लगी । उनके मित्र जैनेन्द्र ने उन रचनाओं को प्रेमचन्द के पास भेजा । प्रेमचन्द ने उन रचनाओं को छपने योग्य देखा । उस समय जेल में होने के कारण उनका वास्तविक नाम रखना असंभव था । यहाँ वात्स्यायन जी के लिए जैनेन्द्र ने ही अज्ञेय नाम रखा । और उन कृतियों का प्रसिद्धिकरण अज्ञेय नाम रखकर किया । इसी प्रकार उन्हें अज्ञेय नाम मिला ।

सृजनात्मकता ।

जीवन की समस्याओं का भोक्ता है कलाकार । इस भोक्ता कलाकार से स्रष्टा होने की जटिल प्रक्रिया है सृजनात्मकता । अज्ञेय ने ही उनके निबन्धों में कई बार कहा है कि सृजनात्मकता वास्तव में एक रसायनिक प्रक्रिया है । संसार से मिली अनेक वस्तुओं को मिलाकर काटलिटिक रीएजन्टों को जोडकर चलानेवाली एक प्रक्रिया । यहाँ कृति बिलकुल एक नयी चीज़ है । साहित्यकार का हृदय यहाँ काटलिटिक रिएजन्ड है । अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध कवि वार्डसवर्थ ने कहा है कि कविता या साहित्य हमारे अकलपन के समय उमडकर बहनेवाले अनुभव रूपी नदी की बाढ है । वह तो एक स्वतः बहनेवाली प्रक्रिया है । टी. एस. एलियट ने साहित्य को *escape from Personality* कहा है ।

"आंगन के पार द्वार" अज्ञेय के एक काव्य संकलन है । इसकी "भीतर जागा दाता" कविता की कुछ पंक्तियाँ उसका समर्थन करता है ।

मतियाया
सागर लहराया
तरंग की पंखुड़ित वीणा पर

पवन ने भर उमंग से गाया
मेरे भीतर जागा
 दाता
बोला
लो यह सागर मैं ने तुम्हें दिया

यह रूप जो केवल मैं ने देखा,
यह अनुभव अद्वितीय, जो केवल मैं ने जिया
सब तुम्हें दिया ।

यहाँ इस कविता में प्रकृति के विभिन्न अनुभवों को देखकर, भोगकर कवि मन जाग उठा । उस अनुभव को दूसरों के साथ बाँटने को वह लालायित हो जाता है । कवि कहता है रूप के बारे में, जो उसने मात्र देखा है और एक अनुभव वह केवल अपने अनुभव किया है । वह अनुभव तो अद्वितीय है । जो साधारण नहीं है । साहित्यकार का वह अद्वितीय अनुभव जो उसने मात्र देखा है वहीं सृजन प्रक्रिया है । अन्तःसलिला कविता में भी वही व्यक्त किया है । अद्वितीय निधि पर यह अद्वितीय अनुभव फूट निकलता है । यहाँ साहित्य बन जाता है ।

सृजनात्मकता का जो अनुभव है आम आदमी का नहीं है यह आम शब्द से क्या तात्पर्य है । एक साधारण आदमी एक गुलाब के फूल को देखता है वह इतना ही सोचता है, वह फूल सुन्दर है । लेकिन साहित्यकार विशेष दृष्टि से देखता है । और उसके फलस्वरूप कुछ कुछ कविता लिखता है । यह विशेष दृष्टि ही प्रधान है । वह

को नहीं । यही सृजनात्मक दृष्टि है, अनुभव है, जो विशेष है, अद्वितीय है । बहुत अधिक लोगों ने डाफोडिल्स का फूल देखा है । लेकिन वेड्सवर्थ ने उसे देखा अंत को । पहले जो लोग उसे देखा वे गये । लेकिन वेड्सवर्थ ने क्या किया 'डाफोडिल्स' नामक आश्चर्य कविता को जन्म दिया । कवि की यह प्रसवपीडा ही सृजन प्रक्रिया है । यह आम आदमी से उसे विशेष बनाता है । उसी समय उसकी भाषा भी विशेष है । साधारण शब्द भी कवि के प्रयोग से विशिष्ट हो जाते हैं । इसी प्रकार आम शब्द को विशिष्ट बनाने की कवि की चेष्टा, साहित्यकार की विवशता ही सृजनात्मकता है । "सवाल यह होता है चाहे जहाँ से शुरू किया आम-से या खास से जहाँ पहुँचे वहाँ क्या लेकर पहुँचे ? ... अद्वितीय पात्र की अद्वितीयता को (और अद्वितीयता के बावजूद ...) आप सर्वसंवेद्य और सर्वग्राह्य बना सके तो अपने विशिष्ट प्रयोग को सर्वसंवेद्य और सर्वग्राह्य बना सके तो आप ने काम किया और ठीक किया । यह ... इसी विशिष्ट होकर भी अब सबको काम आनेलायक हो गया और हमें एक नयी समृद्धि का बोध दे गया – जहाँ ऐसा लगे वहाँ सर्जना है । और केवल वहीं सर्जना है । क्यों कि जहाँ ऐसा नहीं है वहाँ सर्जना नहीं है । सांख्यिकी में, समाजशास्त्रीय सर्वेक्षणों में "आम आदमी" हो सकता है -- जो भी वह हो- पर वहाँ सर्जना नहीं होती बोलचाल में साधारण शब्द होते हैं, उसी से बोलचाल में कविता बन न जाती...." [4]

सर्जनात्मकता के बारे में अज्ञेय असाध्यवीणा कविता में कहते हैं कि ... लोग ... इस वीणा को बजने में ... से निकलते हैं ।

राजा रुके, साँस लम्बी लेकर फिर बोले

"हारे हार गये जाने-माने कलावन्त
सब की विद्या हो गयी आकरण दर्प चूर
कोई ज्ञानी गुणी आज तक इसे न साध सका
अब यह असाध्य वीणा ही ख्यात हो गयी ।
यह मेरा अब भी है विश्वास
कृच्छ तप वज्रकीर्ति का व्यर्थ नहीं था ।
वीणा बोलेगी अवश्य, पर तभी
इसे जब सच्चा स्वरसिद्ध गोद में लेगा" 5

जिसके पास साहित्यकार का विशेष हृदय था । उसी ने वज्रकीर्ति की उस वीणा को बजने में समर्थ हो गये । वज्रकीर्ति की इस असाध्यवीणा के समान है सृजन प्रक्रिया ।

"श्रेय नहीं कुछ मेरा
मैं तो डूब गया था स्वयं शून्य में---
वीणा के माध्यम से अपने को मैं ने
सब कुछ को सौंप दिया था-
सुना आपने जो वह मेरा नहीं,
न वीणा का था
वह तो सब कुछ की तथता थी
महाशून्य
वह महा मौन
अविभाज्य, अनाप्त, अद्रवित, अप्रमेय
जो शब्दहीन
सब में गाता हूं ।" 6

6. अज्ञेय - आँगन के पार द्वार - असाध्यवीणा

अज्ञेय के अनुसार भोगनेवाला व्यक्ति और रचनेवाली मनीषा के बीच `` दूरी लानेवाली कष्टतम प्रक्रिया है सृजन प्रक्रिया ।

व्यक्तित्व

क्षण क्षण परिवर्तनशील परिस्थिति से संघर्ष करने को व्यक्ति बाध्य हो जाता है । वातावरण और व्यक्ति के बीच का यह संघर्ष व्यक्ति स्वभाव से जन्य है । जो व्यक्ति इस संघर्ष को झेलकर अपने को, अनुकूल बनाता है, वह स्वयं ही अपने व्यक्तित्व को रचता है । प्राणि, सांस्कृतिक, सामाजिक परिस्थितियों से प्रतिक्रियात्मक प्रभाव से व्यक्तित्व का निर्माण होता है । हर एक व्यक्ति अपनी परिस्थितियों से किस प्रकार का प्रभाव रखता है वह भिन्न भिन्न है । संघर्ष से टकराकर पैदा करने की क्षमता व्यक्तित्व का निर्माण करता है । इसी प्रकार एक का व्यक्तित्व दूसरे से प्रकार भिन्न होगा

सामाजिक पक्ष

सामाजिकता दो तरह की होती है, एक जो वाणी की प्रगल्भता बाहरी प्रदर्शन और दिखाओं में व्यक्त होती है । दूसरी गंभीर सच्ची और मानवीय होता है जो वाणी की प्रगल्भता में नहीं व्यक्ति की मानवीय व्यवहार और संकेतों में प्रकट होती है । अज्ञेय की सामाजिकता दूसरी कोटि की है । वे ज़्यादा नहीं, बोलते, प्रदर्शन नहीं करते, पर अपने व्यवहार में वे किसी भी दृष्टि से कम संवेदनशील मानवीय और सामाजिक नहीं है ।" [7] "हर पल में काम करता हूँ तो एकाग्र होकर काम करता हूँ, हर दस मिनट पर पान-सिगरेट के लिये ... निकालना

या टहलकर दूसरे कार्यव्यस्त लोगों को काम से हटाकर उन से गप्प लड़ाना, इसकी मुझ आवश्यकता भी नहीं महसूस होती और मैं इसे बुरी आदत भी समझता हूँ क्योंकि यह कार्य-क्षमता को क्रमशः क्षीण करता जाती है । इतने ही से कुछ लोग ऐसे नाराज़ हो जाते है कि मुझ मगरूर दुर्विनीत आदि ठहरा देते है॰ [8] मुझे जो शिक्षा दीक्षा मिली, उसमें संतुलन के सहज संयम को विशेष महत्व दिया जाता रहा । और परिस्थितियों ने एकांत इतना अधिक दिया कि एक आत्मनिर्भरता अभ्यास नहीं चरित्र का अंग बन गयी, चिंतन और अनुभूति कम नहीं हुई, पर कोई अनुभूति तत्काल दूसरों पर प्रकट हो ही जानी चाहिए या चेहरे पर झलक आनी चाहिए । सामाजिकता की ऐसी कोई परिभाषा भी सीखने को न मिली । अब जब उतना एकांत नहीं है, तब भी उस संस्कार की छाप तो है ही ।लोग मुझे अच्छे लगते है पर भीडे नहीं उतने ही जितनों से एकसाथ निजी संपर्क हो सकें, जितनों से एकसाथ जितनों में सभी मुक्त भाव से अपने को अभिव्यक्ति दे सकें और एक ही अभिव्यक्ति दूसरे की बाधा न बने । समाज में जीवि बनकर जाऊँ यह रहूँ यह मुझे ठीक लगता है, अभिनेता बनकर रहूँ यह गलत है । अपने थोड़े से बन्धुओं से मुझे यथेष्ट सामाजिक तृप्ति मिल जाती है । और बाकी बहुत सी खुराफात से बचकर मैं दत्तचित्त होकर अपना काम कर सकता हूँ॰ [9] अज्ञेय के उपर्युक्त शब्दों में उनके व्यक्तित्व की एक झाँकी मिलती है ।

अज्ञेय बडा संकोची और समाज भीरू है । समाज भीरू तो इतना है कि कभी कभी दुकान में कुछ चीजें खरीदने केलिए घुसकर भी उलटे पाँव लौट आता है, क्योंकि खरीदारी केलिए दुकानदार से बातें करनी पडेगी... जिन्हें देता है उन्हें अबाध रूप से देता है, जिनसे चाहता है, उनसे

9. आत्मनेपद पृ॰ 173.

अपने ही निर्बाध भाव से चाहता है.....। इससे गलत फहमी जरूर होती है । बहुत से लोग बहुत नाराज भी हो जाते है । कुछ को इसमें मनहूसियत की झलक मिलती है, कुछ अहम्मन्यता पाते है, कुछ आभिजात्य का दर्प, कुछ और कुछ, कुछ की समझ में यह निरा आडम्बर है और भीतर के शून्य को छिपाता है जैसे प्याज के छिलके पर छिलका मैं साक्षी हूँ कि अज्ञेय को इन सब प्रक्रियाओं से अत्यंत क्षोभ होता है।"[9]

अज्ञेय प्रकृति प्रेमी है । औ समुद्र और पर्वत उनके प्राण है । इसके प्रमाण है अज्ञेय के आगे की विवरणिका "समुद्र मुझे अच्छा लगता है ।. बहुत अच्छा लगता है ।....पहाड भी अच्छा लगता है ।....पहाड भी मुझे अच्छे लगते है, जब कभी फुरसत में वही दिवास्वप्न ही देखता हूँ तो समझता हूँ...पहाड पर ही रहूँगा । जी चाहता है और जिस केलिए उद्यम भी कर रहा हूँ, चाहे अभी तक सफल नहीं हुआ वह है पहाड की मलहटी में कहीं रह पाना जहाँ बहते पानी का स्वर सुनाई पडता रहे, चाहे छोटे झरने का ही नहीं सागर नहीं मैं आऊँगा तुम्हारे पास फिर आऊँगा फिर-फिर आऊँगा ।"

अज्ञेय का लेखक सदा है संवेदनशील है । शारीरिक कार्य में भी वे कुशल है । उन्होंने लिखा---"मैं जानता हूँ कि मैं साधारण हिन्दी या भारतीय लेखक से अधिक परिश्रम करता हूँ । अधिक समय पढने-लिखने में बिताता हूँ, अधिक समय आत्म परीक्षण में जिसमें केवल मन का प्रशिक्षण नहीं ज्ञानेन्द्रियों और हाथों का प्रशिक्षण भी शामिल है, "मैं कपडे भी सेता हूँ जूते गाठ लेता हूँ, फर्निचर जोड लेता हूँ, पंखे साइकिल, मोटर बिजली के छोटे-मोटे यंत्र, इनकी सफाई और थोडी बहुत मरम्मत कर

९ लिखी कागद कोरे - अज्ञेय - पृ. 24
10 भवंती पृ. 109-111

लेता हूँ, का. के ठप्पे खोदकर कपड़े छाप लेता हूँ, फोटो खींचता हूँ, फिल्म और प्रिन्ट डवलेप कर लेता हूँ। हाथ से रंग लेता हूँ। फूलों की और तरकारी की खेती कर लेता हूँ, फावड़ा कुल्हाड़ी, गोंती चला लेता हूँ। तैर लेता हूँ, दौड़ लेता हूँ, पहाड़ पर चढ़ लेता हूँ, और इन सब में केवल शौक रखता हूँ ऐसा नहीं है, अधिकांश में से किसी के सहारे आजीविका भी काम ले सकता हूँ।" इसउद्धरण से उनके व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम व्यक्त हो जाते है। इतने बहुमुखी व्यक्तित्व से युक्त विरले ही साहित्यकार मिलेंगे।

अज्ञेय परंपरावादी नहीं है। वे प्रयोग को रचना का सब से बड़ा धर्म मानते है। स्वस्थ परंपरा से जुड़े रहना उनकेलिए पसंद है। ... के समान उनके पिताजी के मन में जो गहरा प्रेम है वह उनके व्यक्ति की बड़ी पहचान भी है। पत्र-पत्रिकाओं का संपादन से ही करते आये हैं। उन्होंने कहानियाँ, कविता, नाटक, उपन्यास, निबंध, आलोचनायें, पुस्तक समीक्षायें आदि सब कुछ लिखे है। उनके लेखन में वैविध्य है।

सर्जनात्मक व्यक्तित्व

सर्जनात्मकता के प्रति समर्पण का भाव

काव्य रचना का-किसी भी कला-सृष्टि का-अधिकार तभी आरम्भ होता है जब व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विलयन हो जाय, यह मानना तो दूर की बात रही, आज का कवि साधारणतया इतना ही नहीं मानता कि कविता या कि कला-सृष्टि, व्यक्तित्व के विलयन का माध्यम है, कि कविता के द्वारा कवि व्यक्ति को वृहत्तर इकाई में विलीन कर देता है। वरन् आज का कवि तो कविता को, व्यक्तित्व व्यक्ति के अहं को, पुष्ट करनेवाली रचना मानता है। मैं कहूँ कि इस

आत्मनेपद - अज्ञेय पृ. 174

इस चरम कोटि का आधुनिक काव्य में नहीं हूँ अधिक से अधिक उस श्रेणा में हूँ जो कविता को अहं के विसर्जन का साधन मानते है ।"[12]

व्यक्तिगत अनुभूतियों एवं अनुभवों के आधार पर ही रचनाकार अपनी रचना के स्वरूप का निर्धारण करता है । इसलिए कृतित्व और व्यक्तित्व का बहुत गहरा सम्बन्ध है । रचना के पीछे कार्यरत मस्तिष्क के अधिकारी के जीवन उसके पीछे जरूर वर्तमान होगा । सृजनात्मक व्यक्तित्व से तात्पर्य यही होगा कि रचनाकार की कृतियों में उसके व्यक्तित्व का कितना प्रभाव है । उससे बढ़कर रचनाओं में लेखक की वैयक्तिक जीवन कहाँ तक छिपा है ।

"अज्ञेय ही एक ऐसे भोक्ता और सर्जक कलाकार है जिसके पास अपना निज का ऐसा मौलिक विशेष है और उस मौलिक विशेष की अभिव्यक्ति में उनके मनस्तत्वों के आकार, रंग, स्पर्श और गन्ध भी इतनी अधिक, इतनी खरी और इतनी वास्तविक होकर शक्ति होती है कि उनके जीवन प्रसंग से बद्ध अनेक संवेदनायें, एकदम स्पष्ट होते हुए भी पाठक वर्ग के लिये उलझी हुई होती है ।"[13]

अज्ञेय का कथन है कि मेरा पाठक वर्ग बहुत बडा कभी नहीं होगा, निरीसंख्या की मुझे आकांक्षा भी नहीं है, पर जितने भी पाठक हों, वे मूल्यों के उस समूह के साझीदार हो सकें जिनकी खोज ही मेरी यात्रा का लक्ष्य और प्रेरणा स्त्रोत रही है, तो मेरी अपनी यात्रा में उन सब के साथ जो मिल गया होगा, मैं अपने कृतित्व को सफल मानूँगा" [14]

उनका यही आग्रह है कि उनके पाठक सीमित हो पर उसे

12- आत्मपरक - अज्ञेय पृ. 31
14 भवन्ती - पृ. 7
13 अज्ञेय और उनका साहित्य -डा. पूनम चन्द तिवारी

समझनेवाले हो । वे अपनी समस्याओं को शब्द भेदी बाणों से, व्यंग्य और तर्क के साथ प्रस्तुत करते है । शायद उसमें अपने अनुभवों की तरलता हो, निजी विशिष्ट भाषा का प्रयोग हो, शब्द आग में तपे हुए हो ।

अज्ञेय स्वयं कहता है---
पहले मैं एक सन्नाटा बुनता हूँ ।
उसी केलिये स्वर तब चुनता हूँ ।

अज्ञेय के पाठक इसलिये उस सन्नाटे तक पहुँचने को पहले समर्थ रहे, उसके बिना साधारण रहने पर वह अज्ञेय-साहित्य के मर्म को छूना आकाश के तारों को छूने के समान होगा । अज्ञेय की कृतियाँ उनके सामने बच्चों के सामने जिस प्रकार आसमान के चन्द्रमा होगा । उसी प्रकार होगा । उसे छूना कठिन होगा । उसी प्रकार के व्यक्तियों को अज्ञेय बिलकुल वैयक्तिक लगेंगे समाज से कटे हुए लगेंगे, भोगवादी लगेंगे, मार्क्स-वादी लगेंगे, स्वप्न जगत् की संचारी लगेंगे, सबकुछ लगेंगे, स्वयं पाठक को सुधारना समीचीन है ।

अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध कवि टी. एस. इलियट के मत में आत्माभिव्यक्ति काव्य को मूल्यहीन बनाती है । काव्य व्यक्तिवादी हो जाता है । इसी प्रकार के वैयक्तिक काव्यों को शाश्वत मूल्य मिलता है । उसकी राय में व्यक्तित्व से पलायन (escape from Personality) ही काव्य है । और वह वैयक्तिक नहीं हो सकता है । अनुभवी भोक्ता के हृदय में वह कवि बनते समय एक प्रकार की रसायनिक प्रक्रिया चल रही है । और उसके बाद बिल्कुल नयी चीज़ ही मिलती है । "कवि मन को एक ऐसा ग्रहण यंत्र मानते है जो सभी त्रिगणित अनुभूतियों वाक्यां , तथा बिम्बों को ग्रहण करता है और उन्हें जमा करता है जो वहाँ पर

पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ अज्ञेय - पृ. 11

तब तक पड़े रहते है जब तक नवमिश्रित वस्तु को रूप प्रदान करने केलिए सभी तत्व एक साथ उपस्थित नहीं हो जाते ।"[16]

इन नव मिश्रित पदार्थों को नये रूप प्रदान करने केलिए आत्म-दान की शक्ति और सृजन की क्षमता साहित्यकार के निजी व्यक्तित्व और सृजनात्मक व्यक्तित्व को अलग करता है । अज्ञेय ने स्वयं व्यक्त किया है कि कविता भावों का उन्मोचन नहीं है बल्कि भावों से मुक्ति वह व्यक्तित्व की अभिव्यंजना नहीं बल्कि व्यक्तित्व से मोक्ष है ।

व्यक्ति सत्ता की रक्षा

अज्ञेय के उपन्यासों, कहानियों और काव्यों में अनेकों पात्र वर्तमान है । लेकिन मानवता के सागर में इन पात्रों को छोटे-छोटे द्वीप के समान सुरक्षित रखने केलिये अज्ञेय ने बहुत अधिक ध्यान दिया है, अज्ञेय के पात्र तो "टापू" नहीं है । व्यक्ति और समाज के द्वन्द्व से व्यक्तित्व का समाज के प्रति एक समर्पित भाव चाहता है । समाज के बीच वंचित होने से वह कुण्डारहित स्वतंत्र इकाई के रूप में मानव को देखना चाहता है ।

अज्ञेय का व्यक्तित्व हिन्दी साहित्य के समूचे साहित्यकारों को ढूँढने पर भी उसका अपना है । उनका साहित्य मौलिक और स्वच्छन्द है । उनके एक शब्द में नवीनता का आग्रह है । वे हिंसावादी है, क्रान्तिकारी है, प्रेमी है, विद्रोही है, अहिंसावादी है, लेखक है, राजनीतिज्ञ है, मौन अज्ञेय केलिए आकार है । उनका व्यक्तित्व एक प्रकार की पीड़ा का अनुभव करता है फिर भी उनके साथ क्रियाशील विवेक है । वे सब लोगों से एकरस स्थापित करना चाहते है । वे कहते हैं— मैं केवल एक सखा चाहता था । नियति ने मुझे वंचित रखा, नहीं

---

16 ट्रेडीशन एण्ड दि इन्डिविजुअल टेलेंट(हलवासिया स्मृति ग्रंथ) पृ. 66

नियत को दोष क्यों दूँ ? कारण कुछ और था । मेरे ही हृदय में कुछ ऐसा कठोर, ऐसा अस्पृश्य, ऐसा प्रतारण पूर्ण निषेध था..... वह कठोर था किंतु सूक्ष्म निराकार था किन्तु अभेद्य ....मेरे समीप आकर भी कोई मुझसे अभिन्न नहीं हो सकता था । उस अज्ञेय तत्व पर किसी का कुछ प्रभाव नहीं पड़ता था ।"[1] अज्ञेय के व्यक्तित्व में निहित इस "अज्ञेय तत्व" की खोज है उनके साहित्य को समझने की जिज्ञासा ।

अज्ञेय के काव्य उपन्यास कहानी निबन्ध, यात्रावर्णन आदि सभी प्रकार की साहित्यक विधाओं में उसके व्यक्तित्व की छाप है । वे अपनी कृतियों में अपने मन को व्यक्ति और परिवार के ऊपर उठाकर विश्व मानवता के प्रति समर्पित कर देते हैं ।

कविता में अज्ञेय की सर्जनात्मकता

तत्कालीन सांस्कृतिक संक्रान्ति के नेता रहकर उन्होंने व्यापक और वैविध्यपूर्ण जीवनानुभव से सर्जना के विविध आयामों को नयी दिशा दी है । उपन्यासकार, कथाकार, निबन्धकार, पत्रकार आदि अज्ञेय के साहित्यक आयामों के ऊपर, उन्हीं व्यक्तित्वों के ऊपर उनके काव्य व्यक्तित्व की छाप है । अज्ञेय की यायावरी वृत्ति के कारण प्रकृति के सभी रम्य दृश्य उसे उद्वेलित करते हैं । पहाड़ उसे बुलाते हैं, जंगल और निर्झर उन्हें इंगित करते हैं, समय मिलने पर वे आसमान को निरखते हैं, गेहूँ की खेत, अनार, केवल केरल की "पेरियार" जैसी नदियाँ सबकुछ उनकी सर्जनात्मकता को भाषा देती है । इसके कारण ही [illegible] के विकास एक अन्तर्मुखी कलाकार की तरह होता है ।

[1] चिन्ता - अज्ञेय - पृ. 63

"जो व्यक्ति का अनुभूत है, उसे समष्टि तक कैसे उसकी संपूर्णता में पहुँचाया जाय, यही पहली समस्या है, जो प्रयोगशीलता को ललकारती है।"[18] प्रयोगवादी कविता के उन्नायक अज्ञेय की विशेषता है प्रयोगशीलता। पुरातन प्रतीकों को कालानुकूल बनाने में, उसी आधुनिकता के परिवेश देने में वे समर्थ निकलते हैं। यह साहित्य का नया प्रयोग उनका अपना है, उनकी व्यक्तिगत विशेषता है जो उनकी कविताओं में खूब प्रत्यक्ष है। नीचे की पंक्तियाँ देखिए:-

अभिनव द्रोण किन्तु कहता है
... धीर धरो चाप, साधो तीर,
धरती को विद्ध करो-अमृत-सा कूप जल यहीं,
फूट निकले
और फिर झुके से एकलव्य के नये कुल-
में भोग डाल देता है।"[19]

कल... र वार... में अनुभवों को वाणी देती है। अज्ञेय के अनुसार उस एकांत निमिष में जो सर्जना के निमिष में व्यक्ति का अनुभव ... का अनुभव हो जाता है। कवि अपने अनुभवों को आत्मनियन्त्रित करके, व्यक्तिगत अनुभवों की भूमि से टकराकर रागात्मकता प्रदान करती है। अज्ञेय की पूरी रचनाओं में यह रचनात्मक शक्ति के कारण वैयक्तिक अनुभवों का विसर्जन समष्टिगत रूप में करने वे समर्थ निकलते हैं- यही उनका सर्जनात्मक व्यक्तित्व है--

"सुन्दरता की रज ले ले, मानस कोषों में भरते हैं
संचित ... कुछ हो जाती है, फूले नहीं समाते हैं-
उ...के कण कण को बिखरा कविता में कवि ...ते हैं।"[20]

18 अज्ञेय आत्मनेपद - पृ. 37
19 इन्द्रधनु रौंदे हुए -33-34
20 - पृ. 998-99...

ऊपर की पंक्तियों से यह और भी स्पष्ट हो जाता है। अज्ञेय के व्यक्तित्व का पुरुष पक्ष "विश्वप्रिया" की कविताओं में व्यक्त है, नारी के अभिमान को चुनौती देते हुए उसे पुरुष अपने अधीन में रखने का पक्ष देखिये--

तोड दूँगा मैं तुम्हारा आज यह अभिमान
तुम हँसो कह दो कि ... उत्संग वर्जित है।
x x x x x x x x x x x x
तुम पुरुष की वासना को जानती हो क्या ?
... हँसो नारी मुझे अपना वशीकृत जान....
...ड दूँगा मैं तुम्हारा आज यह अभिमान।" [21]

"आज थका ... हिय हारिल मेरा " नामक कविता में अज्ञेय प्रेमानुभूति का वास्तविक चित्र प्रस्तुत ... है जो वैयक्तिक पहलू को भी छूता है। इस कविता के अधोअंकित पंक्तियों में शून्य में गानेवाली प्रियतमा से वह कहता है--

"हारिल को यह सहस नहीं है
वह पाखंड ...ा मदमाता है
इस जड धरती को ठुकराकर
उषा ...नय वह उड जाता है।" [22]

अज्ञेय की या...री जीवन में उस कितना अकेलेपन का अनुभव मिला ताकि वे प्रियतमा से कहते हैं कि उसके बिना उसे कभी भी रत नहीं है।

"...स सूनी दुनिया में प्रियतम

---

22 अज्ञेय - विद्यानिवास मिश्र - छठा संस्करण 1976 पृ. 45
21 विश्वप्रिया पृ- 46

मुझको और कहाँ रस होगा ?
शुभे तुम्हारी स्मृति के सुख से
प्लावित मेरा मानस होगा ।"[23]

अज्ञेय की निजी मानसिक अवस्था की ही छाया इन पंक्तियों में है । उनकी कविताओं में कहीं कहीं उनका व्यक्तित्व छिपा है ।

बावरा अहेरी नामक अज्ञेय की कविता में वे सूर्य को अहेरी के रूप में कल्पित करते है जो अपने किरणों की लाल-लाल कानियों को बिछाकर सबको अपने जाल में समेट लेने को विवश है । यहाँ कवि समाज से संपृक्त नहीं होता बल्कि अपने जीवन को दीपक के समान पंक्ति में स्थान प्राप्त करने केलिए प्रयत्नशील है ।

भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है आलोक की
लाल-लाल कनियाँ
बाँध लेता है सभी को साथ
छोटी-छोटी चिड़ियाँ
माँझोले परेवे
बड़े बड़े पंछी
डैनोंवाले, डीलवाले
डोल के बड़ौल ।"[24]

"बावरा अहेरी" काव्य समाहार की एक दूसरी कविता है "आज तुम शब्द न दो" यहाँ अपनी अनुभूतियाँ को व्यक्त करने केलिए शब्द की खोज में कवि भटकते है, लेकिन कठिनाईयों से वे विवश निकलते है लेकिन अपने अकथ्य यथार्थ को कथ्य बनाने केलिए प्रयत्नशील है।

---

23 अज्ञेय - विद्यानिवास मिश्र - पृ. 47
24 " " - पृ. 51

यही एक सर्जक कवि की सर्जनात्मकता की विशेषता है । कवि अभि-व्यंजना केलिये नवीन रागात्मक सम्बन्ध ढूँढता है । कवि अज्ञेय की सर्जनात्मक व्यक्तित्व उनकी पंक्तियों में झलकता है ।

"आज तुम शब्द न दो, न दो,
कल भी मैं कहूँगा,
तुम पर्वत हो अभ्र-भेदी शिला खण्डों के
गरिष्ठ पुंज
चापे इस निर्झर को रहो रहो
तुम्हारे रन्ध्र-रन्ध्र से
तुम्हीं को रस देता हुआ
फूट कर मैं बहूँगा ।" [25]

"आँगन के पारद्वार" [illegible] की असाध्य वीणा कविता में अज्ञेय ने सृजन के क्षण की अकथनीय अनुभूति को शब्द दिया है । इस कविता में अज्ञेय सब कुछ सरस्वती को अर्पित करता है।उनकी यह रचनात्मक आस्था शून्य की अनुभूति को रंग देती है ।

"वीणा उसपर रख पलक मूँद कर, प्राण खींच
करके प्रणाम,
अस्पर्श छुअन से छुए तार,
धीरे बोला "राजन" पर मैं तो
कलावन्त हूँ नहीं शिष्य साधक हूँ-
जीवन के अनकहे सत्य का साक्षी ।"

यहाँ सृजन प्रक्रिया के माध्यम से जीवन के अनकहे सत्य का [illegible] हो जाता है ।

---

25 अज्ञेय-विद्यानिवास मिश्र - पृ. 64

अज्ञेय ने अपने "मैं" को बहुत पहले की कृतियों से ही छोड दिया है अनुभूतियाँ सर्जनात्मक प्रतिभा से चमत्कृत करने की शक्ति उनकी अपनी ही विशेषता है । अज्ञेय ने "मैं ने देखा एक बूँद" कविता में यह सुन्दर व्यक्त किया है---

"मैं ने देखा
एक बूँद सहसा
उछली सागर के झाग से
रँगी गयी क्षण-भर
ढलने सूरज की आग से ।
मुझको दीख गया
हर आलोक-छुआ अपनापन
है उन्मोचन
नश्वरता के दाग से ।"[26]

जीवनरूपी सागर से सूरज की किरणें रूपी कल्पना से रंग पाकर अनुभूति मूर्त बनकर, अनश्वर हो जाता है । अद्वितीय अनुभूति के क्षण को वाणी देकर कवि नश्वरता की लांछन को धो डालता है । अज्ञेय ने स्वयं कहा "मैं उस पक्षी की तरह हूँ जो यह जानने केलिये कि उसका नीड कितना सुरक्षित है, बार बार उससे उड जाता है और दूर से उसका ध्यान किया करता है ।"[27]

अज्ञेय के साहित्य और व्यक्तित्व को एक साथ चमकीला बनानेवाली कविता है दुःख सबको माजता है ।

- -

26 अज्ञेय - विद्यानिवास मिश्र - पृ. 46
27 -चिन्ता - अज्ञेय - पृ. 47

"दुख सबको भोजता है
चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न
जाने किन्तु
किन्तु भोजता है
उन्हें यह सीख देता कि सबको मुक्त रखे।" 28

अज्ञेय के व्यक्तित्व में एक विशुद्ध व्यक्तित्व मिल जाता है। वे डेनमार्क सैर करते थे। उसी सैर के बीच सागर तट का मोती, आमोद-भवन के बाहर सागर से उछली हुई डाल्फिन मछली की जो प्रतिमा थी, वह उसे आकर्षित की सागर में सैर करते समय उछलती मछलियों को देखा। ये सब उनकी कविताओं दिखाई पडते हैं।

विकारे व्यक्तियों के व्यक्तित्व के प्रति उनका व्यंग्य "साँप" नामक उनकी कविता में स्पष्ट है, सभ्यता के नाम पर गर्व करनेवाले नगर के विकृत व्यक्तियों से वे घृणा करते हैं नगरी सभ्यता पर उनका व्यंग्य इतना तीक्ष्ण हो गया है कि उनका अचंचल व्यक्तित्व वहाँ और भी शक्तिशाली हो गया है --

"क्या यह फूटा हुआ अणु हमारा व्यक्तित्व है
हमारी आत्मा
हमारी इयत्ता है ? "28(ए)

सोन मछली जीजीविषा जैसी कविताओं में अज्ञेय की जीजीविषा खूब दिखाई पडती है। "पश्चिम के समूह-जन" कविता में अज्ञेय की सर्जनात्मक व्यक्तित्व पूर्णता से सामने आता है --

"एक मृषा जिसमें सब डूबे हुए हैं--

- -

28 चिन्ता - अज्ञेय - पृ. 55
28(ए) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये {साँप} - अज्ञेय - पृ. 34.

क्योंकि एक सत्य जिसमें सब उभे हुए हैं ।
एक तृषा जो मिट नहीं सकती इसलिए मरने नहीं देती ।
एक गति जो विवश चलाती है, इसलिए कुछ करने नहीं
देती ।
स्वातन्त्र्य के नाम पर मारते हैं, मरते हैं ।
क्यों कि स्वातन्त्र्य से डरते हैं ।" [29]

अज्ञेय की कविता में उनके सर्जनात्मक व्यक्तित्व को अनेकों स्थानों पर हम देख चुके है । फिर उनके उपन्यासों को हम देखें ।

शेखर एक जीवनी में सर्जक अज्ञेय

शेखर एक जीवनी का प्रधान पात्र शेखर ही है । उसकी रूप रेखा इस प्रकार लिखा है " बिखरे बाल, व्यस्त अंगुली मुद्रा, झुकी आँखें, बेचैन ललकारते कदम" [30] शेखर का यह बाह्यरूप जो अज्ञेय ने खींचा है वह जरूर उनके रूप से मिलता-जुलता है । इस उपन्यास के आरम्भ से लेकर अंत तक किसी न किसी प्रकार कहीं न कहीं व्यक्ति अज्ञेय छिपा है । अज्ञेय ने ही स्वयं आत्मनेपद में यह स्वीकार किया है । अपने व्यक्तित्व निर्माण में जो व्यवधार जो परिष्कार वे चाहते थे सब शेखर के निर्माण में जोड दिया । अज्ञेय के किशोर जीवन की झांकी उनके उपन्यासों में प्रकट है । शेखर के पिता का स्मृतिचित्र है, वास्तव में अज्ञेय के पिता हीरानन्द शास्त्री का ही है । बाल्यकाल के समय इधर उधर घूमने की वृत्ति, खुदाई शिविर में उसका जन्म लोगों से अधिक न बोलनेवाले एक बालक शेखर अज्ञेय के जीवन का प्रतिफलन है ।

----------- -----------

स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेनेवाले एक नवयुवक शेखर को हम उपन्यास में देखते है, शेखर का यह विद्रोही रूप अज्ञेय का निजी रूप है । जेल की कोठरी में बन्द शेखर के विश्रृंखल और अस्त-व्यस्त स्मृतिचित्रों को अपने मानस पटल पर अंकित करके स्वयं लेखक अपने जेल जीवन की छाया स्थापित करने का श्रम करता है । शासन के प्रति तीव्र विद्रोह उपन्यासकार का अपना है । शशी से जो सम्बन्ध है वह अव्यक्त रूप से अज्ञेय के निजी जीवन से है । शेखर अपने जीवन और चिन्तन में विदेशीपन का प्रभाव देखकर उससे विद्रोह करता है । अज्ञेय का भी इसी प्रकार का व्यवहार है । पश्चिमी राज्यों में उन्होंने बहुत अधिक सैर किया है उसका प्रभाव उनपर जरूर होगा । लेकिन वह अनजाने ही हो जाता है । "शेखर एक जीवनी" में शेखर का चरम लक्ष्य विद्रोह है । वह जीवन में हारता नहीं वह आशा के साथ भविष्य की तरफ आगे बढ़ता है । शेखर की यह व्यक्तिगत विशेषतामें अज्ञेय के जीवन का पुष्ट प्रभाव है । शेखर के विगत जीवन का प्रत्यावलोकन करते हुए अज्ञेय पात्रों की स्थिति इन्हीं शब्दों में व्यक्त करते हैं "मेरी भटकन में भी, एक प्रेरणा थी, जिसमें अंतिम विजय का अंकुर था, मेरे अनुभव वैचित्र्य में भी एक विशेष कर रही था । और जीवन यात्रा के पथ में जो पहाड़ तराइयाँ नदी, नाले झाड़ झँखाड़ आँधी पानी आये उन सब मेरे सम्बन्ध में ऐक्य था । किसी विशेष काल में विशेष परिस्थिति में, विशेष स्थान पर, विशेष साधनों और उपायों से मेरे जीवन का विशेष रूप का समापन, जिससे उसे अपनी सिद्धि, अपनी सफलता और अपनी संपूर्णता प्राप्त हो जाय ।" शशी और शेखर का अज्ञात अनुराग का चित्रण उसकी सर्जक प्रतिभा का प्रमाण है । शे शेखर एक जीवनी में शेखर की माँ उसे अविश्वासी कहती है । तब

दुःखित शेखर माँ से सम्बन्ध नहीं जोड़ता है । अज्ञेय ही व्यक्तिगत रूप से माँ के साथ इसी प्रकार के अरुचिकर सम्बन्ध जोड़ता था । अपनी बहिन विवाहिता होकर घर से ससुराल जाने पर शेखर जंगल में अकेला भटकता है । वह अज्ञेय की छायावादी वृत्ति की प्रतिछाया है । छायावादी भावों के शब्दचित्र खींचकर उपन्यासों में विजन की सृष्टि करते हैं । अंग्रेजी की कविता का उद्धरण देकर उन्होंने शांति के जीवन की निराशा के शब्द दी है । अंग्रेज़ साहित्य से अज्ञेय के प्रभाव यहाँ स्पष्ट हो जाता है । पात्रों के अन्तर्मनों की प्रवृत्तियाँ और उलझनों के दार्शनिक अवतरणों से अज्ञेय के दार्शनिक विचार ही प्रकट करते है । शेखर का कथन इसका साक्ष्य है । "दूर से देखा जाय तो मानव का सारा विकास ही कम से कम अभी तक यही है । मानवता कुछ चाहती है । लेकिन जानती नहीं कि क्या और उसे जानने की खोज में उसके रास्तों में एक साथ ही भटक रही है :- मानों सारी मानवता अपने जीवन की गति में किसी दीर्घ पथःसंधि पर खड़ी है और अपने से उलझ रही है । उसका यौवन, उसके कृतित्व के दिन अभी बाकी है ।"

इसी प्रकार शेखर एक जीवनी से अज्ञेय की प्रतिष्ठा ही नहीं, आत्मकथात्मक शैली में उपन्यास लिखने की एक पद्धति का विकास हुआ । छोटी-छोटी घटनाओं के मध्य से शेखर के व्यक्तित्व में विद्रोह निर्भयता आत्मविश्वास आदि का समावेश करता है । बचपन में माता का ध्वंसात्मक प्रभाव और पिता का सान्त्वनात्मक प्रभाव के बारे में शेखर इसी प्रकार कहता है--"पिता आवेश में आततायी थे, माँ आवेश की कमी के कारण निर्दय पिता का क्रोध जब बरस जाता था, तब शेखर जानता था कि हम फिर सखा है, माँ जब कुछ नहीं कहती थी, तब उसे लगता था कि वह धीमी-आँच पर पकाया जा रहा है।"[32]

शेखर एक जीवनी भाग एक

- -

उपन्यासकार अज्ञेय के अचंचल व्यक्तित्व का प्रतिरूप है शेखर के हॉस्टल जीवन की विशेषतायें। शेखर एक जीवनी के पहले भाग में शेखर कभी प्रकृति के सौन्दर्य और कभी उत्पीडन के अनुभवों से आकर्षित दिखाई पडता है। अज्ञेय के पात्र स्वातन्त्र्य की कल्पना में सौन्दर्य और कलानुभूति के नये प्रतिमान स्थापित करते हैं। कांग्रेस के वालण्टियर के रूप में शेखर की गिरफ्तारी जेल में मदनसिंह मोहसिन हत्यारा राम आदि का परिचय शेखर के विचारों को गहराई में आंदोलित करता है। शशी और शेखर के साथ विवाह होने के बाद रामेश्वर शशी को सन्देह की दृष्टि से देखता है। वह सन्देह अन्त में परित्याग तक पहुँचता है। फिर शशी और शेखर के बीच एक नये सम्बन्ध को जन्म देती है। इसी प्रकार की प्रेम और विवाह सम्बन्धी बातें अज्ञेय की यौन सम्बन्धी बातों से एक रूपता स्थापित करती है। "शेखर एक जीवनी" नायक शेखर की जीवनी है जो उपन्यासकार की जीवनी की छाया है।

नदी के द्वीप का सर्जक

सन् 1952 में अज्ञेय का दूसरा उपन्यास "नदी के द्वीप" का प्रकाशन हुआ। नदी के द्वीप को एक प्रतीकात्मक उपन्यास कहा है। समाजरूपी नदी के मध्य व्यक्तिरूपी द्वीप जो समाज से मिलकर भी समाज से संपृक्त रहता है। व्यक्ति सत्ता को सुरक्षित रखता है। ऐसे भी हटकर नदी के द्वीप के लिये और एक व्याख्या देना उचित है। मानव जीवन दुःख से पूर्ण है। इस दुःखपूर्ण जीवन प्रवाह में सुखरूपी द्वीप का क्षणिक होने पर भी अनश्वर निमिष के बारे में उपन्यासकार कहता है "दुःख सबको माँजता है" विचारधारा अज्ञेय की रचनाओं में चमकदार है। अज्ञेय की रचनायात्रा में उनके व्यक्ति सत्य व्यापक हो जाता है।

अज्ञेय के व्यक्तित्व में एक साधारण सा मानव का चित्र मिलता हैं। नदी के द्वीप के भुवन और रेखा की प्रेमव्यवहार स्वच्छन्द वातावरण में ही चलता है। उन पात्रों के चयन में उनके मनोभावों, कुण्ठाओं और विकृतियों को चित्रण स्वभाविक लगता है। वासना तृप्ति की पूर्ति है। वे जीवन का चरमलक्ष्य कहते है। भुवन से रेखा का गर्भधारण हो जाता है और रेखा उस दिन "फुलफिल्ड" समझती है। भुवन की अपनी जो विशेषतायें हम उपन्यास में देखते है वे सब अज्ञेय के जीवन में भी देख सकते है। अनुभूति और स्मृति के सहारे ही पात्रों की सृजन प्रक्रिया है।

"अपने अपने अजनबी" में आकर शेखर के विचार पूर्णता प्राप्त करते हैं। मृत्यु के बाद के जीवन के बारे में जानने की अभिलाषा जो शेखर में तीक्ष्ण है। वह उपन्यासकार अज्ञेय की निजी अभिलाषा है। उसकी पूर्ति के रूप में "अपने अपने अजनबी" के सेल्मा और योके हमारे सामने आती है। पात्र स्वयं बर्फ से ढके हुए है फिर भी योके प्रतीक्षारत है। वह उसकी रक्षा केलिये आनेवाले उसके प्रेमी की प्रतीक्षा में है। इस रचना में अस्तित्व बोध का प्रभाव पूर्णरूपेण वर्तमान है। आस्था के कारण वे ईश्वर का साक्षात्कार सर्जक के रूप में करते हैं सेल्मा की मृत्यु होने पर वह सोचती है--"ईश्वर भी शायद स्वेच्छाचारी नहीं है-- उसे भी सृष्टि करनी ही है क्योंकि उन्माद से बचने केलिये सृजन आदि कार्य है।" बाह्य प्रभावों को रचनात्मक भाव से आत्मसात करने में अज्ञेय पूर्ण रूप से सफल है।

अज्ञेय की कहानियों में प्रतिफलित व्यक्तित्व:-

अज्ञेय की शरणार्थी, लेटर बक्स, कोठरी की बात, हीलीबोन की बतखें आदि कहानियों में उनके व्यक्तित्व खूब झलकता है। अज्ञेय

अपने अपने अजनबी - पृ. 99.

की 'बदला' कहानी में विभाजन के अवसर पर नारी के ऊपर जो अत्याचार चल रहा था उसका विरोध प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त है। एक सिक्ख शरणार्थी उसे स्वाभाविकता के साथ व्यक्त करता है। उसके शब्दों के पीछे से झांकता है अज्ञेय का व्यक्तित्व। उनकी मानवतावादी विचारधारा यहाँ खूब निखरती है। "कोठरी की बात" का सुशील का विद्रोही व्यक्तित्व अज्ञेय से मिलता है। "सीलीगोन की पत्ती" में कैप्टन दयाल के व्यक्तित्व में मानवीय संवेदना का रूप है। "छूट रहे हत्यारे" यह मानव के तरलित हृदय की पुकार है। वास्तव में अज्ञेय के सर्जनात्मक व्यक्तित्व को पहचानने के लिये और कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। अज्ञेय का जीवनीमूलक उपन्यास "शेखर एक जीवनी" पढ़ना ही पर्याप्त है।

निष्कर्ष

अज्ञेय ने ही स्वीकार किया है। मेरी अनुभूति और मेरी वेदना शेखर को अभिसंचित कर रही है। शेखर में अकेलापन कुछ अधिक है। शिशु मानस के चित्रण की सच्चाई के लिये मैं ने "शेखर" के आरम्भ के अध्यायों में घटनास्थल अपने ही जीवन से चुने हैं।" अज्ञेय के जीवन में" जो अकेलापन महसूस कर रहे थे वह उनकी कृतियों में ठीक उसी तरह वर्तमान है। अकेले बैठे बैठे सोचना उसे बहुत अधिक पसंद था। उस अकेलेपन के बारे में, उस सन्नाटे के बारे में उन्होंने गूँगे का गुड़" कहा है। अज्ञेय के साहित्य पढ़ने पर उनके साहित्य के भीतर सब कहीं अज्ञेय का व्यक्तित्व गूँगे के गुड़ के समान छिपा है।"

शेखर एक जीवनी भूमिका

अध्याय - दो

व्यक्ति और समाज सम्बन्धी अज्ञेय की धारणायें

व्यक्ति की परिभाषा

(व्याख्या)

मानव केवल व्यष्टि की निर्विकल्प प्राण-रक्षा न होकर एक सामाजिक अर्थयुक्त स्वेच्छित कर्म है, स्वाधीन कर्म है । मैं जीना चाहता हूँ इस का अर्थ मानव केलिए यही है कि " मैं स्वाधीन रहना चाहता हूँ, समाज से स्वाधीन नहीं, समाज में स्वाधीन हूँ क्यों कि समाज भी स्वाधीनता के शोध और प्रयत्न केलिये रचा गया कारगर साधन है ।"[1]

यहाँ महान् साहित्यकार अज्ञेय की राय व्यक्ति स्वातंत्र्य है समाज में स्वतंत्र हैं । व्यक्तित्व की विशिष्टता की रक्षा करना है । लेकिन समाज से अलग नहीं है ।

"मैं व्यक्ति से शुरू होना चाहता हूँ, मैं मानव समाज का आधार मनुष्य को मानता हूँ ।"[2] अज्ञेय स्वीकार करता है कि व्यक्ति से शुरू होता है वस्तुतः जिसे हम समाज कहते हैं । वह व्यक्तियों का समूह है । समाज में व्यक्ति की महत्ता को बल देता है क्यों कि समाज सोच नहीं सकता, व्यक्ति सोच सकता है । इसलिए सामाजिक

---

1. अज्ञेय
2. अज्ञेय स्रोत और सेतु पृ. 112.

जीवन के स्वर, भाव, प्रवाह और कार्य व्यापार व्यक्तियों से ही संपन्न होते हैं । इसी कारण समाज पर विचार करनेवाली विचारकों का अपना चिंतन व्यक्तियों से शुरू करना पड़ता है ।

सामाजिक समस्याओं के स्थान पर आज के मानव की गुंथित कुंठा, संत्रास, अनास्था, विघटन, घुटन और टूटन के बुरी तरह का प्रभाव बाहरी न होकर व्यक्ति के भीतर हो गया है । आधुनिक मानव की समस्या को बाहर ढूँढना बुद्धिहीन हो जाएगा । व्यक्ति के भीतर से भीतर पैठकर वहाँ से उनकी मानसिक व्यथाओं को खुशी को निकालना ही कलाकार अज्ञेय की विशेषता है ।

आज का अहंवादी पुरुष बुद्धिजीवी भी है, इसलिए अपनी मनोवृत्ति की यथार्थता से बहुत कुछ परिचित भी रहता है और इसी कारण उसके भीतर विस्फोटक संघर्ष मचते रहते हैं । सामाजिक पर्दों के भीतर छिपे हुए इसी सत्य का उद्घाटन मनोवैज्ञानिक उपाय से करने का प्रयास मैं ने किया है ।"[3] मानव अपने बाह्य यथार्थ से बढ़कर अपने अन्तर मन की व्यथाओं से और कुंठाओं से पीड़ित है । मानव के अंतर मन की ज्वालामुखी हमेशा धुआँ से भरा है । वह किसी न किसी निमिष में विस्फोटित हो जाएगा ।

आज की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्थाओं में मध्यवर्ग की स्थिति अधिक दयनीय है मध्यवर्गी शिक्षक लोगों की जीविका भी एक समस्या है । इसे हर कदम जीवन में समझौता करके जाने का श्रम है आज की सड़ी गली परम्पराओं और रूढियों की आड़ में अपनी तथा कथित इज्ज़त को ढाँपने की उसे आदत सी हो गयी है । ज़िन्दगी की प्रतिकूल परिस्थितियों से टकराना अब उसके बस की

3. साहित्य सन्देश, अक्टूबर पृ. 1944

बात नहीं रही है । लेकिन चाहकर भी वह उससे भाग नहीं सकता ।

आज के युग में परिवार की परिकल्पना बदल गयी है । परिवार के चार दीवारी के भीतर बन्धित हो गया । वह समाज से कटा हुआ हो गया । अब परिवार के भीतर भी मुख्य अंग का भाव बदल गया । वह परिवार रूपी धारा के बीच केा दीप बन गया है । अज्ञेय परिवार के मुख्य को इसी प्रकार व्याख्यायित करते हैं । परिवार के दूसरे लोगों से निर्मित वह मुख्य धारा इसे सींचने बहलाने के बदले, तोड़ने-काटने छोड़ने बहाना का काम ज्यादा कर रहा है ।

व्यक्ति की विचारधारा सिमटकर मैं में बन्द हो रही है । व्यवस्था विज्ञान की संहारक शक्ति और जीवन के बढ़ते हुए अभावों ने व्यक्तिवाद को बढ़ावा दिया है । व्यक्ति अपने स्वार्थ की पूर्ति केलिए अधिकार प्राप्त करने केलिए आर्थिक स्थिति को और भी बढ़ाने केलिए उससे भी आगे बढ़कर अपने की पूर्ति केलिए धार्मिक आचारों को सामाजिक मान्यताओं को, परम्परा को ठुकराने का सुन्दर नाम लेकर खण्डित करने लगा । ज़रा आगे बढ़कर अपने हृदय को झूठा विश्वास दिलवाकर प्रवंचित करने लगे हैं । वास्तव में मानव मन को भीतर [illegible] रही स्वार्थों से जनित कुण्ठा का जन्मदाता व्यक्तिवादी दृष्टिकोण ही है ।

आज की युवापीढ़ी के सामने बेकारी एक जीवन्त समस्या है । नौकरी की खोज में वह भटकता है, फिरता है । फिर रात आते वह अपने घर वापस आता है मन की भीतर छिपित दुःख के साथ, निराशा के साथ वह अपने घर में अकेला हो जाता है ।

नौ ़ी न मिलने के कारण मन में व्यक्तिगत कुंठा है । परिवार के दूसरे लोगों के मन में अवज्ञा है, दुख है, संताप है । नौकरी की खोज से निराशाग्रस्त वह युवक फिर सुख के क्षण की खोज में है । क्षणिक सुख केलिए वह मारक दवा खाता है । "मण्डल कमीशन" जैसे सरकारी प्रवंचना के आगे आत्माहुती करता है । उसके आगे जीना ही अर्थहीन हो गया _ ।

आज की नारी एक ओर पूर्ण व्यक्तित्व की खोज में निकलती है । इस खोज में उसे नकारने के ।वचार पुरुषों में उभरता है तभी तो नारी के व्यक्तित्व की सुरक्षा भी ए. नाक हो जाता है । इन बाधाओं का सामना कर वह समर्पित हो जाती है । इस समर्पण मजबूरी है श्रद्धा से नहीं हैं । आज की स्थिति में नारी के आगे और अपने माता-पिता के आगे दौलत एक गंदी लेकिन भयानक समस्या है । दौलत की कमी से अनेक अच्छी-अच्छी युवतियाँ अविवाहित रहती हैं । विवाह आज नीलाम हो गया है । इस दौलत के भय के कारण बच्ची के जन्म से ही माता-पिता असंतृप्त हो जाते हैं । वह माँ बाप केलिए सारी बोझ बन जाती है । नौकरी करनेवाली युवती को अपनानेवाला युवक "पैसा बनानेवाली मशीन" भी समझता है और दूसरी ओर उसमें सर्वसमर्पित पत्नि भी देखना चाहता है । यहाँ पुरुष के स्वार्थ ही प्रकट है सब कहीं व्यक्ति का बाह्य ़ ़ ही नहीं व्यक्ति का अंतर्गत ही उभरता है ।

आज की ़ारिका सम्बन्धी विचारधारा को समकालीन परिवेश का प्रभाव कहना ही ठीक है । कवि, उपन्यासकार, कहानीकार और निबन्धकार आज के विचार आगे के शब्दों में ही व्यक्त है ।

"मैं अपने से ही आविष्ठ होता हूँ, यह बात बेतुकी-सी लगती है, लेकिन एक सम्पूर्ण आत्मा होती है और एक आंशिक "मैं" होता है--समझ लीजिए की इन उन्मेष के क्षणों में जो संपूर्ण है वही अपने अंश पर उतर आता है । उसे आविष्ठ कर लेता है । दूसरे शब्दों में ये उन्मेष के क्षण उसकी समग्र सत्ता के क्षण होते हैं । अंश का आवेश - इसी कारण उन्मेष की स्थिति आविष्ट स्थिति-सी जान पड़ती है । थोड़ी देर केलिए दैनंदिन प्रयोजनों में फँसे हुए हमारे व्यवहारी मन को हमारा समग्र आत्म छा लेता है - वह समग्र जिसमें हमारे सारे अनुभव और संस्कार समवर्ती होकर हमारी पहुँच में आ जाते हैं । यह समग्र आत्मा हमारे सारे प्रबन्धों और संयोजनों हमारी साहसों और हमारी चिन्ताओं, हमारी सारी जिज्ञासाओं और अन्तर्दृष्टियों हमारे साहसिक अभियानों और हमारी दृढप्रतिज्ञा बद्ध मूलताओं हमारे छन्दताल के बोध और संवाद-विसंवाद के अनुभव, काल और कालातीत, सीमा और सीमातीत आकार सभी की एक समवर्ती प्रत्यभिज्ञा होती है और वह सब कुछ को एक ज्योतिर्मय अर्थवत्ता दे जाती है आलोक से भर जानेवाले से क्षण भी उतने ही दुर्लभ होते हैं । जितना वह आलोक स्वयं दुर्लभ होता है लेकिन उन्मेष है तो सही है ।" [4]

यहाँ अज्ञेय व्यक्ति के मन के उन्मेष ही प्रधान कहते हैं । सबसे बढकर है मन का प्रभाव । मानव का मन ही सभी कार्यव्यापारों का नियन्ता है । इस संसार के सुख और दुख व्यक्ति मन के सुख और दुःख पर आधारित है । यहाँ व्यक्तिगत अनुभूति ही प्रधान है । यहाँ अज्ञेय का अभिप्राय समीचीन हो जाता है कि "निजी अनुभूति के निजीपन को अक्षुण्ण रखा जाये" [5] अपनी अपनी अनुभूतियों को निजीपन के साथ अनुभव करना मानसिक उल्लास केलिए उचित है वही "प्राइवेट पैसेज़

---

4. जोग लिखी - अज्ञेय - पृ. 66

इन पब्लिक प्लेसेस।" 6

परिस्थिति के अनुसार व्यक्ति में भी परिवर्तन आता है। आज के व्यक्ति की मानसिक अवस्था कल का होना अनिवार्य नहीं है। नैतिकमूल्यों के अनुसार, आर्थिक व्यवस्था के अनुसार व्यक्ति बदल जाता। उसके व्यवहार में परिवर्तन आता है। समाज में भी वह परिवर्तन आता है।

मार्क्स और फ्रायड ने समाज और व्यक्ति को देखने की एक नयी दृष्टि दी। व्यक्ति के बाहर से पहचानना उसे स्वीकार्य न था। व्यक्ति को पहचने केलिये भी उसके चेतन मन की अपेक्षा अवचेतन की प्रधानता स्थापित हो गई। फ्रायड ने ही कहा है कि मनुष्य वैसा नहीं है जैसा कि वह स्पष्ट ही दीख रहा है। मनुष्य वैसा है जैसा कि वह अपने को स्पष्टापूर्वक नहीं दिखाना चाहता। इसलिए बाह्य से नहीं, चेतन के द्वारा नहीं अवचेतन के द्वारा मनुष्य को पहचानना वास्तविक है। फ्रायड की मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पद्धति व्यक्ति के प्रसंग में बहुत अधिक समीचीन लगती है। व्यक्ति अपने अपने मन को खोलकर दूसरों से अपनी बातें करने को पसंद नहीं करना है। अपने दुःखों को अपने मानसिक व्यथाओं को खुशी और संतोष को भी भीतर ही छिपाना चाहता है। इसलिए ही वह हमेशा अकेला लगता है। आज की परिस्थिति में पास-पास बैठे व्यक्ति-व्यक्ति के बीच मीलों की दूरी है। आधुनिक समाज में दिखावे केलिए लोग दूसरों की सहायता करते हैं, दूसरों के दुःख में दुःखित होकर नहीं है।

कई दृष्टियों से विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट है कि व्यक्ति और समाज के परस्पर निर्भरता है किन्तु उनकेलिए व्यक्ति सत्ता ही

पहले है और समाज की बाद में । उनके अनुसार " मानव समाज का आधार व्यक्ति-इकाई है ।"[7] व्यक्तिरूपी वह छोटी सी इकाई, या बिन्दु से ही संसार का उदय हुआ । जवहरलाल नेहरू के अनुसार व्यक्ति से कुटुम्ब, कुटुम्ब से समाज, समाज से राष्ट्र और राष्ट्र से संसार का भी ऐसा विकासक्रम है ।

अज्ञेय फिर भी कहते हैं "जीवन की पहचान उसे सबसे पहले एक अविभाज्य व्यक्ति के रूप में अपने अनुभव के रूप में होती है ? अर्थात् कवि अकेला एक बच्चे के रूप में जन्म लेते ही वह जीवन को पहचान लेता है । व्यक्ति का अस्तित्व वही मूल्य सत्ता के रूप में आया है कर्ता होने के नाते मानव समाज का निर्माता भी वही है ।"[8] इस प्रकार विचिन्तन करने पर मानव समाज की सृष्टा है व्यक्ति निर्माता है व्यक्ति यहाँ सृष्टि से बढ़कर सृष्टा का स्थान निर्विवाद है । समाज से प्रधान है उससे आगे है व्यक्ति । जिस प्रकार एक शरीर के कोश और पूरा शरीर का सम्बन्ध है उसी प्रकार व्यक्ति और समाज, कोश और शरीर के बारे में सोचने पर हर एक कोश का अपना अपना काम है । लेकिन सृष्टा कहने पर भी अज्ञेय वे व्यक्ति को समाज से प्रधान नहीं कहा है एक दूसरे का पूरक हा कहा है । समाज सोचे नहीं करता है सोचने का काम व्यक्ति करता है।"[9] इस संसार में सभी कार्यव्यापारों का आरम्भ वैयक्तिक धरातल से है ।

समाज क्या है ?

"अगर मानव की मेरी रूपकल्पना में वह एक पिण्डज जीव से अधिक कुछ भी है, तो मैं स्वयं मानव का (एक) सृष्टा हूँ सांस्कृतिक

---

7. अज्ञेय स्रोत और सेतु - पृ. 112
8. अज्ञेय - अन्तरा - पृ. 28
9.

मानव उतना ही मेरी सृष्टि है जितना मैं उसका फल हूँ । इस नाते मैं अगर कृतिकार कलाकार हूँ तो मानव समाज मेरी एक कृति है, केवल मेरी नहीं फिर भी मेरी सभी कृतियाँ, सभी कलायें, सभी कृतिकार कलाकार सूत्रधार हैं और मानव-समाज के स्रष्टा हैं । मानव समाज ही वह बृहत्तर कृति या कलासृष्टि है जिसके साथ उनकी प्रतिश्रुति है, जिसमें उनकी कर्मरति है, जिसके प्रति उनका दायित्व है और जिसकेलिए वे प्रतिबद्ध है ।" साहित्य प्रतिभा से संपन्न कलाकार अज्ञेय के मत में कि वह समाज की सृष्टा है । वह किस प्रकार समाज के बारे में सोचना और विचार करना उचित है । "सामान्य रूप से, समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है, जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित्त जाने अनजाने कर लेते है । आरम्भ से इस सामुदायिक व्यवस्था का स्वरूप सरल और व्यापक होता था, परंतु विकास के साथ वह क्रमशः जटिल होकर वर्ग व्यवस्था में परिणत हो जाता है ।" [11]

अज्ञेय के मत में भी कलाकार रूपी व्यक्ति ही समाज की जन्मदाता है । यहाँ प्राधान्य इसी बात का है कि कलाकार समाज की सृष्टि किसप्रकार करता है । कलाकार एक व्यक्ति है, वह भी जीवित समाज का जीवन्त, सजीव मेम्बर है । समाज की सृष्टि में इसी वास्ते अपने योगदान देता है । व्यक्ति व्यक्ति की अपनी अपनी विशेषतायें है । यहाँ समाज रूपी हाल इन अलग-अलग विशेषताओं के सम्मेलन का स्थान है । यहाँ मतभेद होना स्वाभाविक है । वर्ग व्यवस्था, अर्थ-व्यवस्था संस्कृति राजनीति आदि के प्रभाव से सामाजिक व्यवस्था बदल जाती है । विभिन्न संस्कृतियों के बारे में हम किताबों और

और कृतियों में पढते हैं । आर्य संस्कृति द्राविड़ संस्कृति सभी के बारे में हम कुछ न जानकारी है । जिस प्रकार बीसवीं शताब्दी के मानव, हम इस पुराने ज़माने के बारे में जानकारी प्राप्त करते है । साहित्य-कार उस सांस्कृतिक समाज की सृष्टि करता है । तत्कालीन समाज नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर भी साहित्यकार की तूलिका उसे पुनर्जन्म देता है । यहाँ अज्ञेय का मत सफल हो जाता है । डा॰ नगेन्द्र के मत भी ठीक हो जाता है, व्यक्ति व्यक्ति के मिलन से समाज का उदय है।

"कला और समाज के परस्पर संबन्ध की उपेक्षा नहीं जा सकती, क्योंकि कला स्वयं ही एक सामाजिक घटना है । इसके तीन कारण है, 1. कलाकार की मूल अनुभूति कितनी ही व्यक्तिगत और निराली क्यों न हो फिर भी कलाकार एक सामाजिक प्राणी है । 2. प्रत्येक कलाकृति चाहे उस पर कलाकी मूल अनुभूति की कितनी ही गहरी छाया क्यों न हो और उसका मूर्तरूप कितना ही निराला व अद्वितीय क्यों न हो कलाकार तथा समाज के अन्य सदस्यों के बीच एक प्रकार का संपर्क सेतु है, 3. कलाकार की रचना से अन्य व्यक्ति प्रभावित होते है और उन्हें अपने विचारों, उद्देश्यों अथवा मूल्यों पर पुनर्विचार (अनुमोदन या अवमूल्यन) करने में सहायता मिलती है । इस प्रकार प्रत्येक (सफल) कलाकृति में एक प्रकार की सामाजिक शक्ति निहित रहती है उसके द्वारा वह जनभावना को आन्दोलित या प्रेरित करता है ।"[12]

साहित्यकार और समाज का यह अटूट सम्बन्धों की चर्चा करने की आवश्यकता भी नहीं है क्योंकि मनुष्य जितना पुराना है साहित्य भी उतना ही पुराना है । साहित्यकार परिवेश से हमेशा प्रभावित है । साहित्यकार के परिवेश से तात्पर्य है तत्कालीन समाज और सामाजिक

वातावरण । कलाकार कलारूपी अपनी महत्तर सृष्टि केलिये सिमेन्ट और पत्थर परिवेश से ही स्वीकार करता है । वह स्वयं मेज़न है ।

आज की अवस्था में हमारी राजनैतिक आर्थिक संरचना में, उससे प्रभावित होकर जीते-जागते कलाकार पंजाब की समस्या, रामजन्मभूमि की समस्या, इस प्रकार की समस्याओं से अछूते रहकर साहित्य की रचना नहीं कर सकता है । छोटी सी राज्यों की समस्याओं का प्रभाव समस्त साहित्य पर पड़ता है ।

साहित्य और समाज के सम्बन्ध के बारे में मत भेद है, कुछ आलोचक कहते है कि साहित्य समाज का दर्पण है । और कुछ की राय है साहित्य समाज की समीक्षा है " महान् लेखक सामाजिक जीवन का केवल वर्णन नहीं करते । लेखक का दृष्टिकोण स्वभावतः अधिक समीक्षात्मक होता है । इसकेलिए ऐसे प्रश्नों का आविष्कार करना ज़रूरी हो जाता है जिनमें उसके पात्र स्वयं अपनी नियति की खोज कर सकें । समाज केवल संस्थाओं का संघात मात्र नहीं है । उसमें एक ओर जहाँ व्यक्ति के आचार विचार के आदर्श एवं प्रतिमानों की व्यवस्था है, वहाँ दूसरी ओर ऐसे सुविचारित मूल्यों का आविर्भाव, भी है, जिन्हें सामाजिक स्तर पर सिद्ध करने केलिये मनुष्य को प्रयत्न करना होता है । साहित्य में सामाजिक प्रतिमानों और प्रवृत्तियों का प्रतिबिंब रहता है, इसमें संदेह नहीं है--किंतु उसमें लेखक के अभिमत मूल्यों का प्रतिफलन भी उतना ही अनिवार्य है और यह कहना गलत न होगा कि मूल्यों के स्तर पर ही साहित्य समाजशास्त्रीय अध्ययन को शक्ति एवं अर्थवत्ता प्रदान कर सकता है ।"[13]

आप सोचते हैं कि समाज एक मु... है । जो यथार्थ का अण्डा देती है ... अंडा आप खाते है और इसलिये आप मानते ... कि वह मुर्गी आप की है । यथार्थ पहाड़-सा भी गि... ा है ज्वार सा भी उमड़ता है, सूर्या सा-भी फूटता है और रात के च्येन ... रे-सा दुर्बोध्य भी रह जाता है । यथार्थ में डूबे बिना यथार्थ नहीं है । अगर आप इसके बाहर है और उसे [ऑब्जेक्टिविटी"] पूरे देख रहे ... तो यथार्थ वह कहाँ हैं ? " साहित्य को समाज का काल्पनिक ... कहनेवालों से सहमत होकर ही ।

अज्ञेय ने यह व्यक्त किया है । साहित्य में कल्प... ... है । यथार्थ ज्यों का त्यों चित्रित करने पर साहित्य नहीं हो जाता है । ... य कहता है कि समाज भी यथार्थ नहीं है । वह बदल भी जाता है अनेक रूप और भाव स्वीकार करता है । " कवि वास्तविकता है सृष्टि करता है कम्प्यूटर केवल उसे प्रस्तुत करता है "[15]

"सरकारें मानव समाज रूपी कार्य... यंत्र के निर्माण में लगी है जब कि कलाकार मानवसमाज रूपी विशद कल - संरचना के सृजन में ... ता है ।"[16] साहित्य और समाज दोनों एक दूसरे से प्रभावित हैं, रहेगा भी । सामाजिक आधार से विच्छिन्न कला या साहित्य की कल्पना ही अधूरी है । इसी पुनर्सृजन की प्रक्रिया जो साहित्यकार रूपी चूल्हे में चलती इसलिए ही साहित्यकार को रचनाकार या सृष्टा कहा जाता है । वह यथार्थ का अनुकृति न करते पुनर्सृजन करता है । कलाकृति में बाह्य यथार्थ का छना हुआ रूप सामने आता है । रचयिता स्वयं अपने अंदर छिपी हुई प्रतिभा को पहचानकर उसका विकास करता ।

वह समग्र गुंजाइश, अधूरा शब्द, मत भेद अनिवार्य था और यहीं संवाद की प्राथमिक शर्त है ।

समाज से अभिप्राय है वह परिवृत्ति जिसके साथ व्यक्ति किसी प्रकार अपनाया महसूस करें । वह मानव समाज का एक अंश भी है । वह मानव समाज की परिधि से बाहर बढ़कर पशु-पक्षियों (जीव मात्र) को भी घेर सकती है, बल्कि मानवमात्र को छोड़कर पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों तक ही रह जा सकती है ।"[17] अज्ञेय के उक्त कथन से यह व्यक्त है कि अज्ञेय का समाज मानव मात्र तक न होकर इस प्रपंच के सभी के सभी जानवर और लताओं को भी जोड़कर है । अज्ञेय की अभिलाषा है कि हमें इस समाज से या हमारे आसपास के पेड़-पौधों झरने और नदियों को भी अपनाया महसूस करना है । यदि किसी भी परिस्थितिवश हम इस महसूस करते है तो समझ लेना वह हमारा समाज नहीं है । यदि किसी दूसरी परिवृत्ती से हमारे मन मिल नहीं जाते तो वही हमारा समाज है । समाज साधारणतः जिस दिशा की ओर जाता है, जिन लीकों में चलता है उन दिशाओं और लीकों में चलने की कला संपूर्णता की ओर जाने का प्रयास है । अज्ञेय के उपर्युक्त मत का चिंतन करने पर यह सर्वमान्य है कि कलाकार समाज में सभी प्रकार की अच्छाइयों और बुराइयों को चित्रित करके ही आगे बढ़ता है । तभी और तब ही उसकी उपासना उसकी सृष्टि समाज की उपासना या सृष्टि हो जाती है । " यदि कलाकार समाज के अन्तर्गत समूचे भौतिक जगत् को खींच सकता है, तब अपने संसार के सम्बन्ध को फलप्रद बना सकता है, सिद्ध हो सकता है अर्थात् सच्चा कलाकार हो सकता है ।"[18]

कला की वस्तु या सामग्री निरन्तर बदलती रहती है लेकिन कला शायद नहीं बदलती, कलाकार की सामग्री समाज ही है । समाज / हमेशा बदलता रहता है । सामूहिक मन का परिवर्तन, जीवन के उलझन आशा और निराशायें बदलती रहती है । परिवेश परिवर्तनशील है । इस बदलते मान्यताओं से मूल्यों से परिप्लावित या उत्तेजित हो जाता है कलाकार । यहाँ अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि टी. एस. एलिएट का मत सिद्ध हो जाता है कि "Poetry is not a turning loose of emotions, but an escape from emotions, it is not the expression of personality but an escape from personality" 18(a)

वास्तव में समाज की गतिविधियाँ इस शब्दायमान विश्व के अनेक प्रकार की अनुभूतियाँ, शब्द, विचार, चित्र, कलाकार के हृदय में सृजन प्रक्रिया की प्रतीक्षा में छिपे है । मौलिक रचना-प्रक्रिया के साथ से एक रचना की सृष्टि होती है । इसलिए अपने समाज के गम्भीरता रहस्य को पढ़ने केलिए इसका साहित्य ही सबसे अच्छी कुंजी है । कलाकार के हृदय में प्रवेश करके सामाजिक यथार्थ एक रूप स्वीकार करता है और वही रूप यथार्थ से भिन्न है । और इसलिए ही अनुभव करने वाला प्राणी और रचना करनेवाला व्यक्ति अलग अलग है या होना चाहिए यही टी. एस. एलियट का अभिप्राय है । The more perfect the artist, the more completely seperate in him will be a man who suffers and mind which creates" अतः समाज को मानसिक चिंतन का विषय समझता है । व्यक्ति को मूर्त समझता है ।

Encyclopedia of social science के अनुसार society may be defined as total complex of human relationship in so far they go out of action in times of mean sent relationship, intrinsic or symbolic"

मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए संगठित होता है। खाना, वस्त्र, पढाई केजसूद उल्लास सभी केलिए मनुष्य आपस में मिलना आवश्यक समझते है। यहाँ भाषा काम आती है। अपने मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति या अपने मन के विचारों को बहिष्कृत करने केलिए भाषा का महत्वपूर्ण योगदान है। अज्ञेय के अनुसार भाषा ही मनुष्य को मनुष्य होने की पहचान और शर्त सकती हैं। भाषा के बिना जीना भी मुश्किल है। पशु से मनुष्य के विकास में भाषा ही वह सीढी है जिसको पार करके वह मनुष्यत्व प्राप्त करता है। अज्ञेय अपने साहित्य में कालीन परिवेश को स्वर प्रदान करते । अज्ञेय समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार करता है तथा अपने लेखन को समाज केलिये ही स्वीकार करते हैं। इनके साहित्य में निरन्तर सामाजिक चेतना का दर्शन होता है। इस प्रकार साहित्यकार अपने समाजगत अनुभवों को शब्दबद्ध करता है। समकालीन मानवीय संवेदना से प्रभावित होकर विश्व बन्धुत्व की भावना का विकास करना अज्ञेय की ध्येय है। मानव के बढते हुए मानसिक कुंठाओं से मुक्ति का एकमात्र साधन मानवतावाद है। अज्ञेय ने भी विश्वबन्धुत्व का इस प्रकार संदेश दिया है।

बंधु है नाचर्यां
प्रकृति भी बन्धु है
और क्या जाने कदाचित्
बन्धु मानव" [19]

इतने से यही निर्विवाद है कि समाजरूपी परिवृत्ति की परिभाषा में टी• एस• एलियट मात्यु आरनोल्ड, डा• नगेन्द्र आदि साहित्यकारों के साथ अज्ञेय भी खड़े हो जाते है ।

अज्ञेय के साहित्य में प्रतिबिम्बित समाज

समाज माने एक उद्देश्य के पीछे इकट्ठे हुए व्यक्तियों का समूह है । समाज के आगे एक न एक उद्देश्य अवश्य होगा । इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वे समाजरूपी आयोजना को रूप देते है । यही समाज और उसके प्रवर्तक साहित्यकारों की चिन्ता के लिये विषय बन जाता है ।

अज्ञय का रचनाकाल परिवर्तनों का युग है। सामाजिक दृष्टि से वैज्ञानिक और यथार्थवादी दृष्टि का विकास और विशेष रूप से परंपरा पालन के प्रति उपेक्षा का भाव इस युग की उल्लेखनीय प्रवृत्तियाँ है । औद्योगिक विकास की प्रक्रिया में श्रमिक वर्ग का उदय हुआ । अब वे एक विशिष्ट शक्ति के रूप में उभर आये । व्यक्तिगत रूप से उनकी स्थिति अत्यन्त दयनीय है । कृषक वर्ग की भी यही स्थिति है । ज़मींनदारों की शोषणनीति में कोई उल्लेखनीय प्रगति लक्षित नहीं होगी । मध्यवर्ग की स्थिति भी कम शोचनीय नहीं रही है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के भारत है । आज़ादी के पश्चात् विकास कार्यों को व्यवहारिक

स्वरूप प्रदान करने में भी इसी वर्ग का सर्वाधिक योग रहा है । स्वतंत्रता काल के पश्चात् इसी वर्ग के द्वारा वर्तमान सामाजिक अव्यवस्था के प्रति आक्रोश प्रकट किया गया जिसके परिणाम विघटन सर्वव्यापी असंतोष और तीखे क्षोभ के रूप में आज सर्वत्र परिलक्षित होते हैं । पूँजीपति वर्ग का तीव्र विकास इस युग की विशेषता है । औद्योगिक प्रगति ने श्रमिकों के साथ-साथ पूँजीपति वर्ग को भी विकसित किया । उत्पादन के समस्त साधनों को थोड़े से हाथों में केन्द्रित कर इस वर्ग ने धीरे-धीरे देश के धन को अपने वश में कर लेने की सफल योजना बनाई । स्वतंत्रता के पश्चात् तो इस वर्ग का आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में ही नहीं वरन् राजनैतिक व्यवस्था पर भी प्रभाव बढ़ा और फिर बढ़ता चला गया ।

वर्ग-वैषम्य और वर्ग-संघर्ष की भावना का उदय हुआ । मध्यमवर्गों में इसका प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा । धार्मिक कट्टरता की धारणाओं में कोई कमी नहीं हुई । हिन्दु और मुसलमानों के मन में एक दूसरे के प्रति दुराव की भावना उत्पन्न हो रही थी । यह दुराव स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आज भी बना रहा है । पाकिस्तान के बनने के बाद आज भी बना रहा है । पाकिस्तान के बनने के बाद भी भारत में मुस्लिम लीग जैसी साम्प्रदायिक संस्थायें बनी रही ।

समाज सुधारकों ने पिछड़ी हुई जातियों के सुधारकार्य की ओर ध्यान दिया । इसी प्रकार नारी उद्धार के प्रति भी जागृति आयी इस काल तक आते आते नारी समाजकल्याण, राजनीति शिक्षा कला तथा प्रकाशकीय क्षेत्र में अग्रसर हो चुकी थी और परिणाम स्वरूप बुद्धिजीवी नारी का अपना एक स्वतंत्र वर्ग निर्मित होने लगा था ।

नागरी नारी की स्थिति के विकास की स्पष्ट रेखायें देख सकते हैं । अस्पष्टता का भाव दण्डित होने लगा । गांधीजी, विनोबा भावे जैसे सर्वोदयी नेताओं ने इस दिशा में प्रवर्तन किया । परिवार सम्बन्ध बातों के कटने पर संयुक्त परिवारों का आदर्श शिथिल होता गया । औद्योगिक विकास परिवार के सदस्यों को बाहर जाने को विवश किया । औद्योगिक विकास ने देश में एक नयी संस्कृति का विकास किया । प्राचीन मान्यताओं और परंपराओं में विघटन की प्रक्रिया आरंभ हुई । पाश्चात्य आदर्शों के   य   न्वित होकर एक नवीन संस्कृति के निर्माण में बढ़ावा दे लगा । ऊपर वर्णित परिस्थितियों का प्रभाव अज्ञेय ने साहित्य में ऊपर प   न   है । अनेक आलोचकों ने कहा कि अज्ञेय के पात्र समाज से कटे हुए व्यक्तिगत पात्र   लेकिन यह नहीं है । लेकिन व्यक्तिगत होने पर भी उनके पीछे इसी प्रकार के अनेक पात्र वर्तमान है ।

समाज और व्यक्ति परस्पर पूरक है।

प्रकृति का एक स्वीकृत नियम है कि सबल निर्बल पर अधिकार जमाता है और इस अधिकार भावना से प्रेरित हो जाता है उच्चवर्ग । इसका परिणाम स्वरूप अधिकांशतः उच्चवर्ग अन्याय अत्याचार और अनाचार का रास्ता अपनाता है । परिणाम के   में निम्नवर्ग उसकी प्रतिक्रिया में आगे बढ़ता है । घात-प्रतिघात गतिशील हो जाता है । समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व उभरता है यहाँ । इस के द्वारा समाज क्रियाशील रहता है ।

व्यक्ति का अपना विचार-मान्यतायें है, आदर्श और रीतियाँ

है इन आदर्शों और नियमों के द्वारा वह समाज व्यवस्था का नियमन करता है । लेकिन एक देश-काल-वातावरण का नियम समय के परिवर्तन के बदलता जाता है । वह अ...द हो जाता है और परिस्थिति के बदलते बदलते सामाजिक मान्यतायें बदल जाती है । वर्ग भेद द्वारा व परिवर्तन की प्रक्रिया क्रियाशील हो जाती है । द्वन्द्व ही इसका आधारभूत तत्व है । युग-सापेक्ष्य तथ्य को बदलकर आधार-भूत सत्य की स्थापना मुश्किल है । यहाँ व्यक्ति की व्यक्तिगत विचार सामाजिक या तत्कालीन सामाजिक मान्यताओं से एकात्मता स्थापित करता है । अतः व्यक्ति और समाज एक दूसरे से आबद्ध है ।

व्यक्ति वैयक्तिक रूप में स्वतंत्र होने पर भी स्वयं अनेक सामाजिक नियमों में बन्धा हुआ होता है । सामाजिक व्यवस्थितियों से व्यक्ति अपने विकास में अनेक महत्वपूर्ण योगदान स्वीकार करते है । साथ ही साथ और महान् व्यक्तित्व मानव समाज को कुछ दे भी सकता है । महात्मागाँन्धी जवहरलाल नेहरू, सुबाषचन्द्र बोस जैसे राजनैतिक नेताओं से समाज को बहुत आ..क उच्चतर पाठ मिले हैं । ईसामसीह, मुहम्मदनबी, श्रीबुद्ध श्री नारायण गुरू आदि महान् धार्मिक नेताओं से कुछ धार्मिक नियमों के अनश्वर सच्चाई आधुनिक समाज को स्वीकार करना आवश्यक है । इसी प्रकार व्यक्ति और समाज परस्पर पूरक है । महात्मागाँधी का अपना महत्वपूर्ण व्यक्तित्व है । भारत के या विश्व के इतिहास में वह अनश्वर रहेगा । लेकिन व्यक्ति समाज से मिलकर, समाज में समाज से स्वतंत्र जीता था । वह समाज के, राष्ट्र के कल्याण केलिये जीता था । लेकिन उनके व्यक्तित्व की पुष्टि भी मिली थी । यह एक तर्करहित बात है । इसी प्रकार ऊपर चर्चित धार्मिक नेताओं

का भी अपना अपना अलग व्यक्तित्व भी था जो शोभायमान [illegible] और रहेगा । वे समाज से मिलकर [illegible] थे । व्यक्ति के बिना समाज का अस्तित्व नहीं और सामाजिक व्यवस्था [illegible] असमर्थता व्यक्ति का महत्व नहीं है ।

व्यक्ति अपनी अन्तर्गुहा में बन्दी सामाजिक सत्यों से अप्रभावित कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है समाज से प्रभावित है और अकेले उसकी सार्थकता कम नहीं है । वह सामाजिक जीवन के प्रवाह में बहता हुआ उसकी समूची चेतना को झेलता हुआ भी गतिशील सत्ता है अपनी जगह स्थित नदी का द्वीप है ।

पुराने ज़माने में व्यक्ति को सामाजिक परिवेश से भिन्न अधिक महत्व नहीं समझा गया था । सामाजिक विधान या नियमों में ही मानव जीवन का भविष्य आधारित था । लेकिन आधुनिक युग में पाश्चात्य प्रभाव, औद्योगिकरण वैज्ञानिक अनुसन्धान शिक्षा के [illegible], राजनैतिक दलों का आविर्भाव, धार्मिक आचारों का अभाव, [illegible] उच्च-नीचत्व आदि के कारण सामाजिक बन्धन शिथिल होता आता है । मनुष्य अपने दल के विकास केलिये, धर्म के लाभ केलिए, वैज्ञानिक आविष्कार केलिए औद्योगिक उन्नयन केलिये, व्यक्तिपरख चिन्तन मनन करने लगता है । उसके परिणाम के रूप में उसे व्यक्तित्व के विकास का नया रूप और भाव मिला । नयी दिशा की ओर वह चलने लगा । लेकिन उसके विकास की दिशायें आगे बढ़ती जाती और उसके साथ साथ मानव की अहं भावना बढ़ती जाती है । उसके अहम् के कारण सर्वत्र पुरातन परम्परायें, सामाजिक मान्यतायें, रूढ़ियाँ और नैतिक बन्धन के प्रति आक्रोश या विद्रोह की भावना प्रकट कर रहा है । इन्हीं मान्यताओं में परिवर्तन भी आ गया है, आ रहा है, आयेगा भी

है । आइनस्टैन, आर्कमिडिस जैसे महान वैज्ञानिकों का अनश्वर ...निक आविष्कार क्या समाज के विकास में हाथ ... है ? समाज के उन्नमन केलिये उनके वैयक्तिक आविष्कार काम में आते हैं । व्यक्ति के विकास से समाज की हानि नहीं है । समाज का लाभ है ।

व्यक्ति स्वातंत्र्य या वैयक्तिकता का विकास के कारण प्राचीन काल के संयुक्त परिवार की अपेक्षा व्यक्ति ने लघु परिवार पसंद किया। महत्व दिया, आज इस लघुपरिवार की व्यवस्था में व्यक्ति के विकास को अधिक लाभ है साथ ही साथ नष्ट भी वर्तमान है । व्यक्ति जो लघुपरिवार का है वह संयुक्त परिवार की इकाई भी है । इस लघु परिवार का विकास केलिए हानिकारक नहीं है । किसी न किसी प्रकार फलदायक है । इस लघुपरिवार संयुक्त परिवार में ही ... है ।

अद्यतन युग में अर्थतंत्र ... भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है । व्यक्ति आर्थिक ...ता केलिए व्य... ...गत रूप में बहुत अधिक परिश्रमी निकलता है । वह धन कमाने के भ्रम में नैतिकता को नकारता है । लेकिन वैयक्तिक रूप से उसका उन्नमन समाज केलिये ज़रूर लाभदायक है । उदाहरण केलिये घाटी के राज्यों में जाकर कठिन प्रयत्न करके लोग पैसा इक्कट्ठा करते है । उनके श्रम भारत की आर्थिक उन्नति की महत्वपूर्ण देन था । वह तो व्यक्तिगत रूप की कमाई है लेकिन समाज की अर्थ व्यवस्था की कमाई है ।

समाज शक्तिशाली है । समाज की मान्यतायें नैतिकता और मर्यादाओं की नीव ठोस भूमि पर टिकी हुई है । व्यक्ति ... समूचे समाज से टकराने में असमर्थ निकलता है ।

अज्ञेय ने अपने आत्मनेपद में इसी प्रकार कहा है कि "मैं व्यक्ति का अपने प्रति उत्तरदायित्व को प्राथमिक मानता हूँ और समाज के प्रति उत्तर दायित्व उससे उत्पन्न, इस प्रकार अज्ञेय सामाजिक चेतना के द्वारा लोकतंत्र की स्थापना में विश्वास रखते हैं । उसके पसंद का विषय है मानवतावाद । पुष्करिणी भूमिका में अज्ञेय लिखते है "मानव की प्रतिष्ठा का पहला और व्यापक अर्थ था मानव समाज के आधार भूत नैतिक मूल्यों का पुनः परीक्षण और एक लौकिक आधार पर ही उनकी स्थापना अथवा देव-संभूत नैतिकता के बदले मानव-संभूत नैतिकता की प्रतिष्ठा । व्यापक दृष्टि से भी इस परिवर्तन के दो सोपान है । पहले लोकोत्तर नियमों अथवा ऋतु के स्थान में मानव की प्रतिष्ठा हुई । परिवर्तन के इन दो सोपानों को ध्यान में रखकर ही हम उस वैविध्य को समझ सकते हैं जो इस काल की साहित्यिक गति में लक्षित हुआ ।

अज्ञेय अपने भवन्ती में इसी प्रकार कहते हैं" निस्सन्देह व्यक्ति इकाई की बहुत सी विशिष्ठ और अद्वितीय अनुभूतियाँ होती हैं, पर एक सामाजिक इकाई की अनुभूति का एक सामान्य ढाँचा भी होता है जिसके भीतर व्यक्ति इकाई के अनुभव प्रतिफलित होते हैं और जिसके द्वारा वे निरूपित मार्जित और नियन्त्रित होते है । मूल्यों की परंपरा में मूल्यांकन होते हैं ।"

रामविलास शर्मा, मुक्तिबोध जैसे आलोचकों ने व्यक्तित्व पर बल देने को समाज केलिये खतरा मान लिया है । अज्ञेय व्यक्तित्व पर बल देना समाज केलिये शुभ मानते हैं । उनके विचार तो युक्तिपूर्ण है । व्यक्तित्वहीन व्यक्तियों से जो समाज बनेगा वह कदापि वरेण्य नहीं

हो सकता, व्यक्तित्व के किन्हीं विशिष्ट गुणों को बचाकर रखना है । तभी समष्टी का कल्याण संभव है ।

समष्टिकल्याण के लिए व्यक्ति के स्वातन्त्र्य पर बाधा नहीं होनी है । यहाँ व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और समष्टि या समाज के बीच का संघर्ष उभरता है । अज्ञेय की दृष्टि से समाज में स्वाधीन होकर जीने से ही व्यक्ति की जीजीविषा की पूर्ति होती है । अज्ञेय की स्वाधीनता का अर्थ समाज से स्वतंत्र हो जाना नहीं समाज में स्वतंत्र होकर जीना है । "समाज की रचना भी मूलतः व्यक्ति की स्वाधीनता के शोध और प्रयत्न के लिये हुई है । इस दृष्टि से समाज एक कार्यकर साधन है और ऐसा होकर भी सार्थक और महत्वपूर्ण है ।" [20]

अज्ञेय के अनुसार व्यक्ति समाज का एक अंग मात्र नहीं है । वह समाजरूपी मशीन का पुर्जा ही नहीं है बल्कि समाज का निर्माता है । अज्ञेय के लिये व्यक्ति स्वतंत्र्य विकास के आधारभूत तत्व है । इसलिये ही समाज इस व्यक्ति-स्वातंत्र्य की रक्षा करता है । एक आत्मचेतन् विकासवान् समाज स्वयं भी स्वतंत्र होता है अपने भीतर व्यक्ति को भी स्वतंत्र विकास का खुला अवकाश देता है । इसके विपरीत जिस समाज का विकास रुक गया होता है जो बँधे पानी की भाँति सड रह जाता है । वही व्यक्ति को भी बाँधता है असहिष्णु होता है ।[21] व्यक्ति स्वातंत्र्य हो जाने पर संस्कृति का विकास संभव है । व्यक्ति स्वातंत्र्य समाज के विरुद्ध नहीं हो जाता है । व्यक्ति होने के साथ-साथ सामाजिक होने के कारण वह भी संगठित और सामूहिक नियतियों के अधीन है । नागरिक का कर्तव्य उसके साथ हमेशा है ।

एक घर के मुख्य तो स्वतंत्र है । एक स्वतंत्र व्यक्ति है, उनकी व्यक्तिगत आवश्यकतायें है, मान्यतायें है कार्यक्षेत्र है । लेकिन वह परिवार से स्वतंत्र नहीं है । परिवार में दूसरे सदस्यों की समस्याओं के मध्य ही स्वतंत्र है । इसी प्रकार मालिक की स्वतंत्रता उसे या परिवार को भी हानिकारक नहीं है । अज्ञेय का व्यक्ति-स्वातंत्र्य इसी प्रकार का है ।

हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार तुलसीदास, कबीरदास, जायसी, सुमित्रानन्दन पन्त, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा, अज्ञेय इन्हों को देखने पर हमें एक बात समझते है कि वे सभी व्यक्तिगत रूप से पुष्टि प्राप्त करनेवाले है । एक सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज से साहित्यकार का सम्बन्ध है, एक कृतिकार के रूप में सामाजिक जीवन के मध्य में भी वह समाज से मिलना है वह समाज में परिवर्तन लाने का परिश्रम करता है । और एक परिधि तक सफल भी निकलता है । साहित्य में चित्रित पात्रों के द्वारा पाठक प्रभावित हो जाता है । उनके मन में परिवर्तन की प्रक्रिया व्यक्ति से ही शुरू होती है । इसलिए व्यक्ति व्यक्ति के विकास से समाज के विकास ही चलता है । अज्ञेय के विचार है " साहित्य में व्यक्ति का चित्रण करना गलत नहीं है क्योंकि व्यक्ति का चित्रण करते समय उसे सामाजिक संघर्ष से दूर रखकर देखें ।"[22] अज्ञेय समाज में, साहित्य में सब कहीं व्यक्ति का विकास समाज का बनने के [illegible] है ।

व्यक्ति और समाज के परस्पर संबन्ध कहने से भिन्न नहीं है व्यक्ति और परिवेश की समस्या पर चिंतन करना । व्यक्ति के सामने परिवेश

की समस्या अनेक रूपों में प्रत्यक्ष होती है, व्यक्ति और सामाजिक मूल्यों की समस्या उनमें से एक है । बदलते परिवेश के साथ मिलकर जाना एक कठिन समस्या है । लेखक की भी यही समस्या है । व्यक्ति जहाँ खड़ा है वह परिवेश से आवृत हो जाता है । लेखक के बारे में कहने पर अज्ञेय व्यक्त करता है "जितना ही अच्छा लेखक उतना ही अधिक वह अपना परिवेश है ।"[23]

साधारण मानव के लिए भी अब राजनीति एक समस्या हो गयी है । आधुनिक समाज में अनगिनत राजनैतिक दल वर्तमान हैं । दल और दल के बीच संघर्ष है । इन दलों में जो व्यक्ति है, उन्हीं के बीच का संघर्ष है । आज यह व्यष्टिवादी हलचल राजनैतिक दलों में दरार पैदा करती है । कलह मचाते है । भगवान् के नाम पर भी लड़ाई है । दिल्ली में अभी हिन्दुओं का अयोध्या में रामराज्य की स्थापना करना है, मन्दिर बनाना है । मुस्लिम लोग कहते हैं कि उन्हें वहाँ मस्जिद बनाना है । समाज निर्माण की प्रक्रिया में परिवर्तन की रास्ते पर व्यक्ति और समाज के बीच संघर्ष जरूर है लेकिन इस संघर्ष से ही वह विकास प्राप्त करता है । इस संघर्ष के बाद समझौता है । इस जारी प्रक्रिया में समाज के केन्द्र में व्यक्ति ही रहता है । व्यक्ति ही समाज की शक्तियों के लिये नियम बनाता है और उसे ठुकराता है या काटता है । मानवीय संवेदनाओं का विकास समाज से ही चलता है । सामाजिक परिस्थितियाँ व्यक्ति के निर्माण में सहायक है साथ ही साथ व्यक्ति अपनी विशिष्टताओं से, उपलब्धियों से समाज को प्रभावित ही करता है अज्ञेय के विचारों में " समाज की नैतिक या आचरण सम्बन्धी मान्यतायें उसकी इकाइयों की औसत होती है इसलिये उस औसत

स्तर ो जो भी ऊँचा उठाता है । पूरे समाज को उठाता है ।"[24]
अच्छे व्यक्तियों से ही मूल्यवान् समाज बनता है । सामाजिक आ ण
नैतिक ों, धार्मिक व्यवहार आदि उसमें रहनेवाले व्यक्तियों के
अनुसार है । अच्छे व्यक्तियों से ही मूल्यवान समाज बनता है ।
सामाजिक आचरण नैतिकमूल्यों धार्मिक व्यवहार आदि उसमें रहनेवाले
व्यक्तियों के ार है ।

किसी भी सामाजि र्ष के समय लोग कहते हैं कि समाज
पतनोन्मुख है, दोषपूर्ण है आदि । लेकिन कवि अज्ञेय लिखते हैं "मैं यह
मानता हूँ कि हमारा जो समाज-संगठन है वह बहुत दोषपूर्ण है आप
कहेंगे वह पतनोन्मुख है, टूटनेवाला है, या कि उसको टूटना चाहिये,
यह मान लूँगा । लेकिन मानव में अपने विश्वास के कारण ही ऐसा कहूँगा ।
इतने से ही यह नहीं मानूँगा कि इसलिये मानव पतनोन्मुख है । मानव
क्योंकि विकासोन्मुख है । इसलि समाज को टूटना और बदलना
चाहिए ।"[25]

व्यक्ति के मन की अभिलाषाओं की पूर्ति केलिये अज्ञेय समाज
का पर्वाह नहीं करता है । व्यक्ति अपने मन के सुख केलिये जो चाहिए
वह करता है और रता है । यहाँ समाज की मूल्यता को ढूँढ निकालने
की आवश्यकता नहीं है । यही अज्ञेय के साहित्य में प्रतिफलित विचार
धारा है । अज्ञेय का दृढविश्वास है कि समाज के यथार्थ व्यक्ति,
सापेक्ष होना चाहिए । नैतिक बोध व्यक्ति की आत्मा पर आकर
टिकता है । इसका मानदण्ड और इसका केन्द्र बिन्दु व्यक्ति के द्वारा
स्थापित किया जा सकता है । समाज के विकास की कसौटी व्यक्ति

ही है । अज्ञेय के दृष्टिकोण व्यक्तिमूलक है । यह दृष्टि समाज की परम्परागत मान्यतायें, तथा मार्यदाओं को ठुकराता नहीं । समाज के विकारों को चेतना को निजी परिवेश के अनुकूल अपनाता है । वह समाज को नकारता नहीं है स्वीकारता है इसलिए व्यक्तिगत रूप से उसके साहित्य का हक पात्र स्वतंत्र होने पर भी पूर्णतः समाज निरपेक्ष कहना सब कहीं ठीक नहीं होगा । वे समाज के साथ ही चल है ।

कवि अज्ञेय मानव व्यक्तित्व केलिये नदी का द्वीप, समष्टि केलिए सागर तथा व्यष्टि केलिये मछली के प्रतीकों का प्रयोग करते हैं । कवि समष्टि चेतना की अपेक्षा व्यष्टिचेतना के प्रधानता पर लिखे है नीचे की पंक्तियों

> अर्थ हमारा ।
> जितना है सागर में नहीं
> उतनी मछली में है
> वह हम को टेर रहा है ।" [26]

यहाँ भी समष्टि से व्यष्टि की प्रधानता के बारे में कवि की चर्चा है । लेकिन समष्टि या व्यष्टि में से एक को छोड़कर नहीं । कवि दोनों के परस्पर आपेक्षित तत्व हमेशा स्वीकार करते हैं । अज्ञेय के आत्मनेपद भवन्ती, अन्तरा त्रिशंकु, लिखि कागद कोरे आलवाल जैसे निबंधों को पढ़ने के बाद यह निर्विवाद है कि वे व्यक्ति से ही, व्यक्ति की चेतना को पुष्ट करके समाज की चेतना का विकास चाहते हैं । व्यक्ति के सुख को त्यागकर समाज की मान्यता और मर्यादाओं के पीछे दौड़ना उन्हें स्वीकार्य नहीं है । अज्ञेय के उपन्यासों

के सभी के सभी पात्र मन की इच्छा की पूर्ति केलिये सामाजिक मान्यताओं को नकारते हैं ।

व्यक्ति अपनी ही राहों पर चलने पर समाज से कट जाते हैं । व्यक्तिवाद, क्षणवाद आदि वादों से प्रभावित होने पर व्यक्ति समाज केलिये न होकर व्यक्ति केलिये हो जाता है । यहाँ व्यक्तिवाद आता है । हिन्दी में व्यक्तिवाद, अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषण आदि का प्रबल प्रयोग है । अज्ञेय जैसे लेखकों ने इसका प्रबल प्रयोग किया है । ये पिचारात्मक विदेशियों की देन है ।

व्यक्तिवाद का प्रारम्भ ग्रीक विचारकों की मान्यताओं में प्राप्त होता है । इसका आरंभ पाँचवीं शती ई.पू. से है । उनके विचारानुसार व्यक्ति आत्मकेन्द्रित है । उसे अपने अस्तित्व के विकास करना ही आवश्यक है । इसलिए उसे सामाजिक व्यवस्था और परंपरागत मान्यताओं को स्वीकारना आवश्यक नहीं है । समाज से अलग व्यक्ति के अस्तित्व की घोषणा यहाँ से हुई । "राज्यशक्ति व्यक्ति द्वारा निर्मित है अतः कृत्रिम है और व्यक्ति के निजी स्वार्थ से उसका कोई मेल नहीं हो सकता ।"[27] राज्यशक्ति और सामाजिक व्यवस्था में व्यक्तिस्वातंत्र्य की हानी समझा जाता है । समाज और राज्यशक्ति को मानकर चलनेपर व्यक्ति के व्यक्तित्व का आघात मिलता है । लेकिन अज्ञेय का मत है कि व्यक्तित्व के आघात मिलनेपर वहाँ सामाजिक मान्यताओं को परवाह करना है ।

आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक और वैज्ञानिक भूमिकाओं

पर व्यक्तिवाद का अध्ययन किया गया है । जब व्यक्तिवाद व्यक्ति को अधिक महत्व देकर सामाजिक चेतना के प्रति प्रतिक्रियावादी दृष्टिकोण अपना लेता है तब व्यक्ति के उच्चतर विकास पर हानि पहुँचता है । साहित्यकारों के बीच में भी इसका प्रभाव है ।

आज व्यक्तिवाद राज्यशक्ति का प्रतिक्रिया है । व्यक्ति के अंतरमन की बाह्य घोषणा है । व्यक्ति स्वातंत्र्य कीअभिव्यक्ति है । व्यक्ति की मनीषा जब तक संतुलित है तब तक व्यक्ति हितों केलिये साधन मात्र होने के अतिरिक्त समाज की और कोई महत्त्व समक्ष में नहीं आता व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के प्रति समर्पित हो यह आवश्यक है और सहज भी । व्यक्तित्व का निरन्तर विकास और उसकी विराटता का बोध व्यक्ति का लक्ष्य है । ऐसे संतुलित व्यक्ति मानस पर अनुशासन करने का समाज या शासन को कोई अधिकार नहीं होना चाहिए । समाज व्यक्ति की कृति है और इसलिए वह व्यक्ति केलिये मात्र साधन है । काल की निरंतरता में जो परंपरायें और रूढियाँ पैदा करती है जिससे व्यक्ति का विकास अवरुद्ध हो जाता है । व्यक्तिवाद उसके विरोध में है । परंपरा समाज तत्व से पोषित है, व्यक्ति चेतना संपन्न है । उसके अलावा व्यक्ति की हानी कल्याण विकास विनाश अथवा उत्थान, पतन केलिये स्वयं सोच सकने में सक्षम है और उसकेलिये उस पर समाज के निर्देश की आवश्यकता साथ अस्वस्थ सम्बन्धों से मुक्ति भी प्रधान है ।

प्रत्येक कृति में सामाजिक प्रतिबद्धता को खोजना उचित नहीं है ।

<u>निष्कर्ष</u> : अज्ञेय के साहित्य में चित्रित समाज उच्चवर्ग के सीमित समाज है, साधारण समाज तो नहीं है ।

इन चुने हुए पात्रों के सीमित समाज से उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता भी है । यह कहना गलत होगा कि अज्ञेय के पात्र समाज निरपेक्ष है लेकिन समाज सापेक्ष कहना ही ठीक है । व्यक्ति प्रधान होनेपर भी के साहित्य में व्यक्ति समाज के अनुकूल चलता है, समाजहित केलिये काम करता है । व्यक्तिगत उन्नयन समाज को उपयोगी है । व्यक्ति का अभ्युत्थान अन्ततः समाज का उन्नयन है ।

अध्याय तीन

अज्ञेय के उपन्यास साहित्य में व्यक्ति और समाज

अज्ञेय के पूर्व के उपन्यासों में व्यक्ति और समाज

अज्ञेय के पूर्व के उपन्यासों का अध्ययन करने पर प्रेमचन्द के उपन्यास ही प्रथमतः आते हैं । प्रेमचन्द अपने पात्रों को समस्याओं के प्रतिनिधि के रूप में करते हैं । वेश्या समस्या का प्रतिनिधि है "सेवासदन का सुमन" । उपन्यासकार सुमन के माध्यम से समाज में प्रचलित एक समस्या के विरुद्ध विद्रोह करते हैं । अनमेल विवाह से पीडित नारियों का प्रतिनिधि है "निर्मला" । सदियों से पीडित कृषकों का प्रतिनिधि है "गोदान" का "होरी" । परंपरा से विद्रोह करनेवाला पात्र है गोदान का "गोबर" । इतने से यह स्पष्ट है कि व्यक्ति को समाज के मध्य में देखना ही प्रेमचन्द को पसंद है । लेकिन गोदान में आकर प्रेमचन्द होरी, धनिया, गोबर आदि पात्रों मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने में सफल निकलता है । भिन्न भिन्न प्रसंगों में उन पात्रों की मानसिक अवस्था भिन्न भिन्न प्रकार हमारे सामने उभडती है । यहाँ पात्रों के मन के दुःख सुख, मानसिक उलझन मनके विचार सबकुछ उपन्यासों में स्पष्ट हो जाते हैं । निर्विवाद रूप से यह कहने को हम समर्थ है कि प्रेमचन्द का "गोदान" उपन्यास से ही व्यक्तिवाद की झलक मिलता है । गोदान में ही समाज के चित्र होने के साथ साथ, गोबर झुनिया होरी जैसे आदर्श पात्रों की मानसिक अवस्था का उनके मानसिक संघर्ष और उलझन का मार्मिक चित्रण है । पात्रों के वैयक्तिक संघर्ष सामाजिक कुरीतियों से विद्रोह करता है । यहाँ व्यक्ति और समाज के बीच का द्वन्द्व है । व्यक्ति समाज से मिलकर जाना चाहता है । समाज रूपी धारा से मिलकर बहना नहीं चाहता है धारा से

जैनेन्द्र

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के क्षेत्र को महत्वपूर्ण ऊँचाई उपन्यासकार जैनेन्द्रकुमार इसके बाद आते हैं, मानवमन के अंतर के अंतर पैठकर वहाँ सुख-दुःख के मोती ढूँढने में कलाकार जैनेन्द्र की क्षमता अतुलनीय है। जैनेन्द्र के प्रधान व्यक्ति-परख उपन्यास है "परख", "सुनीता", त्यागपत्र", "कल्याणी" आदि। इन उपन्यासों के पात्रों के मन का अध्ययन करने पर हम समझ सकते हैं, कि ये पूर्णतः वैयक्तिक उपन्यास है। मनोवैज्ञानिक प्रणाली को अपनाकर व्यक्ति मन का विश्लेषण करता है।

श्री भगवती चरणवर्मा के उपन्यास सामाजिक उपन्यास से वैयक्तिक धरातल के प्रवाह के एक श्रेष्ठ बिन्दु है। श्री. भगवती चरणवर्मा के प्रधान उपन्यास है "आखिरी दाँव", अपने खिलौने और भूले बिसरे चित्र। "आखिरी दाँव" में परंपरागत संस्कारों एवं रूढ़ीगत मान्यताओं से ग्रसित मानव जीवन को व्यक्तिवादी दृष्टि से प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में धन के पीछे दौड़कर मानव स्वयं मिटनेवाली एक अवस्था का चित्रण है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की कोटि की एक अविस्मरणीय घड़ी है। इलाचन्द्र जोशी के "पर्दे की रानी" "सन्यासी" "प्रेम और छाया" सन्यासी आदि मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का वास्तविक उदाहरण है। डॉ. इलाचन्द्र जोशी के कथनानुसार अंतःप्रदेश की गहराईयों गहन खाइयाँ भयंकर चट्टानों, प्रलयंकर तूफानों निरंतर उलझती रहनेवाली मानसिक गाँठों के कारण उत्पन्न भन्यमय अवसादों, विषादों तथा चित्त की अव्यवस्थित और असामंजस्यपूर्ण परिस्थितियों से भली भाँति परिचित रहता है। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में सर्वश्री प्रेमचन्द ने ही "गोदान के ज़रिये व्यक्तिवादी कु उपन्यास का बीज बोया। आगे आकर जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द्र जोशी, भगवती चरणवर्मा जैसे सिद्धहस्त मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों ने, सुनीता परख पर्दे की रानी जैसे महान् उपन्यासों से उपजाऊ लगाया। उपन्यास को महत्वपूर्ण धारा अमर उपन्यासकार "अज्ञेय" के "नदी के द्वीप" शेखर एक जीवनी" अपने अपने अजनबी जैसे उपन्यासों से पल्लवित और पुष्पित हो गयी।

अज्ञेय के उपन्यास

अज्ञेय का उपन्यास क्षेत्र में आविर्भाव भारत के स्वतंत्रता संग्राम का समय है । रचनाकार की संवेदनायें युगीन भावबोध से बन्धी हुई होती है, इसलिए प्रत्येक युग का सर्जनात्मक साहित्य युगीन भावबोध और परिस्थितियों का विश्लेषणात्मक स्वरूप प्रस्तुत करता है, अधिकतर ऐसा देखा जाता है कि रचना की प्रेरणा प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभावों से स्थापित होती है । कभी कभी यह प्रभाव अन्तराष्ट्रीय परिस्थितियों से अपना सम्बन्ध रखता हुआ दिखाई पडता है, हिन्दी उपन्यास के सम्बन्ध में यह बात एक सीमा तक सत्य साबित होती है । विशेषकर नये साहित्य के अंकुर अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा से सींचे हुए लगते हैं । अज्ञेय के पहले उपन्यास " शेखर एक जीवनी" में परिस्थितियों के प्रति उनका विद्रोह विशेष उभरता है । शेखर के चरित्र [illegible] विद्रोह, [illegible] का विद्रोह [illegible] पात्र व्यक्ति मन का विद्रोह है ।

युद्धोत्तर परिस्थितियाँ

"दूसरे महायुद्ध के समय या वहाँ आते आते हिन्दी के उपन्यासकार अधिक जागरूक हो गया था । वह अपने सीमित दायरे को तोडकर विश्वमानवता के जीवन की विसंगतियाँ एवं विडंबनाओं से अपना सम्बन्ध जोडने केलिए उतावला होने लगा था । यहाँ से एक नई जिज्ञासा उसको अनुप्रेरित करती नजर आती है । उसे ऐसे लगने लगा कि वह उस निखिल मानवता का अंग है जो पीडित है आक्रांत है और जंजीरों से बन्धी हुई हो । मुक्ति और विद्रोह का स्वर यहाँ से शुरू होने लगता है । इस दृष्टि से देखने पर दूसरे महायुद्ध ने हिन्दी उपन्यासकार के रचना क्षेत्र को अधिक प्रभावित किया । दूसरे शब्दों में दूसरे महायुद्ध के विनाशकारी परिणामों से आक्रांत समाज के प्रति सहानुभूति प्रकट करने केलिए वह हर संभव कोशिश करने लगा "विश्व की परिस्थितियाँ भी उसे नये ढंग से सोचने केलिए बाध्य करने लगी । यद्यपि भारत में युद्ध की विभीषिका यहाँ थी और यहाँ यहाँ के लोग उन परिस्थितियों से परिचित नहीं थे फिर भी रचनाकार को

मानसिक प्रक्रिया उन बातों को आत्मसात करने केलिए तड़प उठी थीं । यह तड़पन जिज्ञासा और मानववादी भावबोध रचना के नये आयामों के उद्घाटन करने में सहायक सिद्ध हुए । इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दी का उपन्यासकार अपने सीमित परिवेश से मुक्त हो गया और ऐसे प्रसंगों का चित्रण करने लगा जो भारतीय दृष्टि से न स्वाभाविक एवं सार्थक थ ।

युद्ध की विभीषिका के साथ जो स्थितियाँ पाश्चात्य देशों में जन्म लेने लगी थीं वे परोक्ष रूप में एक नये समाज को जन्म दे रही थी जो प्राचीन मान्यताओं को नकारने केलिए विवश था । महायुद्ध ने उन सारी आस्थाओं को तोड़ डाला । जिनके ऊपर पुराना समाज बसा हुआ था । सत्य की जीत होगी, धर्म हमेशा बना रहेगा । [illegible] व्यक्तियों का मंगल होगा आदि जो प्राचीन विश्वास थे वे युद्ध के खण्डहर के नीचे दफनाए दिये गये । क्योंकि लाखों निरपराधियों के खून से युद्ध के नये इतिहास को लिखा था । उपन्यास के बल पर विजय की झंडा फहराने का प्रयास किया था । जीवन को बिलकुल मूल्यहीन एवं भयग्रस्त बना दिया था । ऐसी स्थिति में केवल मूल्यों के महत्व के बारे में सोचने केलिए नयी पीढ़ी केलोग विवश हो गये थे । उपन्यासकार भी इसी पीढ़ी का निकला था । इस कारण दूसरे महायुद्ध के बाद रचे गये उपन्यासों में आस्था का पतन, निषेधात्मक दृष्टि, नये मूल्यों की खोज और जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टि आदि दिखाई पड़ने लगी ।

पुराने मूल्यों के खंडहरों से नये समाज की मान्यताओं को ढूँढ निकालने का प्रयास यहीं से शुरू होता है । आलबर्ट कामू सार्त्र जैसे साहित्यकारों ने इन्हीं परिस्थितियों में जीवन की निरर्थकता का अपनी रचनाओं के माध्यम से उभारकर रख दिया है । इन साहित्यकारों की दृष्टि दूसरे महायुद्ध के बाद और उसके साथ घटी हुई घटनाओं से प्रभावित थी । हिटलर के "कान्सेन्ट्रेशन कांपों" में घटित होनेवाली अमानवीय घटनायें किसी भी संवेदनशील व्यक्ति के अन्तःकरण को झकझोर करने केलिए पर्याप्त थी । किसी भी क्षण मौत का संदेश लेकर आनेवाले हवाई जहाज और बमों की बौछार जीवन को बिलकुल निस्सार और मूल्यहीन

बनाती रही । ऐसी स्थिति में उनको लगने लगा कि जीवन मृत्यु का उपहार है और मृत्यु किसी भी वक्त उसको छीन [illegible] ती है । इस मृत्युबोध के भार के नीचे दबे हुए मनुष्यों की निराशा, कुंठा और संत्रास नये ढंग से उपन्यासों में प्रस्तुत किया जाने लगा । पाश्चात्य साहित्य की इस नई [illegible] धारा से हिन्दी उपन्यासकार भी एक सीमा तक प्रभावित होने लगा ।

[illegible] मू[illegible] की [illegible]

पश्चिम के अनुकरण में पूर्व में भी नये मूल्यों की खोज शुरू हुई । [illegible] खोज अस्थायी रूप में कुछ ऐसी मान्यताओं को जन्म दिया जो सामाजिक जीवन केलिए न तो सहाय[illegible] थी न जीवन के शाश्वत मूल्यों पर आधारित थी । [illegible] ऐसे [illegible] त्रों का चित्रण होने लगा जो तत्कालीन मानसिक उच्छृंखलता का [illegible] मात्र प्र[illegible] करते रहे । निराशाजन्य परिस्थितियों में सेक्स के प्र[illegible] भी मनुष्य ने नयी व्याख्या प्रस्तुत कर दी पाप और पुण्य की जो प्राचीन मान्यतायें थी, वे सब उखाड़कर फेंक दी गयी । संक्षेप में नयी मान्यताओं का अन्वेषण एक लंबी यात्रा का आरंभ मात्र था । बुद्धिजीवियों को लगा कि लक्ष्य तक पहुँचना कठिन है । यात्रा के साथ साथ मंज़िल भी बदलते गये और रास्ते बीहड होते गये [illegible] कभी उपन्यासकार की आवाज़ वीरान में गूँजने वाली अकेली और [illegible] आवाज़ लगने लगी । एक दृष्टि से देखा जाय तो ताल लय से हीन इस स्वर से ही अत्यंत [illegible] आधुनिक उपन्यासों का [illegible] रंभ होता है ।

कुल मिलाकर पाश्चात्य [illegible] में दूसरे महायुद्ध के बाद की परिस्थितियाँ एक ऐसे समाज को जन्म देने लगी जो कई तरह की कुंठाओं से पीड़ित था । जीवन की अज्ञेयता ने क्षणों के ऊपर भरोसा रखने केलिए लोगों को विवश कर दिया था । इसलिए जीवन के सम्यक स्वरूप को न देखकर उसके खंडित स्वरूप को ही प्रस्तुत करने केलिए साहित्यकार बाध्य सा हो गया । यहाँ से क्षणिक जीवन की संवेदनाओं का चित्रण शुरू होता है । व्यक्ति बस क्षणों की छाया में जीवन बिताते चित्रित [illegible]

का प्रभावात्मक चित्रण प्रस्तुत करने में असमर्थ था । दूसरे महायुद्ध के बाद लिखे गये पाश्चात्य उपन्यासों में यह बात बहुत ही स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है ।

महायुद्धोत्तर पाश्चात्य उपन्यासों में संत्रास की जो परिस्थितियाँ चित्रित की गई है, वे महायुद्ध की ही देन है । क्षणों के भरोसे पर जीवन बितानेवाले मनुष्य के पास संत्रास और आकांक्षा ही बाकी रह गयी थी । भय और मृत्यु के बोध ने उनके व्यक्तित्व के खंडित कर दिया था । क्षणवाद को लेकर चलनेवाली दार्शनिक दृष्टि ने एक हद तक जीवन को लक्ष्यहीन और अर्थहीन बना दिया था । इसके साथ-साथ शून्यताबोध की भावना और एक अनजान विवशता मनुष्य के मन को तोड़ने लगी । काफ्का, कामू जैसे उपन्यासकारों की रचनाओं में जीवन की निरर्थकता का काफी गहरा चित्रण प्रस्तुत किया गया है । उनके पात्र एक ऐसे संसार में जीते हुए नज़र आते हैं । जहाँ किसी भी कार्य का कोई भी पारिनिश्चित अर्थ नहीं होता । इस अर्थहीनता के बीच जीने केलिए विवश किये गये पात्रों में उपन्यासकारों ने आधुनिक जीवन की विसंगतियों का और विडंबनाओं का स्वरूप उभारा दिया है । काफ्का का "कासिल" और अल्बेर कामू का "आउट साइडर" आदि उपन्यास इसके उदाहरण है ।

<u>टूटते संबंध</u>

युद्धोत्तर परिस्थितियों में पाश्चात्य देशों के पारिवारिक जीवन में भी परिवर्तन सा होने लगा । परिवार का महत्व कम होने लगा था । जीवन की अर्थहीनता से आक्रांत व्यक्ति परिवार के बीच जीवन बिताते हुए भी अकेलापन महसूस करने लगा । और उसे ऐसा लगा कि परिवार का कोई विशेष अर्थ ही नहीं यहीं से अलगाव की भावना शुरू हुई, उनके इस अलगाव की भावना उनके बीच काम करती रही । और पति-पत्नी इन संबंधों के बावजूद अजनबी से बन गये । युद्धोत्तर समाज में दृष्टिगत होनेवाली इस अलगाव की भावना ने नयी समस्याओं को जन्म दिया ।

भारतीय जीवन पर पड़ने लगा । विशेषकर साहित्य के क्षेत्र में पाश्चात्य देशों की सी समान परिस्थिति तो यहाँ विद्यमान नहीं थी । फिर भी गुलामी, शोषण बेरोज़गारी और अशिक्षा की समस्याओं ने यहाँ के जीवन को भी नारकीय बना दिया था । यहाँ के बुद्धिजीवी इन परिस्थितियों में नये ढंग से सोचने लगे थे । प्राचीन मान्यताओं को तोड़कर संघर्ष के स्वर को सबसे ऊपर स्थापित करने का प्रयास उनका लक्ष्य बन गया था । अज्ञेय जैसे उपन्यासकारों की सर्जनात्मक चेतना इन परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी । इसलिए परतंत्र भारत के जीवन की मजबूरियों से लिए हुए कुछ जीवित व्यक्तियों की प्रतिक्रियाओं को पुकार ... का प्रयास उन्होंने अपने उपन्यासों में किया है

स्वत्व का अन्वेषण

अज्ञेय के उपन्यासों में दिखाई पड़नेवाले पात्र जैसे भारत के आम लोगों के प्रतिनिधि तो नहीं है । एक सीमा ... वे प्रतीकात्मक तो लगते है । अज्ञेय ने ही अपने आत्मनेपद में लिखा है "नदी के द्वीप" समाज के जीवन का चित्र नहीं है, एक अंग के जीवन का है, पात्र साधारण जन नहीं है, एक वर्ग के व्यक्ति है और वह वर्ग भी संख्या की दृष्टि से अप्रधान है ।" उनके मानसिक व्यापारों का जो स्वरूप उपन्यासकार ने प्रस्तुत किया है, वह अवश्य ही असाधारण है पाश्चात्य पात्रों की तुलना के दृष्टि देखा जाय तो ये पात्र असाधारण तो नहीं है । आज के भारतीय समाज में भी अज्ञेय के पात्रों को देखना उतना मुश्किल की बात नहीं है । अज्ञेय ने भोगे हुए यथार्थ का सम्बल लेकर अपने पात्रों को स्वाभाविक सिद्ध करने का प्रयास किया है । वैसे भारतीय समाज के उच्चस्तरीय व्यक्तियों के मानसिक व्यापार ही यहाँ पर चित्रित किये गये लगते है । जनजीवन की दृष्टि से देखा जाय तो इनके विचारों को और नयी मान्यताओं के अन्वेषण को एक बौद्धिक प्रयास मात्र ही कह सकते हैं । विशेषकर "शेखर एक जीवनी" के शेखर "नदी के द्वीप" के भुवन और रेखा जैसे पात्रों के विचार नयी मान्यताओं के अन्वेषण में सहायक तो सिद्ध होते हैं । परन्तु जीवन की सरल स्वाभाविक संवेदनाओं के अन्वेषण में सहायक तो

समीचीन नहीं लगता ।

उपन्यासकार अज्ञेय ने नयी पीढ़ी के बुद्धिजीवियों के असंतोष और आक्रोश को शब्दबद्ध करने का प्रयास तो अवश्य किया है । लेकिन इस प्रयास को यथार्थ की भावभूमि से जोड़कर देखते समय काफी असंतोष का अनुभव पाठक को होने लगता है । उपन्यासकार ने अपनी रचनाओं के माध्यम से नये युगबोध को स्थापित करने की कोशिश की है । इस यत्न में वे कहाँ तक सफल हुए हैं । और औपन्यासिक अभिव्यक्तियों की सीमायें कहाँ आकर रुकती है आदि बातें विचारणीय हैं । वैसे देखा जाय तो अज्ञेय एक विभाग के प्रतिनिधि तो अवश्य माने जा सकते हैं । परंतु समूचे भारतीय जीवन का प्रतिनिधित्व करने में उनके पात्र कहाँ तक सफल हुए है यह विवादास्पद विषय है ।

ऊपर के इस विवादास्पद विषय का उत्तर अज्ञेय ने ही अपने "आत्मने" में दिया है "उपन्यास अनिवार्यतः पूरे समाज का चित्र हो यह माँग बिल्कुल गलत है उपन्यास की परिभाषा केबारे में यह भ्रान्ति {जो देश में या कम से कम हिन्दी के काफी फैली हुई मालुम होती है} साहित्य के सामाजिक तत्व को गलत समझने का परिणाम है ।"

"नदी के द्वीप" उपन्यास के बारे में अज्ञेय ने ही यह कहा है "नदी के द्वीप" उस समाज का उसके व्यक्तियों के जीवन का जिसका वह चित्र है, सच्चा चित्र है ।

उपन्यासकार की रचना की भूमिका पाश्चात्य जीवन दर्शन और विचार पद्धति से अधिक प्रभावित है । अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि से देखा जाय तो यह सीमाओं के बन्धनों को तोड़कर विश्वमानव के संवेदनाओं को स्वरबद्ध करने का प्रयास मात्र है । शायद अज्ञेय ने अपने भोगे हुए यथार्थ को इस परिप्रेक्ष्य में ही प्रस्तुत करना अधिक तर्कसंगत महसूस किया होगा । अंतर्राष्ट्रीय मान्यतायें और वैचारिक पद्धतियों के आधार पर देखा जाय तो अज्ञेय की कल्पना और उनके पात्र रंगीन दिखते है, परन्तु पूरी भारतीयता की दृष्टि से वे प्रभावात्मक नहीं है । वैसे नये मूल्यों का

अज्ञेय के उपन्यासों में व्यक्ति की स्वतंत्रता और विद्रोह के स्वर

उपन्यास के क्षेत्र में श्री अज्ञेय का आगमन नये युग के आरंभ का सूचक है । गतिशील समाज की अनदेखी भाव-भंगिमाओं को एक विचार की सूक्ष्मता गोपनीयता के साथ अज्ञेय ने अपने उपन्यासों में उतार दिया है । प्रेमचन्द ने जिस औपन्यासिक शिल्प और संवेदनशील इतिवृत्त का विधान किया था उसको समसामयिक सामाजिक मान्यताओं के अनुसार नया मोड देकर नये भावबोध से सींचकर अज्ञेय ने जिस औपन्यासिक संसार का निर्माण किया है वह अवश्य ही हिन्दी उपन्यास की एक दूसरी मुद्रा को प्रस्तुत करता है । वैसे अधिकतर समीक्षकों का यह मत है कि आधुनिक उपन्यास के कथ्य और शिल्प के प्रारंभिक स्वरूप का दर्शन गोदान के अंतिम दृश्यों से होने लगता है । प्रेमचन्द ने अपने अंतिम उपन्यास गोदान की अंतिम पंक्तियों में एक अनदेखी कहानी कहने की कोशिश की थी । यह कहानी परिवर्तन की है, विद्रोह की है, व्यक्ति स्वतंत्रता की है और आनेवाले समाज की बदलती मान्यताओं की है ।

सामाजिक यथार्थ का चित्रण करनेवाले उपन्यासकार देशकाल और परिस्थितियों की गहराईयों में गोता लगाते हैं और समसामयिक जीवन की विडंबनाओं का चित्रण प्रस्तुत करते हैं । ऐसे उपन्यास परिवेश के प्रति अधिक सजग होते हैं । वैसे जनसाधारण की आशायें और आकांक्षायें ही इनमें ज्यादातर मुखरित होती है । जो उपन्यासकार सामाजिक यथार्थ से अपने को बन्धा हुआ नहीं महसूस करता उसकी दृष्टि बहुत ही भिन्न होती है, अज्ञेय ऐसे उपन्यासकारों के प्रतिनिधि माने जा सकते हैं । चुने हुए पात्रों की विशिष्ट संवेदनाओं को मनोविश्लेषणात्मक आधार पर प्रस्तुत करने के कारण अज्ञेय के पात्र एक हद तक अजनबी बन गये हैं । लेकिन इन अजनबी पात्रों के माध्यम से उपन्यासकार ने सामाजिक यथार्थ के परवाह किये बिना विद्रोह का स्वर बुलन्द किया है । सामाजिक नीतियों को और मान्यताओं को चुनौती देनेवाले ये पात्र असली अर्थ में विद्रोही है । पात्रों के इस विद्रोहीपन ने उपन्यासों को नये आयाम प्रदान

अज्ञेय के उपन्यासों में आनेवाले पात्र अहीन्द्रिय भावों को लेकर विद्रोह का झंडा उठाते हैं । "शेखर एक जीवनी" का नायक शेखर इसका सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता हैं । अज्ञेय के शेखर के व्यक्तित्व में यह प्रवृत्ति स्पष्ट लक्षित होती है ।

शेखर एक जीवनी

कथावस्तु :-

"शेखर एक जीवनी" शेखर नामक व्यक्ति के बचपन से लेकर अंत तक की कथा है । यह एक आत्मकथा या जीवनी नहीं है अपितु औपन्यासिक विशेषताओं से पूर्ण रचना है । "शेखर एक जीवनी" के प्रथम भाग का प्रकाशन सन् 1944 में हुआ था । यह शेखर के वैयक्तिक संघर्ष की कथा है । इसके पीछे राष्ट्रीय आन्दोलनों की पृष्ठभूमि है । यह उपन्यास चरित्र प्रधान है । संपूर्ण कथा में स्त्री-पात्र ही अधिक है । स्त्री-पात्रों में शेखर की माँ, बहन सरस्वती, मौसेरी बहन शशि तथा घर के बाहर के दायरे में शारदा, शान्ता आदि आती हैं । बचपन की छोटी घटनायें एवं जिज्ञासायें उचित समाधानों के अभाव में ग्रन्थियों का रूप ग्रहण कर लेती है और बडे होने पर यही ग्रन्थियाँ शेखर के चरित्र में और घृणा के जन्म का आधार बनती है । शेखर एक जीवनी का पहला भाग पढने से हम मालूम कर सकते हैं कि इसका नायक शेखर को अपने बचपन में माँ से घृणा है और पिता से अधिक प्यार है । साधारणतः इसी प्रकार पिता से अधिक प्यार होनेवाले लडका, मनोवैज्ञानिक आधारों पर देखने पर विचित्र स्वभाववाला हो जायेगा ।

"शेखर एक जीवनी" उपन्यास पृष्ठावलोकन की पद्धति पर प्रस्तुत किया गया है । इस उपन्यास में नायक शेखर को फाँसी का दण्ड दिया है न्यायालय से । फाँसी के निकट के अंतिम दिनों में वह ओजस्वी, विद्रोही स्वाभिमानी नायक पीछे मुडकर देखता है । अपने बचपन से लेकर वहाँ तक के जीवन का विवरण एक आत्मकथात्मक शैली में कहता है । "शेखर एक जीवनी" के पहले भाग में उसके बचपन से लेकर ... तक की कथा है । शेखर ... के ... में अधिक

अपने बचपन के समय शेखर की माँ शेखर के समक्ष ही कहती है कि सच पूछा जाय तो वह इसका भी विश्वास नहीं करती । माँ के उस बात से दुखित होकर शेखर उसके पश्चात योग्य बनने की प्रतिज्ञा करता है । एक दिन वह अपने पिता का चेक भुना उसके मासिक वेतन का रुपया माँ को देने केलिए आँगन में आने के वक्त माँ कहती है "आँचल ला तब देऊँगी क्या तुम कुछ कमाके लाओगे", माँ के इस प्रकार के व्यवहार से ... छोटी सी बातों पर भी शेखर के मन में विद्रोह उभरता है । वह कहता भी है, मुझे विश्वास है कि विद्रोही बनाये नहीं उत्पन्न होते है । पढाई में वे अपने बडे भाई की तुलना में अधिक समर्थ रहे थे । ... वर्ष की उम्र में ही वह पुस्तक लिखने की कोशिश में था । वह एक सचित्र पुस्तक तैयार करने के श्रम में लगा रहा था । उसकेलिए पिता की सहायता उसे स्वीकार्य न था । ... वह अपनी बहिन से कागज़ लिया लेता है । और प्रत्येक पृष्ठ पर अलग अलग फूल चिपका कर एक पुस्तक तैयार करता है । ... की पुस्तक से उसका वृत्तान्त भी लिखता है । उसके बाद छोटी मोटी कवितायें लिखता है । शेखर के बचपन की साथी है शशी । शशी की माँ शेखर की माँ की बहिन के समान थी । वह अपनी ... के साथ शेखर के घर आकर बातती थी । शेखर और शशी दोनों एक साथ खेलती थी, खाती थी । शेखर की बहिन का नाम सरस्वती था और वह शेखर से पाँच वर्ष बडी थी । शेखर की बहिन सरस्वती उसे पढाती थी । खेल में बहुत झगडा करती थी । सरस्वती शेखर से पढाई की डाँटती थी।सरस्वती के प्रति भी शेखर के मन में घृणा थी । बाद में वह घृणा स्नेह में बदलती है । शेखर के भाई था ईश्वरदत्त । पतंग उडाना शेखर को बहुत पसंद था । पिता उसे बुलाने पर वह खेल खत्म करके ... नहीं आता था । पिता उसे बुरी तरह पीटता था ।

शेखर एक दिन "सत्य हरिश्चन्द्र" नामक नाटक देखने गया । इसी नाटक से उसपर असहयोग आन्दोलन का प्रभाव पडा । उसके मन में विदेशी वस्त्रों के प्रति अरुचि उत्पन्न हुई । अब शेखर पर जो गाँधीवाद का प्रभाव था वह अधिक समय तक न रहा । उसके मन में अनेक प्रकार के विचार आना स्वाभाविक था ।

पास आने वाले व्यक्तियों से अनेक [illegible] यें पूछती थी । उसकी बहिन के जन्म होते समय वह माँ से पूछता था बच्चा कहाँ से जन्म होता है । लेकिन उनकी शंकायें उचित समाधान के बिना शंकायें हो रहीं । इन जिज्ञासाओं का समुचित समाधान न होने के कारण शेखर में प्रतिक्रियायें उत्पन्न होने लगी । वह धीरे धीरे बुराई की ओर जाने लगा । वास्तव में शेखर बचपन में प्यार की आकांक्षा है लेकिन उसे स्नेह का अभाव ही अनुभव होता था ।

शेखर किशोरावस्था से युवावस्था में प्रवेश करते करते उसके मन में स्त्री संबंधी रहस्यों को ढूँढ निकालने की अभिलाषा आती है । वह बड़े बहिन सर सरस्वती के पास अधिक समय खर्च करने लगता है । सरस्वती उसे [illegible] बहिन और साथी है । सरस्वती की शादी निश्चित हो जाता है । तब शेखर को बहुत अधिक दुःख [illegible] ता है । वह बुखार ग्रस्त हो जाता है । वह बुखार तो न्यूमोनिया में बदल जाता है । उसके बाद के दिनों वह दुःखित रहता है । सरस्वती के तार आता है । तार में यही सूचना थी कि उसे ब[illegible] हुई । कुछ समय बाद उसके पत्र आया कि आठ मासी होने के [illegible] घण्टे होकर मर गया । आठमासी बच्चे के बारे में [illegible] रसोइये से पूछता है । रसोइया से उसका समाधान भी मिलता । इतने में शारदा नामक एक लड़की से शेखर का परिचय होता है । पहले उसके व्यवहार से भी शेखर को घृणा होती है । बाद में वह घृणा प्रेम में बदल जाता है । कुछ समय बाद शारदा उसके जीवन से मुड़कर चलने लगती है । तब शेखर एक परीक्षा केलिए लाहौर जाता है । लाहौर में शेखर अपनी मौसी विद्यावती के साथ रहता है । वह शशी से मिलता है । फिर भी शेखर के मन में शारदा की याद आती है । शेखर के घर के पास के घर में एक तपेदिक की बीमारी [illegible] स्त्री थी । उसका नाम शांती है । उससे शेखर दया के साथ व्यवहार करता था । बहुत समय तक बातें करती थी ।

कुमार नामक उसका एक सखा था । कुमार शेखर से सहृदयतापूर्ण व्यवहार किया । कुमार और शेखर होस्टल से सिनेमा [illegible] आदि

शेखर वहाँ अछूतों के बीच खूब परिचित हो गया और उन्हीं के साथ दह खाता-पीता था । "शेखर एक जीवनी" के पहले भाग की कथा यहाँ रूकती है और बाद के 1944 में "शेखर एक जीवनी" दूसरा भाग का प्रकाशन हुआ । दूसरे भाग के आरंभ में शेखर अपने माता पिता और भाईयों को छोड़कर पंजाब जाता है । पंजाब जाकर वहाँ अपनी पढ़ाई करता है ।

पंजाब में अध्ययन करते समय वहाँ मिस ग्रौल, माणक आदि स्त्रियों से उसका परिचय हुआ । मिस ग्रौल कालेज में अवैतनिक रूप से कालेज में लेक्चर करती है । वह आधुनिकता से ओतप्रोत नारी है । पुरुषों के साथ उन्मुक्त व्यवहार करना उसे प्रिय है । लेकिन एक घटना से शेखर उसके साथ व्यवहार छोडता है । शेखर वेश्याओं के मुहल्ले में भी पहुँच जाता है । वहाँ से सब देखकर समझने पर उसके मन में शेखर के प्रति विद्रोह आता है । शेखर वहाँ से काश्मीर जाता है । इसी समय शशी के पिता की मृत्यु हुई । शेखर उसके दुःख में भागीदार बनकर वहाँ जाता है । शेखर ने निश्चय किया कि वह शशी के यहाँ ही रहेगा । लेकिन शेखर वहाँ भी सुरक्षित न था । पड़ोस की स्त्रियों के वार्तालाप में शशी के घर में शेखर के समान एक युवक का रहना प्रधान विषय बन गया । वहाँ भी शशी की बात मानकर शेखर कालेज में एम. ए. करने लगे । कालेज में पढ़ते समय पुलिस के सिपाहियों के विरुद्ध कुछ काम करने पर एक दिन पुलिस के सिपाहियों ने उसे बन्दी बना लिया ।

"शेखर एक जीवनी" दूसरे भाग का द्वितीय खण्ड बन्धन और शशी यहाँ से शुरू होता है । यहाँ उपन्यासकार थाने में है । पाँच और व्यक्तियों के साथ उस पर मार-पीट, हमला, हिंसा के लिए साजिश, सरकारी अफसरों की हत्या का प्रयत्न, सरकारी अफसर के कार्य में अवरोध और मुकदमें के संबंध रखनेवाली सामग्री छिपाने के आरोप लगे है । उसे जेल में भेज दिया गया । जेल में उसका परिचय विद्याभूषण से हुआ जो असहयोग के जमाने में भी जेल आ चुका था । जेल में रहते समय शशी उसे देखने आती थी । शशी के एक पत्र से उसे मालूम हो

जेल में बाबा मदनसिंह, हत्यारा रामजी आदि से वह परिचित हो गया । एक दिन रामजी को फाँसी हो गयी और शेखर दिनों अपनी कोठरी के अन्तर्मुखी रहा । उन दिनों शेखर के मुकदमों के फैसला होनेवाला था । मजिस्ट्रेट को लगा है कि उसके विरुद्ध गवाही इतनी दृढ़ नहीं है कि सजा दी जाय । अंत में शेखर को फाँसी नहीं जेल से मुक्ति मिली । जेल से बाहर आने पर शेखर के मन में विचारों का तूफान उठने लगा ।

जेल से बाहर आने पर ही "शेखर एक जीवनी" के दूसरे भाग का तृतीय खंड शशी और शेखर का आरंभ है । जेल के फाटक पर खड़े होकर शेखर कुछ सेकंड तक सोच रहा है उसे क्या करना है । उसको मानसिक अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण ठीक मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर किया है । लेखक ने लिखा है कि फाटक के बाहर खड़ा होकर शेखर कुछ क्षणों केलिए किंकर्तव्यविमूढ हो गया । क्षण भर तो उसे ऐसा भा, मानो वह फिर जेल लौट जाना चाहता है, बाहर आने में उसकी अनिच्छा है । फिर उसने अपने पैरों को आग्रह किया कि वे आगे बढ़ें । वहाँ से साहस बटोरकर वह प्रोफेसर हाथ के घर पहुँचता है । प्रोफसर होथ के घर से शेखर शशी के घर जाता है । शशी के घर पहुँचने पर बैठक में ही उसका मिलन शशी के पति रामेश्वर से भी हुआ । उसने शिष्टाचार के साथ ही शेखर का स्वीकार किया और शशी को शेखर के आने की सूचना देता है । रामेश्वर शेखर से शशी और रामेश्वर के साथ उनके घर में रहने को बार बार कहता है । लेकिन शशी के मौन में शेखर के मन में निराशा का भाव उभरता है । माता की बीमारी की सूचना शशी से मिलने पर भी शेखर माता को देखने केलिए घर जाने को तैयारी नहीं करता है । वह कालेज होस्टल वापस जाना चाहता है । जेल से बाहर उतरने पर भी उसका आग्रह सब कुछ बदलने का था । वह कहता है कि सब चीज़ उलट-पुलट कर रखेगा, कुछ टूट-फूट जायेगी तो वह कहेगा, वे चीज़ पुरानी सड़ी हुई थी । जेल से वापस आने पर उसे मालूम हुआ कि उसकी कई पुस्तकें दूसरे लोग ले गए । उसके घर का किराया और होस्टल के बिल चुकाने की बात एक महीने के बाद ही उसे याद आता है । लेकिन

चाहता है । लेकिन उसके पुस्तक लेकर जा मिलने पर किसी भी प्रकाशन उसे स्वीकार नहीं करता है ।

इतने में शेखर की माँ बीमारी से मर जाती है । वह अपने घर आता है । शेखर के पिता उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट करता है । लेकिन उसका उत्तर यह था कि वह जीवन भर विवाह नहीं करेगा । शेखर शशी के घर जाता रहता था । और शशी भी शेखर के घर आती थी । एक दिन वह साहित्य रचना के बारे में और दूसरी अनेक बातों के बारे में कहते रहने पर देर हो गया । शशी घर पहुँचने पर रामेश्वर कुपित सा हो गया । शेखर एक जीवनी" दूसरे भाग के अंतिम खंड धागे रस्सियाँ, गुंझर है और इस खण्ड के प्रारंभ में शेखर बहुत अधिक प्रसन्न दिखाई पडता है । शशी से प्रोत्साहन मिलता है । शशी को अपने पति रामेश्वर अपने घर से निकाल देता है । वह शेखर के पास आती है । शेखर के पूछने पर रामेश्वर के माता-पिता और घरवाले भी उसे गालियाँ देते है । तब से शशी शेखर के घर में रहती है । मौसी विद्यावती शेखर के यहाँ आकर उसे एक डाक्टर के पास ले जाती है । मौसी वापस जाती है । शशी शेखर के घर में ही रहती है । शेखर दिल्ली जाकर कुछ दिनों तक पेंटिंग के काम में लगे रहे और उससे कुछ पैसे कमाये । इसी प्रकार दिन बीते रहते हैं । उन दिनों में क्रांतिकारियों की गति बढती रहती है । भगत सिंह जैसे नेताओं को फाँसी हो जाने के बावजूद राष्ट्रीय आन्दोलन शक्तिमान हो रहा है । इसी बीच शशी बीमार पडती है । शेखर शशी के पास बैठकर उसकी सेवा शुश्रूषा करता है । शशी की बीमारी अधिक मूर्छित हो जाती है । शशी एक पत्र में शेखर को लिखकर देती है कि उसकी अभिलाषा है कि शेखर अविराम गति से लिखता रहे तथा उसका भविष्य उज्ज्वल रहे । शशी ने अपने पत्र में इसी प्रकार लिखा था । उस अपने भविष्य की खोज में यदि तुम्हें मेरी याद आये तो अपने को इसलिए अपराधी मत ठहराना कि मेरे बिना तुम अकेले आगे चल सके, सके, तुम चल सके वह मेरी पराजय नहीं मेरी अन्तिम विजय होगी । इसके दिनों बाद शशी की मृत्यु होती है । शेखर एकाकी रह जाता है । उसके बाद एक साथी के साथ वह

के विचार इसी प्रकार हैं जीवन में उसकी एकमात्र सहारा शशि के बारे में हो, उस छाया के प्रति वह सोचता है, "छाया" तुम्हें भूलने नहीं जाता, तुम साथ चलो - पहले गौरी के पास और गौरा के पास, फिर आगे । कर्म में विराम नहीं, शशी कर्म तुम हो, चिरन्तन प्रेरणा - चिरन्तन क्योंकि मुक्त और मोक्षदा ----।" मानव हृदय के भीतर से भरनेवाली यह आंतरिक संघर्ष, द्वन्द्व के साथ "शेखर एक जीवनी" का दूसरा भाग खतम हो जाता है । इसके तीसरा भाग लिखा नहीं है । इसका दोनों भाग अलग अलग लेने पर भी अलग अलग उपन्यास हो सकता है । मनोवैज्ञानिक प्रणाली से पहले भाग में शिशु शेखर के मन के व्यवहारों का यथार्थ चित्रण पहले भाग में है । तो दूसरे भाग में युवा और क्रांतिकारी नायक शेखर का मर्मस्पर्शी जीवन यात्रा है ।

शेखर का चरित्रगत अध्ययन (कथा का चरित्रात्मक विकास)

"शेखर एक जीवनी" की भूमिका में उपन्यासकार अज्ञेय ने कहा है "वेदना में एक शक्ति है जो दृष्टि देती है । जो यातना में है, वह द्रष्टा हो सकता है ------- शेखर" घनीभूत वेदना की केवल एक रात में देखे हुए "विजन" को शब्द-बद्ध करने का प्रयत्न है ।" "प्रस्तुत कथन से यह व्यक्त है कि वेदना मानव के जीवन में उसे शक्ति देती है । यही श्रेष्ठ उपन्यासकार अज्ञेय की राय है । शेखर क्रांति के परिणाम के रूप में अपने कालेज जीवन के समय उसे न्यायालय से फांसी का दण्ड देने का अनुरोध हो जाता है । तब वह अपने बीते हुए जीवन का स्वप्न देखता है । जेल के उन वेदना की छाया में उसका स्वप्न तीन सौ पृष्ठों का एक पुस्तक बन जाता है । वही "शेखर एक जीवनी" उपन्यास है ।

शेखर एक जीवनी" का केन्द्रीय विषय शेखर नामक एक कल्पित पात्र का चरित्र है । अज्ञेय ने स्वयं "आत्मनेपद" में लिखा है जैसे किस्ताफ में लेखक एक आत्मान्वेषी के पीछे उसका चित्र खींचता चलता है, वैसे ही मैं एक दूसरे

का मन कैसे बनता है । शेखर की चेतना इसी से आरंभ हुई ।

"शेखर एक जीवनी" की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं क्रांतिकारी अंततोगत्वा एक प्रकार के नियतिवादी होते हैं । लेकिन यह नियतिवाद उन्हें अकर्मा और निकम्मा बनानेवाला कोरा भाग्यवाद नहीं है । वह उसे आधार देकर कार्य करने की प्रेरणा देता है । इसमें यह "गीता" के कर्मयोग से एक सीढ़ी आगे होता है क्योंकि वह कर्ता को निरा निमित्त नहीं बना देता । जैसे क्रांतिकारी का नियतिवाद अटल नियति की स्वीकृति न होकर जीवन के विज्ञान संबंधी परंपरा पर आधारित गहरा विश्वास मात्र होता तो शायद सार्त्र से अधिक निकट होता है । "शेखर एक जीवनी" के क्रांतिकारी नायक ने अपने जीवन में इसी नियति के सूत्र को पहचानने का यत्न किया है ।

शेखर मानता है विद्रोही बनते नहीं उत्पन्न होते हैं । विद्रोह-बुद्धि परिस्थितियों से संघर्ष की सामर्थ्य, जीवन की क्रियाओं से, परिस्थितियों के घात-प्रतिघात से नहीं होती, वह आत्मा का परिवेष्टन नहीं है, उसका अभिन्नतम अंग है ।"

फ्रायड जैसे श्रेष्ठ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार निषेध और वर्जनाओं के स्वर शैशव में जितना होता है उतने ही बच्चे की मन उन रहस्यों की गहराइयों में पैठने की अभिलाषा आती है , शेखर के जीवन में यह मनोवैज्ञानिक तथ्य सत्य हो जाता है । अपने बचपन में माता-पिता उससे जो कुछ छिपाते हैं वह उसको ढूँढ निकालता है । उसके ज़ोर जीवन में यही खोज है । जो उसे न करने का उपदेश बड़ों ने दिया वह उसे ज़रूर करना है । "अतः उसका विश्वास था, जिस प्रकार एक लिये नाडी गान्धी को या रवीन्द्रनाथ ठाकुर को उत्पन्न करने केलिए सहस्र वर्ष का परिश्रम भी अधिक नहीं है, उसी प्रकार एक संपूर्ण और आदर्श विद्रोही को उत्पन्न करने केलिए ही एक समूची शताब्दी बल्कि एक समूची प्रकृति सफल हो जाती है ।"[16] शेखर के शैशव के जीवन और बाद की उसकी परिस्थितियों के

नहीं अपने चारों तरफ के सामा…क कुरीतियों के विरुद्ध विद्रोह करना चा…ा है । स्वयं …हीं कुरीतियों को ही वह अपने मानसिक संघर्ष पहचानता है । वह अ… ो से लड़ता है । अज्ञेय ने ही कहा है "शेखर निस्सन्देह एक व्यक्ति अभिन्नतम निजी दस्तावेज, ये रिकार्ड आफ परस्…न सफरिंग है, यद्यपि वह साथ ही उस व्यक्ति के युग-…र्ष का प्रतिबिंब भी … । उसमें मेरा …ाज और मेरा युग बोलता हूँ कि व… …रे और शे… र के युग का प्रतीक हैं । "[11]

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि शेखर …क व्यक्ति के समाज उसकी रचयिता अज्ञेय का समाज है, उस समाज का वैषम्य, कुरीतियाँ पीड़ा, दुःख, पात्र शेखर का अपना … भी है । यहाँ युग और समाज नहीं बोलता है । व्यक्ति शेखर से अज्ञेय बोलता है । अपनी व्यक्तिगत विद्रोह प्रकट करता है ।

शेखर में भी अहं और … …म की प्रबलता है । अहंभाव की प्रबलता शेखर को बचपन से ही वि…ो…ी बना देती है । परम्परा के प्रति …के मन में …ोह है … … विरोधी-भावों और … …ों … प्रति विद्रोह है । अज्ञा… के प्रति उनके मन में आकांक्षा है । इस आकांक्षा को व्यक्त करते हुए शेखर एक पत्र में लि…ा है "…ो कल्पित, ओ अज्ञात, … मैं मन में ही … देख पाता तुम …स पत्र को पढ़ो …ो … …र समझोगी ? मैं शेखर हूँ, मैं …ा हूँ, मैं जाने कब से तुम्हें …ढ रहा हूँ, तुम्हारी …ी प्रतीक्षा में हूँ तुम्हारे ही लिये है । तुम दिव्य … … में हो लेकिन क्या दिव्य लोक भी तुम्हें उसी तरह माँगता है जिस तरह मैं ?[12]

यहाँ शेखर की संवेदनाओं का चित्र इतना अधिक है कि इसमें समाज भूला-सा जाता है और व्यक्तिमन उभरकर आता है । व्यक्ति के मन की उलझन यही कथा का प्रवाह है । व्यक्ति के मन में दमित विकार पात्रों के व्यवहार और वार्तालाप … …र आता है । इसलिए यह कहना समीचीन है कि व्यक्तिवादी विचार धारा ही यहाँ प्रवाहि… है । सारेन कार्ल मार्क्स

अ.य पर प्रतिफलित है । सार्त्र के अनुसार व्यक्ति स्वतंत्र होना है और सहअस्तित्व ही उसी लिए अनुचित है । व्यक्ति कुण्ठाओं का अस्तित्व परिस्थितियों पर नहीं है व्यक्ति पर है ।

अहंभाव की प्रबलता शेखर को बचपन से ही विद्रोही बना देती है । मात्र तीन वर्ष के उम्र में लेटरबक्स पर घोड़े की तरह सवार होता है और डाकिया उसे उतारने को बाध्य करता है तो वह इस प्रकार कूदता है कि डाकिये के पैर कुचल जाता है । प्रतिशोध की यही भावना शेखर के व्यक्तिगत प्रतिशोध का परिचायक है । वह अजायबघर में चीता व्याघ्र को फाड़कर उसके भीतर भरे घासफूस को बिखेर देता है और हँसता है । शिशु शेखर को मालूम हुआ डरने से भय उत्पन्न होता है केवल एक घासफूस से भरा निर्जीव चाम से डरना मूर्खता है, शेखर के बचपन का यह विश्वास उसके सारे जीवन को दिशादेता रहता है । शेखर अपने लिए इस सूत्र की खोज करता है कि "जब भी कोई भयानक वस्तु देखो तब डरो मत । उसका बाह्य चर्म काट लो, उसके भीतर भरी हुई घासफूस निकालकर बिखेर दो और हँसो ।"[13] यह भावना शेखर की प्रमुख प्रेरणा बन जाती है । वह जीवन भर इसी सूत्र पर चलता है, जिसके फलस्वरूप वह दूसरों के सामने उद्धत विध्वंसक और हिंसक बन जाता है । उसके अंत में आतंकवादियों के दल में सम्मिलित होने की प्रेरणा का बीज भी इस घटना में निहित है । शिशु शेखर बन्धनों से घृणा करता है । शेखर को मृत्यु के प्रति उपेक्षा और निर्भयता का भाव है । उसके आसपास का संसार उसमें केवल बन्धनों की सृष्टि करता है । इसलिए ही वह प्रकृति प्रेमी हो जाता है । वह जान जाता है कि उसके अलावा एक और संसार है जिसमें सोचने को पा सकने का आवाध स्वतंत्रता है । जिसका एकमात्र नियम है वही होओ जो कि तुम हो । शेखर को स्वातंत्र्य की खोज की प्रेरणा मिलती है पक्षियों से उसको अपने बाग के माली से बाग और जंगल का भेद मालूम होता है । तब जंगल ही उसकी कल्पना का स्वर्ग बन जाता है जहाँ उन्मुक्तता और बन्धनहीनता होती है ।

शेखर की विद्रोही चेतना धीरे धीरे बाहरी परिस्थितियों से भी जुड़ने

महंगाई भेजता है, महामारी भेजता है और वही ईश्वर कुछ अच्छा करता है, वहीं बच्चा भेजता है जैसी परस्पर विरोधी बातें शेखर को आश्वस्त कर पाती । धीरे धीरे वह ईश्वर के अस्तित्व के प्रति शंकालु होता जाता है । स्वातंत्र्य की खोज ही शेखर के व्यक्तित्व की सबसे प्रमुख प्रेरणा है । वह पाले हुए पक्षियों को मुक्त कर देता है । शेखर घर के वन्य घुटनपूर्ण परिवेश से मुक्त होकर प्रकृति की उन्मुक्तता में शरण लेता है । स्कूल के कायदों और बन्धनों को अस्वीकार करता है । शेखर के स्वातंत्र्य की खोज अधिक व्यापक सामाजिक भूमि में प्रवेश करती है । देश में असहयोग की लहर आती है । अभी वह महसूस करता है कि उसका देश पराधीन है । इस पराधीनता से देश का उद्धार करने केलिए वह काम करता है । शेखर असहयोग आन्दोलन में भाग लेता है । विदेशी कपडे उतार कर राख कर देता है । दूसरों के साथ हाथ मिलकर वह गाँधीजी की जयकार करता है । एक दिन जब शेखर की माँ कहीं बाहर गई थी वह घर के सब विदेशी कीमती कपड़ों को जला देता है । इस केलिए वह पिटा जाता है । इस प्रकार स्वातंत्र्य का मूल्य चुकाना भी वह घर से ही सीखने लगता है जिसकी परिणति होती है फाँसी की सजा में ।

शेखर के मन में विदेशी के प्रति घृणा हो जाती है । वह जानता है कि उसकी शिक्षा अंग्रेज़ी में है जो अंग्रेज़ों की भाषा है जिन्हों ने देश को गुलाम बना रखा है, वह हिन्दी पढ़ना आरंभ करता है । बातचीत से भी सावधानी से अंग्रेज़ी शब्दों को त्याग देता है । शेखर कालेज में पढ़ते समय वह ब्राह्मण छात्रावास छोड़कर हरिजन छात्रावास में चला जाता है । वह अछूतों के मुहल्ले में बच्चों केलिए एक स्कूल खोलता है और वहाँ पढ़ाने जाता है । शेखर ऐंटिगोनास क्लब में जा मिलता है । वह अपने विद्रोह की अभिव्यक्ति ऐंटिगोनास क्लब के सामने करता है । क्लब के सदस्य स्वयं विवाह न करके स्त्रियों को स्वतंत्र और स्वाधीन बना देते हैं ।

"शेखर एक जीवनी" के पहले भाग में शेखर के जीवन के 17 वर्षों की कहानी है ... भाग में उसके ... [illegible]

आकांक्षायें स्कूल में उसके व्यवहार सब कुछ व्यक्त किये गये है । पर दूसरे भाग में आनेवाला शेखर असंगतियों और कलात्मक स्खलन का शिकार बना लगता है । लाहौर में बी. ए. में पढते वक्त शेखर काग्रेस के एक अधिवेशन में स्वयंसेवक के रूप में भाग लेता है और पुलिस द्वारा पकडा जाता है । उसके बाद दस महीने उसे हवालाती कैदी के रूप में जेल में बिताने पडते है । इस अवधि में वह बहुत कुछ सीखता है । अनेक प्रकार के भावों से घोर यातना, अकेलापन, संत्रास कुंठा आदि से गुजरता है । जेल की दीवारों के भीतर उसे स्वाधीनता और मुक्ति का सही अर्थ समझ में आता है । जेल में हत्यारा रामजी बोस कैदी के जेल जीवन से चिंतन मनन करके पीडाबोध से गुजरकर अपना सत्य प्राप्त करने वाला मदनसिंह सभी शेखर पर अमिट छाप छोड देते है । जब वह जेल से अनुभव लेकर बाहर आता है तो संकल्प करता है कि वह क्रान्ति करेगा, शशी से बातचीत करते हुए वह कहता है "कुछ करूँगा जिसे क्रांति कहते है । सब चीज़ उलट पुलट कर राख दूँगा, कुछ टूट-फूट जाएगी तो कहूँगा पुरानी सडी हुई थी ।"[14] वह लिखकर क्रांति करना चाहता है "जिसमें कथ्य गौण थी, उस जीवन को ज्वलंत रूप से जनता के आगे उपस्थित करना और उसको निमित्त बनाकर उग्र असंतोषकारी विद्रोहात्मक विचारों का प्रचार करना ही मुख्य उद्देश्य था ।"[15]

अज्ञेय के शेखर के संबंध में समीक्षकों के बीच बहुत सारा मतभेद है । स्वयं उसके जीवन दर्शन के संबंध में भी संक्षिप्त वक्तव्य प्रस्तुत करने में अज्ञेय भी असमर्थ है । आत्मनेपद में उन्होंने यह बताया है कि शेखर का जीवन-दर्शन "स्वातंत्र्य की खोज" पर आधारित है । इसलिए जितनी भी परिस्थितियों का सामना कर शेखर दिखाई पडता है । वे सब परिस्थितियाँ उस खोज की बाहरी रूप-रेखा मात्र प्रस्तुत करती है । एक स्थान पर अज्ञेय ने इस स्वातंत्र्य की खोज की बाहरी रूप-रेखा मात्र प्रस्तुत करती है । एक स्थान पर अज्ञेय ने इस स्वातंत्र्य की खोज की व्याख्या करते हुए कहा है "शेखर की स्वातंत्र्य की खोज टूटती हुई नैतिक रूढियों के बीच नीति के मूल स्रोतों की खोज है ।"[16] इसलिए शेखर की आजादी को सीमाबद्ध करना असंभव सा लगता है ।

शेखर के चरित्र में कई ऐसे प्रसंग आये हैं, जिनका भारतीय नीतिशास्त्र की दृष्टि से विरोध हो सकता है। प्रचलित नैतिकता के आधार पर देखा जाय तो शेखर पाप का साझेदार माना जा सकता है। लेकिन अज्ञेय पात्र को एक दूसरी दृष्टि से देखना चाहते हैं। प्रचलित नैति का समर्थन भर करने के लिए कला की साधना से कम मूल्य की तो व्यर्थ मालूम होती है।[17] नैतिकता की पुष्टि करने के लिए व्यक्तित्व और कला को मरोड़ना अनुचित बात है।

अज्ञेय के विचार में प्रचलित रूढ़ियों के प्रचरण के लिए व्यक्तित्व को खोना कला को त्यागना स्वीकार्य नहीं है। उपरोक्त विचार शेखर के विद्रोह को नैतिक मूल्यों से स्वतंत्र करके देखने के लिए हमें सलाह देते हैं। ऐसे स्थान पर शेखर ज्यादा कलात्मक जगत की सृष्टि बन जाता है। व्यक्ति शेखर का विद्रोह पिता-पुत्र के रिश्ते-नाते भाई बहन के आदि तक सीमित न होकर आतंकवादी चेतना तक व्याप्त होने लगता है। आतंकवादियों के समान वह भी देश की स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेता है। स्वतंत्रता संग्राम से उसका जो संबंध है वह स्वातंत्र्य की खोज की विशाल कल्पना से बन्धा हुई है। वह कहता है कि पु. रूढ़िगत विश्वास से संघर्ष करना उनका लक्ष्य है। इन कार्य-कलापों में भाग लेते समय वह अंत प्रेरणा के आधार पर काम करता है, एक दृष्टि से देखा जाय तो शेखर का आतंकवादी व्यक्तित्व ही माता-पिता के प्रति अथवा बहन के प्रति रतिभाव के जन्मदेती है। परम्परावादी प्रवृत्तियों को नकारने की गहरी इच्छा ही एक सीमा तक शेखर को विद्रोही बनाती है और वह विद्रोह आरंभ से ही उसके नस-नस में भरा हुआ है। इस उपन्यास में विद्रोह का परिणाम भयंकर है। वह शेखर के चरित्र को अत्यधिक आसक्तिपूर्ण व्यक्तिवादी और यातनामय बनाने के साथ साथ उसे एक असामाजिक क्रूर और घातक व्यक्तित्व के रूप में भी उपस्थित करता है। शेखर के जीवन दर्शन उदात्त है लेकिन इसका अनुदात्त परिणाम है।

शेखर के समान अन्यपात्र शारदा, सरस्वती, शशी, रामजी आदि इस उपन्यास क में अपने व्यक्तिगत अनुभव व्यक्त करते हैं। व्यक्ति जीवन के अंतर की

यह उपन्यास के आरंभ से अंत तक उभरता है । शेखर नामक ... आत्म कथात्मक शैली में ही हमारे सामने प्रस्तुत करता है । वह समाज की किसी भी समस्या का प्रतिनिधित्व करना नहीं चाहता है । किसी भी समाज का प्रतिनिधित्व उसे विषय ... है । वह अपने जीवन में अपने अनुभवों को ढूँढ निकालता है । यह तो संभावातीत है कि शेखर के समान विद्रोही व्यक्तित्व और भी होगा । स्वयं उपन्यासकार अज्ञेय की राय से सहमत होना ही ठीक है कि शेखर निःसन्देह एक व्यक्ति का अभिन्नतम निजी दस्तावेज है ।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने शेखर एक जीवनी की समीक्षा "हंस" में की थी । उनका कहना यह है कि "जीवनी में शेखर का विद्रोह भूमि बहुत कुछ व्यक्तिगत और काल्पनिक है । सामाजिक यथार्थ उसका मेल नहीं खाता । यही कारण है जिस बौद्धिक या शैक्षणिक सूत्र को लेकर लेखक चलना चाहता है जीवनी उसकी पूर्ति नहीं करती । शेखर का विद्रोह हमारे हृदय में गंभीर सहानु सहानुभूति की सृष्टि कर एक वैचित्र्य मात्र की सृष्टि करता है । "[15] लेकिन आधुनिक समाज के अनेक युवा लोगों की मानसिकता को पहचानने पर यहाँ शंका का स्थान नहीं है । यहाँ वैचित्र्य को ... भी नहीं है क्योंकि साधारणतः माँ-बाप के विचारों पर बच्चों का विरोध है । यह तो जनरेशनगैप है । यहाँ विद्रोह उभरता है । अपने मन के अनुसार काम करने को बाध्य हो जाता है व्यक्ति । यहाँ वैचित्र्य का स्थान नहीं है शेखर के समान बहुत अधिक पात्र नहीं है लेकिन पात्र की संख्या में सीमित है । अभी तक संख्या भी बढ़ती जाती है । यहाँ श्री. चिंदान सिंह चौहान की राय ही अधिक समीचीन है कि गोदान के बाद शेखर सबसे महत्वपूर्ण और कलात्मक उपन्यास है ।

"शेखर एक जीवनी" की व्यक्तिबद्धता को स्थापित करते हुए डा. सुषमा प्रियदर्शिनी इसी प्रकार लिखती है "उनमें समाज और युग नहीं बोलते, शेखर - अज्ञेय बोलता है । यह सभी समाज के प्रवाहमान जीवन का अंग नहीं है,

की आलोचना में से नहीं निकलता है, शेखर की अपनी व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं का समीकरण है और स्पष्ट शब्दों में उन प्रश्नों का विवेचन जोषित नहीं है, केवल विचारित है।"[19]

नदी के द्वीप

उपन्यासकार अज्ञेय के नूतन शैली का विवादास्पद [illegible] उपन्यास है "नदी के द्वीप"। वह अज्ञेय की दूसरी कृति है। यह शीर्षक बहुत कुछ सार्थक लगता है। जीवनरूपी नदी में प्रत्येक व्यक्ति एक द्वीप है। वह नदी के प्रवाह से घिरे रहने पर भी उससे कटा हुआ होता है। जीवन के प्रवाह में व्यक्ति के व्यक्तित्व को या अस्तित्व को अलग रखने की आवश्यकता इस शीर्षक से स्पष्ट हो जाता है।

समाज में व्यक्ति नदी में द्वीप के समान होता है। नदी के प्रवाह से घिरे रहने पर भी वो अपने को सुरक्षित रखने के श्रम में अटल है। समाज में रहते हुए भी व्यक्ति समाज से स्वतंत्र है। कई पात्रों के माध्यम से अज्ञेय ने उपर्युक्त बातों को अपने उपन्यास में प्रमाणित करने का प्रयास किया है। विभिन्न पात्रों के विचार एवं कार्यकलापों से स्थापित इसका कथानक नदी के साथ बहते-बहते द्वीपों में रुकने केलिए भी हमें बाध्य कर देता है।

"जो उपन्यास मूलतः चार पाँच वैयक्तिक संवेदनाओं का अध्ययन है, उसके पात्र समाज से कटे हुए है या नहीं मेरेलिए तो प्रासंगिक ही नहीं हुआ। एक पेड की शाखा प्रशाखा की रचना देखने केलिए क्या यह पहले निश्चय कर लेना या आवश्यक भी है कि वह पेड जंगल से कटा हुआ अनिवार्य है या कि जंगल का अंग है? उपन्यास अनिवार्यता पूरे समाज का चित्र हो, यह माँग बिलकुल गलत है उपन्यास की परिभाषा केबारे यह भ्रांति [illegible] देश में या कम-से-कम हिन्दी में काफी फैली हुई मालूम होती है। साहित्य के सामाजिक तत्व

प्रगतिवादिता का परिणाम है ।"[10] अज्ञेय के इन शब्दों में शब्द मिलाकर हम कह सकते है कि "नदी के द्वीप" केवल चार-पाँच व्यक्तियों का वैयक्तिक आशा-निराशायें है । उसकी कथा से वह अधिक स्पष्ट हो जायेगा । नीचे की छोटी कथा इसकेलिए पर्याप्त है ।

"नदी के द्वीप" का प्रमुख चरित्र है भुवन । रेखा की चारों ओर कथा का फैलाव है । "नदी के द्वीप" द्वितीय महायुद्ध के समय की कथा पर आधारित है । पात्रों के परस्पर पत्र व्यवहार से विश्वयुद्ध के बारे में पात्रों की धारणायें अभिव्यक्त हुई है । इसकी पृष्ठभूमि युद्धकाल होने पर भी यह उप उपन्यास राजनीति ... ही नहीं मनुष्य के बहुत प्रधान अंशों से बहुत दूर है । श्री• ओम प्रभाकर ने इस उपन्यास के बारे में लिखा है "नदी के द्वीप" में पात्रों ... उन्होंने जो जीवन अंकित किया है वह उनका पूर्ण जीवन नहीं उनका केवल एक अंश है - भावनात्मक अथवा शृंगारिक अंश ... ओम प्रभाकर के इस कथन के आधार पर यह कहा जा सकता है इस उपन्यास की कथा का प्रधान विषय कथा की नायिका रेखा की सेक्स संबंधी समस्याओं पर आधारित है । नायिका रेखा के ब्याह विवाहिता होने पर भी और एक व्यक्ति से प्रेम पति से तलाक, प्रेमी को वस्त्र के समान बदलकर एक दूसरे व्यक्ति को स्वीकार करना आदि से कथा पुष्ट है । भुवन गौरा रेखा चन्द्रमाधव कौशल्या हेमेन्द्र आदि सभी पात्र आर्थिक समस्याओं से मुक्त है, केवल प्रेम और विवाह की समस्याही उनके जीवन में प्रधान है । स्वयं अज्ञेय लिखते है "नदी के द्वीप" समाज के जीवन का चित्र नहीं है एक अंग का है पात्र साधारण जन नहीं है एक वर्ग के व्यक्ति और ... वर्ग भी संख्या की दृष्टि से अप्रधान ही है, लेकिन कसौटी मेरी दृष्टि में यह होना चाहिए "जिस वर्ग का भी चित्र है, वह उसका सच्चा चित्र है और मेरा विश्वास है कि "नदी के द्वीप" उस समाज का, उसके व्यक्तियों के जीवन का जिसका वह चित्र है सच्चा चित्र है ।"[21]

अज्ञेय की ऊपर वर्णित पंक्तियों से ही यह स्पष्ट है कि नदी के द्वीप"

त्रिभुवन सिंह । पवार इसका और भी समर्थन करता है "भुवन चन्द्रमाधव रेखा और गौरा की समस्यायें सेक्स और विवाह में केन्द्रित है किन्तु पारिवारिक सामाजिक संश्लेषण अत्यंन्त क्षीण है ।"[22] "नदी के द्वीप" को एक व्यक्ति प्रधान उपन्यास कहते इसके केन्द्र के व्यक्ति कौन है ? उसकी सब समस्यायें क्या है ? यह जानने केलिए अभिलाषा बढती जाती है ।

"नदी के द्वीप" का प्रमुख पात्र रेखा है । रेखा आखिर एक युवति है जो विवाहिता भी है । उसके पति है हेमेन्द्र । हेमेन्द्र रेखा केलिए अपात्र पति है । इसलिए वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए और एक व्यक्ति से संबंध जोडती है । वह व्यक्ति है भुवन जो उपन्यास का दूसरा पात्र है । भुवन एक अध्यापक है । उससे रेखा का परिचय चन्द्रमाधव केद्वारा है । चन्द्रमाधव हेमेन्द्र का सखा है । हेमेन्द्र के जीवित रहते समय ही रेखा भुवन के साथ सैर करने जाती है । उसके प्रेम संबंधी जीवन इतना सेक्समय हो जाता है कि तुलियन झील के प्रसंग पर रेखा गर्भवती होजाती है । बाद के गर्भपात करा देती है, इतने में भुवन के पूर्वप्रेम का पर्दा खुल जाता है । भुवन और गौरा के बीच पूर्वप्रेम था । गौरा भुवन की शिष्या थी । गौरा और भुवन के साथ कालेज में पढाते वक्त गहरा प्रेम-संबंध था । रिसर्च करते समय वह रेखा से संबंध जोडते समय वह कालिदास के "शाकुन्तल" के दुष्यंत के समान था ।

गौरा और भुवन के बीच जो प्रेम संबंध था वह जानने पर रेखा उनके रास्ते से अलग हो जाती है । वह अनसूया के समान उनके रास्ते से मुँह मोडकर चली जाती है । भुवन और गौरा केबीच विवाह हो जाता है । रेखा एक डाक्टर से ब्याह करती है । यहाँ कथा रुकती है ।

ऊपर "नदी के द्वीप" की जो कथा सीमित शब्दों में कही गई है इसमें यह स्पष्ट है कि यह केवल स्त्री-पुरुष संबंधों का विवरण है । वर्णन है । श्री. शिवनारायण श्री वास्तव भी नदी के द्वीप की "प्रमुख समस्या प्रेम यौनतृप्ति और विवाह भी मानते है ।"[23] उनके अनुसार "यह उपन्यास सामाजिक,

[illegible]

समस्याओं एवं संघर्ष के चित्रण को ध्येय बनाकर चला है ।"[24]

रेखा का वैयक्तिक आचरण

अज्ञेय के द्वितीय उपन्यास "नदी के द्वीप" के प्रधान पात्र है रेखा । इसकी कथा द्वितीय विश्वयुद्ध के समय की कथा है । भारतीय परिवेश में आधुनिकता की प्रक्रिया दो परस्पर विरोधी दिशाओं में व्याप्त हो रही थी । समष्टि सत्य और व्यष्टि सत्य या सामूहिक चेतना और वैयक्तिक चेतना की शब्दावली में इस दिशाओं को व्यक्त करना ठीक है । "नदी के द्वीप" नदी और द्वीप रूपी दो इकाइयों की समस्या है । इस उपन्यास के अंत में नदी और द्वीप का अस्तित्व इस शब्दों में व्यक्त किया गया है ।- ऐसे द्वीप स्थिर नहीं होते निरन्तर उनका भाग्य गढ़ती चलती है । द्वीप अलग अलग होकर भी निरन्तर घुलते और पुनः बनने रहते हैं नया रोल नये अणुओं का मिश्रण नई तलघट एक स्थान में मिटकर दूसरे स्थान पर जमते हुए नये द्वीप ।"[25] इस दृष्टि से काल की धारा भी धारा नहीं है । समाज की अपेक्षा दोनों की दृष्टि में व्यक्ति व्यक्तित्व को अधिक महत्व है । गर्भवती हो जाने के कारण ही भुवन विवाह का प्रस्ताव रखता है । लेकिन रेखा अस्वीकार कर देती है और गर्भपात करा लेती है । अपने अजन्मे शिशु के बारे में रेखा की अभिलाषा एक मातृहृदय की सहजता से युक्त है । मातृस्नेह से भी उनका हृदय वंचित नहीं है । रेखा के सामने विवाह से बढ़कर है प्रेम । वह भुवन से कहती है "आई एम फुलफिल्ड अब अगर मैं मर जाऊँ तो परमात्मा है, प्रकृति के प्रति यह आक्रोश लेकर नहीं जाऊँगी कि मैं ने कोई भी फुलफिलमेंट नहीं जाना-कृतज्ञ भाव लेकर ही जाऊँगी परमात्मा के प्रति और भुवन तुम्हारे प्रति ।"[26] इस प्रकार भुवन और रेखा की प्रेम भावना समस्या नहीं है व्यक्तिगत जीवन का संतोष और फुलफिलमेंट का निजी रूप है ।

रेखा और भुवन के बीच गौरा और भुवन का पूर्वप्रेम उभरता है । गौरा और भुवन के संबंध के बारे में जानने पर रेखा उनके मार्ग में बाधा नहीं डालना चाहती है, बल्कि वहाँ से अलग निकल जाना चाहती है, वह गौरा और

भुवन के जीवन के शुभ-भविष्य केलिए प्रार्थना करती है । गौरा के प्रसंग पर रेखा का व्यक्तित्व और भी महत्तर बन जाता है । यहाँ रेखा ईर्ष्यामुक्त होकर गौरा को आशीर्वाद देती है । भुवन के प्रति रेखा के मन में आदर स्नेह तथा विश्वास है । रेखा परिणीता है, अपने पति से उसे जो कुछ नहीं मिलता, वह उसे भुवन से मिलता है । उससे अधिक की आकांक्षा भी नहीं है । परिस्थितियों की पूर्ति रेखा भुवन के अवैध शिशु की माँ बन जाती है पर भुवन जब उसके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखता है तब वह भुवन से कहती है "तुम समाज की दृष्टि से देखो तो वह दृष्टि गलत नहीं है अप्रासंगिक भी है, निर्णायक भी वह नहीं है । व्यक्ति को दबाकर इस मा... का जो भी निर्णय होगा - गलत होगा - झूठ होगा, असत्य होगा । हो सकता है कि मेरा सोचना शुरू से ... गलत रहा हो - पर शुरू से वह यही रहा है । मेरे कर्म का सामाजिक व्यवहार का नियमन समाज करे ठीक है, मेरे अंतरंग जीवन का नहीं वह मेरा है । मेरा यानी हर व्यक्ति का निजी ।"[27] भुवन का मार्ग और भी सुगम बन जाने केलिए रेखा और एक व्यक्ति ... ब्याह कर लेती है । इसी प्रकार वह भुवन को स्वतंत्र कर देती है ।

रेखा पर कुछ एक आलोचक अश्लीलता का आरोप करते हैं । अज्ञेय जी अपने "आत्मनेपद" में इसका खण्डन करते हुए कहते हैं "जो रस देती है जीवन को उभारती है अश्लीलता नहीं कहना चाहिए जो व्यक्ति सत्य की सेवा है दीप सत्य का परिणाम है । इतना होने पर भी मानवीय मूल्यों ... को दबाकर व्यक्ति स्वातंत्र्य के नाम पर सेक्स की खोज में अज्ञेय की नायिका घूमती फिरती है । विवाहिता होने के कारण विवाह की पवित्रता या पति-पत्नी संबंध का दृढ़तर वातावरण शिथिल हो जाता है । उससे भी बढ़कर अवैध शिशु का गर्भपात करके शिशु जन्म का जो पवित्र विकास है वह भी कम करा दिया है लेखक ने । आधुनिक समाज में रेखा के समान अनेक नारियाँ होंगी । वह ठीक होगा । लेकिन नारी स्वातंत्र्य को, विवाहित पुरुष अन्य स्त्री के साथ इतना अधिक प्रेम क्रिडा करते है तो समाज के सामने वह

इसलिए व्यक्तिबद्धता इतना अधिक हो जाने पर रेखा के चित्रण से लेखक समाज की कुरीतियों का सहायक हो जाता है ।

"नदी के द्वीप" की रेखा भुवन चन्द्रमाधव, हेमेन्द्र, गौरा सब सब व्यापक सत्य के परिचायक है । "नदी के द्वीप" कीसबसे परिपक्व पात्र है रेखा । रेखा शिक्षित नारी है । इस उपन्यास में हेमेन्द्र की पत्नी के रूप में रेखा हमारे सामने आती है । नियती ने उसे एक अपात्र पति को दिया । पति-पत्नी के जीवन में जिन बातों की ज़रूरत है, वह उनके जीवन में अधूरी रह जाती है । रेखा वेदना को पीडा को शक्ति मानती है । रेखा ने बार बार इस वेदना के महत्व को स्वीकार किया है और वह कहती है -

तुमने एक ही बार वेदना में मुझे जना था माँ
पर मैं बार बार अपने को जनता हूँ
मैं मरता हूँ
पुनः जनता हूँ और पुनः मरता हूँ
और फिर जनता हूँ
क्योंकि वेदना में मैं अपनी माँ हूँ ।"[२४]

अधूरी आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए रेखा सहारा ढूँढती है । हेमचन्द्र के मित्र चन्द्रमाधव के माध्यम से भुवन से परिचय प्राप्त कर लेती है । भुवन एक अध्यापक है । काफी हाउस में भुवन और रेखा के बीच का जो परिचय है, वह प्रेम में बदल जाता है । हेमेन्द्र के जीवित रहते ही भुवन और रेखा के बीच का संबंध बढता जाता है ।

रेखा और भुवन दोनों सैर करने जाते हैं । रेखा परम एकान्त क्षण की खोज में है । यहाँ रेखा में आधुनिक नारी चेतना की झलक मिलती है । रेखा अपनी भावनाओं के प्रति सबसे ज्यादा ईमानदार है । तुलियन के तीर पर

भुवन की जो माँग है उसे रेखा स्वीकार नहीं करती । भुवन में सामाजिक दायित्व की भावना जागृत होती है, परन्तु रेखा भुवन से कहती है "मैं ने तुमसे प्यार माँगा था, तुम्हारा भविष्य नहीं माँगा था, न वह मैं लूँगी ।"[29]

रेखा और भुवन के अभिमत से ही उनकी समस्या को सामाजिक अश्लीलता नहीं कहना चाहिए । यहाँ लेखक का उद्देश्य पात्रों और पाठकों को रस देना है । अज्ञेय पाश्चात्य विचारधारा से प्रेरित उपन्यासकार है । इसलिए उनके उपन्यासों में यौन भाव का आधिक्य होना स्वाभाविक है । अश्लीलता को निश्चित शब्दों में बाँधना मुश्किल है । यह देखनेवालों की आँखों पर निर्भर होती है । इसलिए रेखा के चरित्र में, चरित्र के विकास में सेक्स का अधिक स्थान है । लेकिन उसे अश्लील कहना उचित नहीं है।

रेखा "नदी के द्वीप" की नायिका है, आधुनिक संवेदनाओं के मध्य खिलती गिरती जाती आधुनिक नारी है, पुराणों की सीता-सावित्री नहीं है । नदी के द्वीप के अन्य स्त्री पात्र और पुरुष पात्रों से रेखा का व्यक्तित्व न्यारा है । उसका विचार अटल है भाव तीव्र है मन ईर्ष्यामुक्त है । रेखा का जीवनवृत्ति आधुनिक नारी के जीवन से पूर्णतया मिलता जुलता है । रेखा अपनी वैयक्तिक को अधिक बल देती हुई कहती है "मैं तो समझती हूँ हम अधिक से अधिक इस प्रवाह में छोटे छोटे द्वीप हैं, उस प्रवाह से घिरे हुए भी, उससे कटे हुए भी, भूमि से बँधे और स्थिर प्रवाह को एक स्वैरिणी लहर आकर मिटा दे बहा ले जाए, फिर चाहे द्वीप का फूल पत्ते का आच्छादन कितना ही सुन्दर क्यों न रहा हो ।"[30]

जीवन में सुख देनेवाला क्षण वही रेखा केलिए प्रधान है । काल के प्रवाह से बढ़कर है क्षण । क्षणवाद पर जोर देती है रेखा । वह एक स्थल पर कहती है "काल का प्रवाह नहीं क्षण और क्षण सनातन है ----- छोटे छोटे ओएसिस -------- संचित क्षण ------ नदी के द्वीप ------- जो काल परम्परा

परिणामों के प्रति कभी उपेक्षा रख सकता है - एक तरह से अनुत्तरदायी हूँ तो उसका फल मैं भोगूँगा - यानी अपने अनुसार दायित्व का उत्तरदायी मैं हूँ। क्या यह परसों और कल और आज वैसा ही एक द्वीप है संपृक्त क्षणों का द्वीप- काल प्रवाहिनी में अटका हुआ एक अलग परम्परायुक्त खण्ड जैसा रेखा कहती है, परसों, कल, आज फिर महाशून्य नहीं, आज फिर दूसरा आज फि आज तब महाशून्य।"[31]

अकेलापन ही रेखा के जीवन में सब कहीं महसूस कर सकती है। अकेलापन और संत्रास की अवस्था उसकी वेदना को और भी बढ़ा देती है। वह कहती है "कितना अजनबी अकेला और गैर हो सकता है व्यक्ति जब वह अपने घर में अजनबी होता है --- लेकिन यही अच्छा है। क्योंकि इस अजनबीपन में कोई भी वास्तव में गैर नहीं है, वह एक द्वीप है जहाँ कोई सीधा सामान्य नहीं किसी से कोई सीधा संपर्क नहीं, केवल नदी के माध्यम से नदी जो माँ है धात्री पित्रि है, ... पिता है, जो अंत में एक दिन अपने आप्लावन में सबको समा लेगी।"[32]

वे संयुक्त क्रीडाओं में उन्मुक्त होकर रेखा और भुवन घूमते-फिरते हैं। यहाँ वे मधुपर्वों के स्थान निकालते हैं। इसके प्रमाण के रूप में रेखा भुवन से कहती है। मैं ने तुमसे एक बार कहा था, इस जीवन की नदी के अलग अलग द्वीप है - ऐसे द्वीप स्थिर नहीं होते, नदी निरन्तर उनका भाग्य गढ़ती चलती है, द्वीप अलग अलग होकर भी निरन्तर ... और पुन बनते रहते हैं - नया पोत, नये ...ओं का मिश्रण, नयी ... , एक स्थान से मिटकर दूसरे स्थान पर जमते हुए नये द्वीप।"[33]

रेखा की आस्था व्यक्तिवाद पर पूर्ण रूप से समर्पित है। वह किसी न किसी परिस्थिति मेंभी अपनी स्वतंत्र इकाई नहीं छोड़ना चाहती है। अपने मन के आह्वान के अनुसार ही वह काम करती है। वह कहती है "जीवन के और महत्वपूर्ण निर्णय व्यक्ति अकेले में करता है, और वहाँ अकेले भोगता

विरह का परम रस होता है, तुम जानते हो इसे ? समर्पण के धधकते क्षण में जब यह ज्ञान चीत्कार कर उठता है कि हम अलग हो है देना संपूर्ण नहीं हुआ कि मिटने में भी मैं मैं हूँ, तुम तू है, मैं तू नहीं हूँ - और इच्छा माँग जाती है ।-54 व्यक्तिवादिता से पूर्णतः प्रेरित होने के कारण ही उसका चिन्तन स्वतंत्र है । उसके व्यक्तित्व को समाज के बीच छोड़ना उसे पसन्द नहीं है, समाज के मध्य में भी अलग रहना उसे पसन्द है । उसके जीवन में किसी का अधिकार उसे स्वीकार्य नहीं है

भुवन

"नदी के द्वीप" के मुख्य पात्रों में प्रमुख है भुवन । भुवन एक प्रोफेसर है । अध्यापन के क्षेत्र में उसका कर्तव्यपूर्ण व्यवहार विद्यार्थियों और अन्य अध्यापकों से प्रशंसा प्राप्त करता है । भुवन मध्यवर्ग का पात्र है । मध्यवर्गीय युवकों की आदर्शवादी भावना और कुंठा उसकी अपनी है । वह गंभीर, शिष्ट भावुक असामाजिक तथा एकांतप्रिय है । "नदी के द्वीप" के अन्य पात्रों के समान वह भी व्यक्तित्व प्रधान होता है । उनके व्यवहारों ... ए ... तो कुछ नहीं है । उसके ... के आह्वान अनुसार ही ... कुछ करता है ।

भुवन रेखा से संबंध जोड़ता है, रेखा की मजबूरी के कारण भुवन और रेखा के प्रेम संबंध में रेखा ही अधिक उत्तरदायी है, वही अधिक परिपक्व है । प्रेम या दाम्पत्य के क्षेत्र में रेखा ही ज्यादा अनुभवी है । भुवन अविवाहित है, रेखा विवाहिता है । इन दोनों के साथ यदि संबंध बनता है तो अधिक जिम्मेदारी रेखा पर है । रेखा के चरित्र में यदि कमियाँ है तो इनमें सबसे बड़ी कमी यही है कि विवाहिता होने पर भी वह अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए सभी बन्धनों को तोड़ देती है । सामाजिक दृष्टि से यह गैर जिम्मेदारी हो सकता है । परन्तु व्यक्तिगत दृष्टि से रेखा का आचरण तर्कसंगत है । रेखा का मन फुलफिलमेंट के क्षण केलिए विवश है, विह्वल है । और ... पर रेखा ... भुवन का संबंध पराकाष्ठा ... पहुँच जाता है ।

रेखा के गर्भ के शिशु केलिए अपने को जिम्मेदार समझने को वह ज़रा भी नहीं हिचकता है। गर्भवती हो जाने से वह रेखा को छोड़ना नहीं चाहता है, बल्कि विवाह का प्रस्ताव रखता है। यहाँ भुवन के चरित्र [illegible] कायरता बिलकुल नहीं है, और ऐसा आरोप करना अन्याय होगा। क्योंकि उसका मन विशाल है और अपनी कमियों को स्वीकार करने केलिए वह तैयार है। उसकेलिए उसे समाज का भय नहीं है। भुवन को अपमानित होने से बचाने केलिए, उसका मार्ग और भी सरल बना देने केलिए रेखा गर्भपात करा देती है।

भुवन और गौरा के बीच में पूर्वप्रेम वर्तमान था। रेखा से संबंध जोड़ते समय भुवन उसे भूल जाता है। जिस प्रकार शाकुन्तल में दुष्यंत शकुन्तला को भूल जाता है। लेकिन मनस्विनी, तेजस्विनी, सुन्दरी शकुन्तला अपने मन में के भीतर दुष्यंत के प्रति चिरन्तन प्यार की पूजा करती रहती है। शकुन्तला प्रेम की इस अग्निज्वाला में पिघल जाती है। अंत में अंगूठी को देखकर दुष्यंत के मन में विस्मृत शकुन्तला की याद लौट आती है। उसी प्रकार भुवन के लिए भी वह अंगूठी काम आती है। भुवन के मन में गौरा के पूर्व प्रेम की याद आती है। गौरा केलिए वह तरसता है, रेखा उसके मार्ग से हट जाती है, लेकिन गौरा से भुवन रेखा के साथ अपने प्रेम संबंध को व्यक्त कर देता है। इसी से ही भुवन अपने और रेखा के प्रेम प्रसंग की सारी घटनायें सुनाता है। भुवन स्वयं को रेखा के गर्भपात का दोषी समझता है और अपनी गलती मानता है। वह गौरा से कहता है "यही है मेरी कहानी गौरा ---- और सच में आग में देखता हूँ चेहरे मृत बच्चों के चेहरे ------ स्वयं अपना चेहरा ------- क्योंकि मैं भी तो मर गया हूँ उसके साथ ------- ।"[35] वह गौरा से स्वीकार करता है "उसने मुझे बहुत प्यार किया था, जितना किसी ने नहीं किया और अब भी करती है।"[36] भुवन अपने मन की बातों को प्रेमिका के सामने विशेषकर अन्य प्रेमसंबंधी बातों को व्यक्त करने के बाद उससे ब्याह करने को तैयार हो जाता है। रेखा के संबंध को छोड़कर वह गौरा को पत्नी बना देता है। यहाँ रेखा के प्रति भुवन अन्याय नहीं करता है क्यों [illegible] रेखा ने जो [illegible] चाहा [illegible] ने उसे दिया। रेखा स्वयं

प्रति अन्याय किया ऐसा आरोप करना तो ठीक नहीं होगा । वह सचमुच रेखा के आग्रह की पूर्ति ही करता है । एक बात जो विशेष ध्यान देने योग्य है कि प्रेम तभी महत्त्वपूर्ण हो जाता है जब प्रेमी अपनी प्रेमिका केलिए अपना स्वार्थ अपनी इच्छा सब कुछ कुरबान कर देता है । यहाँ भी वही बात हुई । इस दृष्टि से भुवन का चरित्र और भी निखर उठता है, और गरिमामयी बना है ।

रेखा के आगे-पीछे "नदी के द्वीप" का एक मुख्य पात्र है भुवन, उसके व्यक्तित्व पर सेक्स का अधिक आरोप लगाना उचित नहीं है । भुवन की परिस्थितियों के मध्य उसे देखकर सेक्स के क्षेत्र में उसका व्यवहार साधारण से निम्न स्तर का दोष पड़ेगा । सेक्स के मामले में उसको ज्यादा दोषी स्थापित करने के बदले उन परिस्थितियों को दोषी कहना अधिक संगत होगा जिनसे होकर वह गुज़रता है । क्योंकि सचाई यह है कि इन्सान कमज़ोर है और हमेशा परिस्थिति का बड़ा प्रभाव उसके ऊपर पड़ता रहता है । यहाँ भुवन और गौरा के प्रसंग में, भुवन और गौरा दोनों यौवन की मादक अनुभूतियों से प्रभावित है । यहाँ सेक्स कोई भी कार्य नहीं करता है । लेकिन दूसरी तरफ भुवन और रेखा का प्रसंग और भी भिन्न है, दोनों एकांत में एक युवती और युवक प्रकृति की गोद में समय बिताते हैं । ऐसे अवसर पर अगर सेक्स की भावना उभर आती है तो कोई अतिशयोक्ति है ही नहीं । सेक्स की क्रीडा है तो वह साधारण बात है, यहाँ रेखा और भुवन दोनों दोष रहित है । अज्ञेय की राय में सेक्स तो दोष या हीन वृत्ति नहीं है । मनुष्य के सब भावों के समान सेक्स भी एक भाव है ।

उपन्यास के पात्रों की विशेष मनोवृत्ति

हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में एक परंपरित पात्र परिकल्पना वर्तमान थी। प्रेमचन्द के समय में भी यही परिकल्पना जारी रही थी। उपन्यासों के नायकों को इस परंपरा के अनुसार साधारणतः महाकाव्यों के नायकों के समान धीरोदात्त होना चाहिए था। पात्र का किसी वर्ग का प्रतिनिधि होना स्वाभाविक था। प्रेमचन्द के प्रमुख पात्र या तो किसी वर्ग का प्रतिनिधि होते थे या किसी समस्या का उद्घाटन करने के लिये बनाये जाते थे। प्रेमचन्द के प्रमुख पात्र हैं निर्मला, सूरदास, होरी आदि। निर्मला अनमेल विवाह और दहेज प्रथा की समस्या को उभारती है सुमन वेश्या समस्या का और होरी, रायसाहब, खन्ना जैसे शोषकों से शोषित, मजदूर लेकिन पराजित पददलित किसानों का प्रतिनिधि है। यही वर्गबद्धता प्रेमचन्द के बाद कम होती जा रही थी। जैनेन्द्र से ही पात्र आंतरिक व्यवहारों को प्रधानता मिलने लगी। यहाँ बाहरी घटनाओं की अपेक्षा अंतर्मन की व्याख्या ही प्रधान दीखती है। मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों की प्रमुख प्रवृत्ति के रहस्यों को खोलकर रखना है। अज्ञेय में सारी प्रवृत्तियाँ अधिक मात्रा में दिखाई पडती है। उनके पात्र एकाकता से व्यक्तिनिष्ठता की ओर जाते हैं। ये पात्र एक दूसरे पर आबद्ध होने पर एक प्रकार के अलगाव और अकेलापन से युक्त है। कुण्ठा तनाव और बिखराव के मानव के सहचर है।

अपने अपने अजनबी

"अपने अपने अजनबी" अज्ञेय का सब से आधुनिक उपन्यास है।

अपने पूर्ववर्ती दोनों उपन्यासों से भिन्न कथा एवं शिल्प को इस उपन्यास में अपनाया है । आधुनिक उपन्यास के समान इसका कथानक बहुत सीमित है । इस में प्रायोगिक नव्यता की सफलता है जो अज्ञेय की वैयक्तिक विशिष्टता है । यह प्रतीकात्मक होने के साथ साथ दुःखान्त भी है । यह एक अस्तित्ववादी उपन्यास है । इस उपन्यास की वृद्धा कहती है और स्वतंत्रता कौन स्वतंत्रता ? कौन चुन सकता है कि वह कैसे रहेगा ? मैं क्या स्वतंत्र हूँ कि बिमार न हूँ या कि अब बीमार हूँ तो क्या इतनी भी स्वतंत्र कि मर जाऊँ ? मैं ने चाहा था कि अन्तिम दिनों कोई मेरे पास न हो । लेकिन वह भी क्या मैं चुन सकी ?[31] सामाजिक व्यवस्था परम्परा प्राकृतिक शक्तियाँ और स्वयं अपनी ही भावनाओं के निर्देश पर ही आचरण करने का बाध्य है । सेलमा के शब्दों में तुम जो अपने को स्वतंत्र मानती हो यही सब कठिनाइयों की जड है न तो हम अकेले है, न हम स्वतंत्र है बल्कि अकेले नहीं है और हो नहीं सकते इसलिए स्वतंत्र नहीं है और इसलिए चुनने या फैसला करने का अधिकार हमारा नहीं है । "क्या मैं अपनी पसंद की परिस्थिति चुन सकी ? और तुम क्या स्वतंत्र हो कि मुझे मरता हुई न देखा ? ऐसी सब स्वतंत्रताओं की कल्पनायें निरा अहंकार है - उसे स्वतंत्रता को छोडकर और कोई दूसरी स्वतंत्रता नहीं है ।"[32] अज्ञेय में अस्तित्ववाद का प्रभाव पश्चिमी साहित्यकारों के अनुकरण से हुआ है, "अपने अपने अजनबी" के माध्यम से अज्ञेय की रचना कौशल एक नयी सीमा को छूने लगता है । वैसे इस उपन्यास का शिल्प बहुत ही विशेष प्रकार का है । योके और सेल्मा नामक दो स्त्री पात्र हैं इस कथा पटल के प्रधान पात्र । इनके माध्यम से पूर्व और पश्चिम की मृत्यु सम्बन्धी मान्यताओं पर विचार विमर्श हैं । जीवन मृत्यु, वरण की स्वतंत्रता आदि पर विचार किया गया है । योके और सेल्मा एक दूसरे से अपरिचित है योके युवती है और सेल्मा वृद्धा अप्रत्याशित रूप में ये दोनों बर्फ के नीचे दबे हुए एक

आकांक्षाओं का बहुत ही सशक्त प्रभावात्मक चित्रण उपन्यास में आद्यन्त दिखाई पडता है । लेकिन बिना चाहे वे एक साथ रहने को बाध्य हो जाती हैं ।

योके और सेल्मा को एक साथ रहने की अभिलाषा न थी । मानव परिस्थितियों का प्रकृति का, नियति का दास है । मनुष्य की विवशता निराशा टूटन उल्ब आदि विधि की विडम्बना है । आधुनिक जीवन की विवशता को इस उपन्यास में शब्दबद्ध किया गया है ।

बूढा सेल्मा तीन-चार महीनों में बर्फ के नीचे है अब वह मर रही है । अब बर्फ के गलने से छत के रोशनदान से धूप का एक टुकडा फैल जाता है । सेल्मा योके की सहायता से वह देखना चाहती है । पर उसे देख नहीं पाती । वह विवश है । उनकी विवशता से भरी वाणी सुनिए । शुक्रिया, योके धूप ने आज आना ही चुना है, पर मैं उसे देखनानहीं चुन सकती ।[39] यह बूढा सेल्मा की बात ही नहीं । जीवन में मानव के मन में अनेक मोह है अभिलाषायें है लेकिन मोह भंग के साथ ही मनुष्य को मरना पडता है । अधूरी अभिलाषायें ही मृत्यु के समय मानव के पास है । मनुष्य अपने जीवन काल में संपत्ति इकट्ठा करता है, लेकिन मृत्यु के समय सभी वस्तुओं को, सारी संपत्ति पिता, पति-पत्नि, पुत्र-पुत्री, मित्र सबको छोडकर दूर, अकेला जाता है ।

योके वरण की स्वतंत्रता न होने की कठिनाई से पीडित है । वह जिन्दगी भर कुछ चुन नहीं पाती । उसका प्रेमी ओरेन उसे

धोखा देता है । जगन सैनिक उसे वेश्या की जिन्दगी बिताने को विवश करते हैं पर टूटकर भी वह मूल्य का वरण न करती । एक अच्छे आदमी की खोज में थी वह । वह जगन्नाथन के रूप में एक अच्छे आदमी को पाती है और मर जाती है मरती हुई वह कहती है "....मैं चुन लिया......मैं बहुत खुश हूँ । मैंने अभी कुछ नहीं चुना । जब से मुझे याद है कभी कुछ चुनने का मौका मुझे नहीं मिला । लेकिन अब मैं ने चुन लिया मैं खुश हूँ । मैं चाहती थी कि मैं किसी अच्छे आदमी के पास मरूँ क्योंकि मैं मरना नहीं चाहती थी । कभी नहीं चाहती थी ।" योके के संवादों से यह विदित हो सकता है कि वह जीवन भर वरण की स्वतंत्रता के लिये कामना करती रही । उसके श्रम में वह विजयी हो निकलती है । जगन्नाथन को पाकर वह कहती है । मैं ने चुना हम अजनबी नहीं चुनते, अच्छे आदमी चुनते हैं मैं ने आदर्श, चुना अच्छा आदमी उसने भी चुना... ।

मृत्यु से साक्षात्कार की मनःस्थितियाँ अपने अपने अनुभवों का द्वारा प्रतिपादन है । सामान्यतया आदमी मृत्यु के बारे में ही सोचता है । दोनों विचारों और भावनाओं की दृष्टि से अजनबी हैं । ए मृत्यु के बारे में भी दोनों के विचार भिन्न होंगे, सेल्मा बूढ़ी है मानसिक रूप से उसका परिपक्व होना स्वाभाविक है । वह स्वयं अपनी पीड़ा को भोगती ही नहीं उसका अनुभव भी करती है । सेल्मा मृत्यु को अनुभाव से स्वागत करती है । वहाँ योके मृत्यु की आहट से विक्षिप्त हो जाती है । सेल्मा का अनुभव परिपक्व है । उसकी परिपक्वता ही योके को चिढ़ाती है । सेल्मा योके को हमेशा ही उपदेश देती है । सेल्मा कहती है कि "कुछ भी किसी के बस का नहीं

है एक ही बात जो हमारे बस की है वह इस बात को पहचान लेना मात्र है।" [41] अब सेल्मा की इन बातों को सुनकर योके के मन में उसकी हत्या करने तक का विचार उठता रहता है। क्रिसमस के अवसर पर देवशिशु के अवतरण के प्रसंग में योके सोचती है - अवतरण अगर हुआ तो वह मृत्यु का और वह मृत्यु ऐसी नहीं है कि गाने से उसका स्वागत किया जाएगा। वे मेरे कंधों पर सवार होकर मेरा गला घोंट रही है। कैसा बेपनाह है वह पंजा जो छोड़ना नहीं लेकिन जिसकी उँगलियों की छाप भी नहीं। पकड़ेगी। मैं ने कल्पना के मेरे हाथ बुढ़िया के गले पर हैं और उसे घोंट रहे है।" [42]

यों सेल्मा भी मृत्यु चाहती है क्योंकि मृत्यु के प्रति उसकी सहजता योके के लिए असह्य मालूम होने लगी है। इन दोनों की मानसिकताओं का अंतर योके के ही इस स्वगतचिन्तन में व्यक्त हुआ है और जानकर मरती हुई भी जिए जा रही है। और मैं हूँ कि जीती हुई भी मर रही हूँ और मरना चाह रही हूँ। योके के शब्दों में कोई जीता हुआ प्राणी जीविता से परे हो सकता। हम सब कुछ से अनासक्त हो सकते हैं, पर जीवन से कैसे हो सकते है।

एक स्थान पर योके सेल्मा से पूछती है यह क्या है जो तुम्हें सहारा देता है, जब कि मुझे डर लगता है? सेल्मा उत्तर देती है "मुझे किसका सहारा है? मैं नहीं जानती हूँ शायद मृत्यु का ही सहारा है, वह बिलकुल पास है, सामने खड़ी है लगता है कि हाथ बढ़ाकर उसे छू सकती हूँ। पर यह कहने और इसमें क्या फर्क है कि हाथ बढ़ाकर उसका सहारा ले सकती हूँ, और यह कहने में ईश्वर का नाम

ले लें... तो बड़ा आसान है, लेकिन बड़ा मुश्किल भी है । मौत और ईश्वर को हम अलग अलग पहचान भी तो कभी कभी हो सकते । बल्कि शायद मन से ईश्वर को तब तक पहचान ही नहीं सकते जब तक कि मृत्यु में ही उसे न पहचान लें ।

आधुनिक जीवन अस्तित्ववादी विचारधारा से प्रभावित है । आज का जीवन अकेलापन, अजनबीपन, संत्रास कुंठा आदि से ग्रस्त हैं । आस-पास बैठनेवालों के बीच मीलों की दूरी है । आधुनिक कलाकार इस स्थिति को प्रिय विषय बनाकर कहानियाँ और उपन्यास लिखते है । योके और सेल्मा महीनों एक साथ रहती है खाती पीती है बातें करती है लेकिन एक दूसरे केलिए अजनबी ही रहती है । जीवन और मृत्यु के प्रति दोनों के दृष्टिकोणों में बड़ा अंतर है । उनों बीच कोई रागात्मक सम्बन्ध नहीं है । रागात्मक सम्बन्धों का विघटन योके और सेल्मा की कहानी द्वारा प्रतिपादित किया गया है, मृत्यु के समय भी व्यक्तियों का अजनबीपन समाप्त नहीं होता ।

चरित्र चित्रण

चरित्र उपन्यास का अनिवार्य तत्व है । जिवित मनुष्य के सदृश ही उपन्यास के पात्र बन जाते हैं । उनके जीवन की विवशतायें और परेशानियाँ ही उपन्यास की घटनायें हैं ।

चरित्र चित्रण की दृष्टि से अज्ञेय के अन्य उपन्यासों से भिन्न है, "अपने अपने अजनबी" । अज्ञेय के अन्य पात्रों के समान सेक्स की आधिक्यता इस के पात्रों में नहीं है । अहंमन्यता कुंठा, बौद्धिकता, आदि का

तमाशा इस उपन्यास में भी है । इस उपन्यास के मुख्य पात्र नामक तरूणा और वृद्धा सैल्मा है ।

सैल्मा

सैल्मा कैंसर रोगिणी है लेकिन मृत्यु भय से निरपेक्ष है, हिम में कैद रहने पर भी वह क्रिसमस का त्योहार मनाने को तैयार है । देवशिशु के अवतरण में गाने गाती है । सैल्मा की हत्या करने केलिए श्रम करने-वाली योके से क्षमाशीलता के साथ व्यवहार करती है । स्वतंत्र व्यक्तित्ववाली होने के साथ साथ सैल्मा का व्यक्तित्व आत्मकेन्द्रित है और उसमें अहं का बहुत अधिक विकास है । वे योके की सहानुभूति रखनेवाली पात्र है । परन्तु योके को सहायता देने केलिये वह तैयार नहीं हैं । इस असाधारण परिस्थिति में भी सैल्मा, स्वार्थी और क्रूर स्त्री के रूप में सामने आती है । उसका दूसरों के साथ सम्बन्ध है, केवल विरोध का । सैल्मा का विरोध इतना दृढतर है कि फैटोग्राफर के, नदी के गंदे पानी पीकर बीमार हो जाने और अपनी दुकान जलाकर पानी में कूदकर मर जाने पर भी [illegible] नहीं होती ।

सैल्मा बर्फ के नीचे दबी है और पीडा से बहुत कुछ सीख गई है । अपनी परिपक्वता के कारण सैल्मा मरती हुई भी जीती है । उसमें किसी [illegible] का विरोध नहीं है न योके के प्रति न उनके हिंस्र भावों के प्रति, मृत्यु के प्रति, उसमें एक करुणा भाव है । योके अनुभव करती है कि "प्याला तश्तरी भी उठाती है [illegible] ओम की ओर भी हाथ बढाती है, तो मानों इन निर्जीव चीज़ों को भी दुलारती और कोसती है ।"

उपन्यास में सेल्मा के चरित्र के दो पहलू सामने आते हैं। अपरिपक्व अवस्था में वह स्वार्थी थी। बाहर के प्रति उसके मन में विरोध था। लेकिन यान एक्लोफ की उदारता और त्याग से उसकी प्रवृत्तियाँ बदल गयीं। यान से ब्याह करने से एक आत्मसमर्पण और एक आत्मसम्मान का भाव उसमें आता है। योके के सम्वादों के नीचे कैद होने पर ये भाव और भी उजागर होते हैं। मृत्यु के प्रति तटस्थता और एक प्रकार की उपेक्षा, समस्त बाह्य संसार के प्रति एक करुणा का भाव, अपने कष्टों के प्रति तटस्थ द्रष्टा की मनःस्थिति मृत्यु की छाया में भी जीवन के क्षणों को सहज भाव से भोगने की क्षमता स्वयं को किसी की दया का पात्र न बनने देने की इच्छा और अन्य चेष्टायें, सेल्मा के चरित्र को ऊँचा उठा देती है।

अजनबीपन, अकेलापन, संत्रास और कुंठा उसके पात्रों में कहीं-कहीं वर्तमान हैं। योके और सेल्मा के संभाषण में अनेक स्थलों पर अजनबी शब्द का प्रयोग है साथ ही साथ अजनबी मन में आक्रोश और विवशतायें व्यक्त हैं। योके के संभाषण हैं " आंटी सेल्मा इन बातों को नहीं सोच सकती, नहीं तो मैं उससे इस बारे में बात करती। उसके जीवन में कुछ है जो कि इन सब बातों से बिलकुल अलग है। वह मेरे लिए अजनबी है, लेकिन लगता है कि उसमें कुछ ऐसा सच है जो मैं ने नहीं जाना है। मेरे सच से बिलकुल अलग और दूसरा सच।"[44] बूढ़ा सेल्मा किसी का भी सहारा या साथी नहीं चाहती है। वह कहती है "मैं ने चाहा था कि अन्तिम दिनों में कोई मेरे पास न हो। लेकिन वह क्या मैं कुन सकी ? तुम क्या समझते हैं कि इससे मुझे तकलीफ नहीं होती कि जो मैं अपनों को भी नहीं दिखाना चाहती थी उसे देखने के लिए भगवान ने-

एक एक अजनबी भेज दिया ।"[115]

दूसरे स्थान पर वह ...ती है "बुझे हुए बन्द चेहरे, गालों पर की खिड़कियाँ ही बन्द न कर ली ... गयी हों बल्कि परदे भी खींच दिये गये हों दबी हुई भावना...ओं पर निर्मम आवाजों, भावना... जो माँगती हो उसे जंजीर से ... लना चाहती लेना ...ीं । अजनबी चेहरे, अजनबी आवाजें, अजनबी मुद्रायें और वह अजनबीपन केवल एक दूसरे को दूर रखकर ... ...ों का ही नहीं है बल्कि एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने की असमर्थता का भी है—जातियों और संस्कारों का अजनबीपन, जीवन के मूल्य का अजनबी... ।"[116] इस प्रकार देखने पर ...ल्मा के चरित्र में सब कहीं अजनबीपन झलकता है । उपन्यास का ना...करण भी सार्थक हो जाता है ।

योके

योके युवती है, वह अपने प्रेमी सोरेन के साथ बर्फ की यात्रा करने आई थी और अप्रत्याशित रूप से बर्फ के नीचे कैद हो गई ... । तीन चार महीने बर्फ के नीचे रहने की चिंता ही उसे विवश बना देती है । योके को धीरे धीरे कैद की वह जिन्दगी असह्य होने लगती है । ... सेल्मा के साथ हो... ...र भी अजनबी है । सेल्मा और योके के बीच ... अलगाव है कि सेल्मा की प्रत्येक बात योके के विरोध भाव ... को जागृत कर देती है । सेल्मा की विवशता का दर्शन सहजता जीवन से आसक्ति, ईश्वर में विश्वास आ... योके को असह्य लगती है । उसे लगता है कि मृत्यु उसके कंधों पर सवार होकर उसका गला घोंट रही है । कैसा बेपनाह है वह पंजा जो छोड़ेगा नहीं लेकिन जिसकी उंगलियों की छाप भी नहीं पड़ेगी । उसकी इच्छा होती है कि वह जोर से चीखे की ...ती

हुई लकड़ी उठाकर सत्मा की कलाइयों पर दे मारे । उसे लगता है कि मरती हुई बुढ़िया अपनी अंतिम घड़ियों में भी उसके युवा जीवन का अपमान कर रहा है, उसे नीचा दिखा रही है ।

मृत्यु से योके कितनी आतंकित है उसका पता उसका निम्नलिखित चिंतन से चलता है मृत्यु-मृत्यु उसी की मात्र प्रतीक्षा उधर बर्फ हो या न हो उधर हो भी हो या न हो । क्या सेल्मा की प्रतीक्षा मेरी प्रतीक्षा से इसलिए कुछ भिन्न है कि उसे कैंसर है और मुझे नहीं ऐसा कि भिन्न भी बात में है कि उसके पास कार्य-कारण की संगति का सबूत है और मेरे पास वह भी नहीं है ? क्या मैं ज्यादा लाचार ज्यादा दयनीय ज्यादा मरी हुई नहीं हूँ ? [143] यह दर्शन योके को मान्य नहीं है । अंत में जब जाती है, योके उसकी मृत्यु गंध से बेचैन हो जाती है, वह मृत्युगंध मानो सर्वत्र भर रही थी । योके दरवाजे बन्द करने का प्रयत्न करती है फिर भी वह मृत्युगंध से विक्षिप्त सी हो जाती है । उसे सर्वत्र यहाँ तक कि अपनी देह में भी मृत्युगंध का अनुभव होता है " वह और मृत्युगंध अकेली वह और सर्वत्र व्याप्त हुई मृत्युगंध के साथ अकेली वह ।"[144]

ईश्वर के प्रति योके में विश्वास नहीं है सर्वत्र विरोध का भाव है । ईश्वर के अधिकार के विरुद्ध यह अस्वीकारती है । वह सोचती है.... "क्या कहीं भी ईश्वर है, सिवा मानवों के बीच के इस परस्पर क्षमा याचना के सम्बन्ध को छोड़कर यह क्षमा तो अभ्यास नहीं है । याचना भी अभ्यास नहीं है तब यह सच है और ईश्वर है तो कहीं गहरे में इसी में होगा.......पर क्या क्षमा कैसी क्षमा किससे क्षमा ? मैं जो हूँ, वही हूँ, और सेल्मा, सेल्मा मर चुकी है.....हे ही नहीं फिर भी क्षमा सेल्मा से ईश्वर से नहीं तो कि बीमार है और गंधाता है--मृत्युगंध ईश्वर.

...के के मन ... अन्मा ...कृति करुणा आती है । लेकिन वह उसे ...ती है । वह सोचता ... "करुणा गलत है बचाव उसमें नहीं है । घृणा भी नरक का द्वार है । मैं दया ...के भी वहीं गिरती जहाँ घृणा करके गिरती ।"[50]

अविश्वास, घृणा, विरोध, अनास्था आदि भावों से युक्त योके ... के नीचे से निकल आती है । उसके बाद योके का एक दूसरा चेहरा हमारे सामने आता है जो विवशता से भरपूर है । आगे योके और पाल ... बिगड़ जाता है । जर्मन सैनिकों के सामने वेश्या के जीवनबिताने को वह मजबूर हो जाती है । मार खाने के लिए तैयार होकर एक गली में पड़ी योके को जगन्नाथन ...रख लेता है । जर्मन सैनिकों के सामने योके की स्थिति मार्मिक है ।- "उसकी ...ों में ..., पतली कलाईयों की एक समूची ...बंधी ... थी । वह खुली आँखों से ... दृष्टि से चारों ओर ... रही थी ---।"[51]

जगन्नाथन को ... दृष्टि से योके का जीवन सफल हो जाता है । ... समझता है । जगन्नाथन की व्यापक करुणा, क्षमाशीलता, मानवीयता आदि योके में एक नये जीवन का भावबोध ... है । अब मृत्यु उसके लिए डरावनी चीज़ नहीं है, उसका वरण वह खुशी के साथ करती है । मरते समय ... कहती है, "मैं चाहती थी कि मैं किसी अच्छे आदमी के पास मरूँ ... क्योंकि मैं मरना नहीं चाहती थी - कभी नहीं चाहती थी ।"[52] मरती मरती वह सबसे क्षमाकर ...ती है । मृत्यु से अभी उसे संतोष है "मैं ने चुना, हम अक्सर नहीं चुनते, अच्छे आदमी चुनते हैं । मैं ने आदमी चुना । अच्छा आदमी । उसी में जिऊँगी ।"[53]

योके के जीवन पर विचार करते समय लगता है कि उसका प्रारंभिक जीवन मृत्युहीन है । उसके जीवन का प्रथम चरण अनास्था अविश्वास, क्षमाहीनता, नास्तिकता विरोध आदि से भरा है । जीवन के प्रति वह परेशान है । कुछ विशेष परिस्थितियों में वह टूट जाने को विवश होती है । अंत में उसके चरित्र में परिवर्तन होता है आस्था ... और विश्वास ... जीवन में स्थान पाते

"अपने अपने अजनबी" के गौण पात्र हैं पाल सोरेन, जगन्नाथन आदि वे योके और सेल्मा के चरित्रों से संबंधित हैं। उनका कोई स्वतंत्र महत्त्व नहीं है। "अपने अपने अजनबी" के पात्रों के बारे में संक्षेप में विचार करते समय कहना होगा कि इसके प्रमुख पात्र योके और सेल्मा एक ऐसे रेगिस्तान में बसे हुए व्यक्ति हैं जिनके चारों तरफ मृत्युभय अनास्था और कुंठा फैली हुई है और इससे बचने [illegible] में वे लगे हुए हैं।

"अपने अपने अजनबी" में सेल्मा और योके को छोड़कर यदि कोई पात्र हमारे ध्यान को आकर्षित करता है तो वह है जगन्नाथन। जगन्नाथन का व्यक्तित्व विशेष प्रकार का है। वह उपन्यास के अंतिम भाग पर आते आते पाठक जगन्नाथन के व्यक्तित्व की शीतलता अनुभव करने लगते हैं। सेल्मा और योके जैसे पात्रों के बीच से एक ठंडी लहर के समान वह बहता हुआ नज़र आता है। योके के कुंठा ग्रस्त और आस्थाहीन जीवन को फिर से नयी दिशा प्रदान करने में वह सफल निकलता है। पाल सोरेन से वंचित और सैनिकों द्वारा अपमानित योके को वह ऐसे क्षण में सहारा देता है जब उसको उसकी बहुत अधिक ज़रूरत है। और योके भी जगन्नाथन की उपस्थिति में शांति और आनंद का अनुभव करने लगती हैं, उसे लगता है कि जीवन में जगन्नाथन ही एक ऐसा पात्र हैं जो उसको पूरी तरह पहचान पाया था। इसलिए वह उसे भला आदमी समझती है। और इस भले आदमी के सामने मृत्यु का वरण करना भी उसे अनुग्रह ही प्रतीत होती है।

पाल सोरेन और जगन्नाथन पुरुष के व्यक्तित्व के दो पहलुओं के प्रस्तुत करते हैं। पाल सोरेन स्त्री को वासना तृप्ति का साधन मानता है तो जगन्नाथन स्त्री को करुणा और सहानुभूति का पात्र मानता है। वेश्या होने पर भी योके के प्रति जगन्नाथन की जो दृष्टि है वह इसकी परिचायक है। उपन्यास के अंत तक आते आते स्वस्थ मनोवृत्ति को लेकर जीवन की विसंगतियों को सहानुभूति के साथ देखनेवाले अनासक्त पात्र के समान जगन्नाथन सामने आता है। मृत्युबोध के भार के नीचे दबी हुई जिन्दगी के और उसकी [illegible] को प्रतिपादित

सर्वाधिक... स्वरूप को प्रस्तुत किया है । इस उपन्यास के पात्र, योके, ... भा, पाल सोरन् जगन्नाथन आदि एक वैयक्तिक पात्र हैं । शेखर एक जीवनी नदी के द्वीप आदि उपन्यासों के पात्रों के समान इस उपन्यास के पात्र भी अपनी आशा-निराशाओं के भार अपनी ही कंधों पर लेकर अपनी अपनी रास्तों पर अकेले चलनेवाले हैं ।

अज्ञेय के उप... सों में प्रतिबिम्बित समाज

अज्ञेय का रचनाकाल परिवर्तनों का युग है । द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिकाओं से जर्जरित और पीडित समाज है । पूँजीपति वर्ग का तीव्र विकास इस युग की विशेषता है । व्यक्तिगत रूप से आम जनता बहुत अधिक पीडित है । प्राचीन मान्यतायें और परम्पराओं को ढुकरा देने की प्रक्रिया चलती रहती थी । आदमी के मन की व्यथा जलने लगती है । इन परिस्थितियों के मध्य है ... कार अज्ञेय की तूलिका । यहाँ इस परिस्थिति का कितना प्रभाव उसकी कला सृष्टि पर है, यही ध्यान देने योग्य है । अज्ञेय के प्रथम उपन्यास ... एक जीवनी के पात्र हैं शेखर, सरस्वती, शशी, मेहरीन आदि । उन्हें किसी ... समाज का प्रतिनिधि न कहना गलत है । उनके आलोचकों ने अज्ञेय के पात्रों को समाज से कटे हुए व्यक्तिगत पात्र कहे । लेकिन शेखर एक विद्रोही पात्र है । वह एक समाज में भाग लेकर ही जीता है क्योंकि वह मनुष्य है । मनुष्य एकाकी होकर जी न सकता । उसकी विद्रोही प्रवृत्तियों में उसके साथी हैं, प्रेम के प्रसंग में भी उसके सामने एक सामूहिक ढाँचा है । आदि से अंत तक शेखर का जीवन एक विशेष मार्ग पर है । साधारण जन समाज में उसे ढूँढना बुद्धिशून्य है । लेकिन उसे एक चुने हुए समाज का प्रतिनिधि समझ सकता है । वह समाज है अपने व्यक्तिगत आशा - अभिलाषाओं के बल पर जीनेवाले विद्रोही व्यक्तियों के । इसलिए आलोचकों द्वारा घोर वैयक्तिक कहनेवाले शेखर के पीछे भी शेखरों की पंक्ति है । उसके समान अन्य लोग है ।

है, पता लिखी है। भुवन विवाहिता रेखा के प्रेमी है। रेखा के पति जोते वक्त ही, वह केवल क्रीडा केलिए भुवन के पीछे दौडती है। यहाँ उसके शब्दों में वह कहती है कि पति से जो कुछ न मिला उसकी खोज में वह गया।
"भुवन के विवाह- प्रस्ताव अवसर पर कहती है कि पति यह भुवन को तलाक करके उसके भविष्य लेने केलिए तैयार न है। सामाजिक व्यवहार का निम्मन समाज करें मेरा आत्मसंजीवन का नहीं वह मेरा है। इसी प्रकार भुवन का ब्याह न करके वह चन्द्रमाधव को स्वीकारती है। यहाँ भुवन गौरा से विवाह करता है। इनके जीवन में कुछ व्यक्तिगत विशेषतायें है ही लेकिन इनके पीछे भी एक समाज है। वह अभिजात्य समाज है। आभिजात्य वर्ग की आभिजात्य वृत्तियों से युक्त एक समाज। अज्ञेय के उपन्यासों में प्रतिबिम्बित समाज आभिजात्य वर्ग का है। यह मध्य वर्ग के या निम्न वर्ग के समाज से भिन्न है। आभिजात्य वर्ग के समाज की विशेषतायें इसमें वर्तमान है। उनके जीवन कुछ विशेष प्रकार की सुख-सुविधाओं से युक्त है। उन्हीं सुविधाओं केलिए वे नियम बनाते है बिगाडते है। इन्हीं आभिजात्य वर्ग के समाज ही अज्ञेय के उपन्यासों में है विशेषकर "नदी के द्वीपों"।

"अपने अपने अजनबी" के प्रमुख पात्र है योके और सेल्मा। योके और सेल्मा दोनों एक विशेष प्रकार के पात्र हैं। योके युवती है। मृत्युबोध से आतंकित है, सेल्मा वृद्धा है मृत्यु से निर्भीक धारणायें रखती है। वह योके के स्वभाव से उल्टा है। सेल्मा के मनोभावों से भिन्न है योके की प्रवृत्तियाँ। बर्फ के नीचे दबे है दोनों एक मरने को विवश है दूसरा जीने को। उपन्यास के अंत में दोनों की मनस्थितियों में परिवर्तन आता है। मृत्यु को देखते वक्त, मृत्यु का अनुभव करते समय उनकी मनोकामनायें बदल जाती है। इसी प्रकार मृत्युभय से क्षण बोध से युक्त इस उपन्यास में समाज तो नहीं है। लेकिन पात्रों के पूर्वजों से यहाँ समाज की प्रतीति आती है। लेकिन साधारण सी बातें यहाँ देख न सकते। परिवेश नूतन है पात्र और उनकी मनस्थितियाँ भी नूतन है। यहाँ समाज का मुँह अछूता है। बर्फ के नीचे दबे पात्र बाहर आने पर अन्य

प्रतिबिंबित है लेकिन वह साधारण समाज से भिन्न है । उस समाज के सदस्य अपने ही सीमित आदर्शों पर जीते है । अपने रास्ते पर चलते है । अपने मन के अनुकूल की खोज में भटकते है ।

समाज के प्रभाव अज्ञेय के पात्रों पर

यहाँ समाज से तात्पर्य अज्ञेय के रचनाकाल के समाज से है । रचनाकाल का समाज द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के पीड़ित और आतंकित समाज है । जनता पीडित निराश और विपन्न है, उस समय भारत में स्वाधीनता संग्राम चल रहा था । शेखर के चरित्र-चित्रण में स्वाधीनता संग्राम का कुछ प्रभाव है । अस्पष्ट की स्पष्ट रेखायें हैं । क्षणवादी विचारधारा युद्ध के बाद की विक्षुप्त मनस्थिति का परिणाम है । विद्रोही चेतना अंग्रेजी शासन की प्रतिक्रिया स्वरूप है । शेखर एक जीवनी" में समाज का या सामाजिक यथार्थ का कुछ पक्ष है । यहाँ शेखर का प्रेम उसका व्यक्तिगत जीवन आदि उसके अपने हैं । सामाजिक यथार्थ से ही मिलता-जुलता है अज्ञेय पात्र । लेकिन उनके जीवन में भी उस समाज का प्रभाव है । पर सामाजिक यथार्थ और अज्ञेय के पात्रों के यथार्थ में अंतर है । अज्ञेय के पात्रों का यथार्थ उनके समान कुछ सीमित लोगों को यथार्थ है । वह जन समूह से नहीं मिलता । लेकिन उन विशेष पात्रों का अज्ञेय समाज है । "अपने अपने अजनबी" के पात्र योके और सेल्मा पश्चिमी विचारधारा से प्रभावित पात्र है । मृत्युबोध से पीडित है योके का मन । वे दोनों उपन्यास के अधिकतर समय रहते हैं बर्फ के नीचे । परिस्थिति विशेष से ही उनके मन में विकारों की क्रूरता आती है, जो स्वाभाविक है । योके सेल्मा के साथ रहने पर भी अजनबी है । सेल्मा को मारने तक का श्रम करती है योके । लेकिन अपने जीवन के अंत में उन दोनों की आदत में बदलाव आता है । यहाँ अपने अपने अजनबी के पात्र और उनकी प्रवृत्तियाँ सामाजिक यथार्थ के अनुकूल न है । सेल्मा याकोसी यान एकलोफ को पीने को जल भी नहीं देती है । इसी प्रकार के आंतरिक व्यवहार आज वर्तमान है । लेकिन सभ्य कहने केलिए भी कम लेना । सेल्मा [illegible] भी [illegible] न है । अज्ञेय के पात्रों का संबंध है एक

विशिष्ट प्रकार के सीमित समाज से ।

वैयक्तिकता अज्ञेय के उपन्यासों में

वैयक्तिकता अज्ञेय के जीवन दर्शन की एक महत्वपूर्ण विशेषता है । अज्ञेय के मन में समाज से अलग अलग स्वतंत्र व्यक्ति का चिरंतन स्वप्न है । वे व्यक्ति परक उपन्यास लिखते है । "शेखर एक जीवनी" का शेखर वैयक्तिकता से युक्त है । शेखर उसके मन के आह्वान को प्राधान्य देता है । स्वतंत्रता की खोज में वह निरंतर भटकता है । उसे ... ग के बदले अदालत मिलता है । "नदी के द्वीप" की रेखा अपने अंतर्मन के आह्वान के अनुसार ही जीना चाहती है । "रेखा भुवन से कहती है "मैं ने एक बार तुम से कहा था, हम जीवन की नदी के अलग अलग द्वीप है । - ऐसे द्वीप स्थिर नहीं होते, नदी निरंतर उनका भाग्य गढ़ता चलता है । द्वीप अलग अलग होकर भी निरंतर घुलते और पुनः बनते रहते है - नया जोश, नये अणुओं का मिश्रण नयी तलछट एक स्थान से मिटकर दूसरे स्थान पर जमते हुए नये द्वीप -------" [53] रेखा सेक्स की तृप्ति केलिए राह खोजती है । पति के जीवित रहने पर भी उसकी इस प्रवृत्ति व्यक्ति-स्वातंत्र्य का परिणाम है । व्यक्ति के सुख केलिए उसकी सुविधा केलिए समाज का भय होना है । इसलिए ही भुवन के विवाह प्रस्ताव को रेखा अस्वीकारती है । वे कहते है ".. वर उसे मानने न मानने की बात जिस स्तर की होती है - उसे सामने कैसे लाया जा सकता है ? कम से कम पृच्छा की दृष्टि के सामने ? जिनसे उसकी चर्चा हो सकती है । पूछते ही नहीं वे जानते है ।" [54]

उपन्यासों में लेखक के दर्शन का प्रभाव

अज्ञेय के तीनों उपन्यास "शेखर एक जीवनी" "नदी के द्वीप" और "अपने अजनबी" उनके जीवन दर्शन से प्रभावित है । "शेखर एक जीवनी" का क्रांतिकारी विद्रोही पात्र शेखर आदि से अंत तक अज्ञेय के निजी दर्शन का परिचायक है । बचपन की अनेकों घटनायें अज्ञेय के अपने जीवन की है । " स्कूल जीवन में

उनकी दृष्टि आधुनिक है । संसार में सब के सब लोग समान है । अछूतों के प्रति जो हीनभाव वर्तमान था, शेखर को पसंद नहीं है । यहाँ जो विचार दर्शन वर्तमान है वह शेखर नामक पात्र का दर्शन नहीं है, उस पात्र को रूप और जीवन देनेवाले कलाकार अज्ञेय का है ।

भारत की स्वतंत्रता केलिए शेखर, क्रांति करता है । शेखर स्वतंत्रता की खोज में निकलता है । अंग्रेजों के विरुद्ध वह असहयोग आन्दोलन में भाग लेते वह कैदी हो जाता है । जेल में भी उसका दर्शन, रामजी, मोहसिन आदि के साथ जीने की सहायता देता है । बाद में जेल से मुक्त आने पर शशी से उसका व्यवहार महत्वपूर्ण है । शेखर के जीवन में जो दार्शनिक विचारधारा काम आती है । वह लेखक की दार्शनिक दृष्टि की झलक है ।

"नदी के द्वीप" के प्रधान पात्र है रेखा और भुवन । उनके जीवन की प्रधान घटनायें सेक्स संबंधी है । रेखा पति के जीवित रहते समय भी अन्य व्यक्ति के पास प्रेम केलिए जाती है । वह कहती है कि यह व्यक्ति-स्वातंत्र्य के बल पर महत्तर ही है । व्यक्तिबद्धता के दायरे से देखने पर वह उचित ही है । आधुनिकता के परिवेश भी इससे भिन्न नहीं है । व्यक्ति स्वातंत्र्य के नाम पर रेखा की सेक्स संबंधी विकृतियाँ न्याय सिद्ध की गयी है । अंत में भुवन के विवाह प्रस्ताव को भी वह ठुकरा देती है । रेखा व्यक्ति की अभिलाषाओं की पूर्ति केलिए समाज की मान्यताओं का परवाह नहीं करती है । भुवन के सारे व्यवहार भी इसी प्रकार है । भुवन और रेखा के प्रेम संबंधी व्यवहारों केलिए उत्तरदायी उन दोनों के अंतर मन के आह्वान मात्र है । सामाजिक व्यवहार या समाज की मान्यता की वे परवाह नहीं करते हैं । भुवन के चरित्र में अज्ञेय का दर्शन ही नहीं उनके व्यक्तित्व भी झलकता है । भुवन रेखा को त्यागकर गौरा से ब्याह करता है । रेखा भुवन के मार्ग को साफ करने केलिए और एक व्यक्ति को स्वीकार करती है । इन सभी प्रवृत्तियों में अज्ञेय के दर्शन का ही प्रभाव है ।

"अपने अपने अजनबी" के प्रमुख पात्र है योके और सेल्मा । जगन्नाथन भी एक महत्वपूर्ण पात्र है । मृत्यु के भय पोड़ा बोध, अस्तित्ववादी विचारों से प्रभावित है । इन पश्चिमी विचारधाराओं का प्रभाव इस उपन्यास में बहुत अधिक है । लेकिन पश्चिम में केवल बिताने समय उनको विचारधाराओं में पश्चिम की झलक आयी । इसी झलक अपने अपने अजनबी में दृष्टिगोचर होती है । जगन्नाथन और योके के बीच के संबंध में अज्ञेय की दार्शनिकता का स्फुरण है । योके के बीच के संबंध में अज्ञेय की दार्शनिकता का स्फुरण है । योके और सेल्मा के तर्क-वितर्कद्वारा अज्ञेय पूर्व और पश्चिम के मृत्युदर्शन के व्यक्त करने का प्रयास करते है । अज्ञेय के उपन्यासों में अपने जीवनदर्शन का सशक्त रूप प्रतिबिंबित होने लगता है । बुद्धिजीवी वर्ग के पात्रों को चुनकर उनके मानसिक स्थितियों का विशेष अध्ययन प्रस्तुत कर दर्शन के पुट से उनके व्यक्तित्व को यथा-संभव सुन्दर बनाने का प्रयास अज्ञेय के प्रत्येक उपन्यास की विशेषता ।

व्यक्ति और समाज

समसामयिक युग की मान्यतायें बदल गयी । उसके अनुसार व्यक्ति और समाज के बीच के संबंध भी बदल गया । सामूहिक मान्यताओं को प्रधानता देने वाली पुरानी [illegible] बदल चुकी है । आज तो व्यक्ति की आज़ादी को विशेष महत्व दिया गया है । व्यक्ति चेतना को उभारने वाले विचारकों का यह मत था कि व्यक्ति समाज से किसी भी दृष्टि में कम महत्वपूर्ण नहीं है । इस कारण युग युग से आनेवाले प्राचीन परंपराओं के भार को ढोने केलिए उसको बाध्य नहीं किया जा सकता । इसके साथ साथ व्यक्ति की सोई पड़ी हुई अभिलाषायें और आकांक्षायें समाज के सीमित दायरों को तोड़कर नैतिक आदर्शों के प्रति प्रश्न चिह्न उठाने लगी । जागरण के सन्देश को लेकर, व्यक्तित्व की ऊँचाइयों को छूने की अदम्य अभिलाषायें लेकर, युवक पीढ़ी ने संघर्ष करना शुरू किया । इस संघर्ष के साथ व्यक्ति और समाज के संबंधों का जो आदर्शात्मक स्वरूप था वह खोखला सा हो गया । यहाँ से विचित्र-राग-रागिणियों में प्रवाहित होनेवाले [illegible]

संघर्ष करनेवाले व्यक्ति की चेतना के इतने विविध स्वरूप दिखाई पड़ने लगे। उनके सम्बन्ध में किसी प्रकार का पूर्वनिश्चय अनुमान लगाना ही असंभव सा हो गया इस विशेष परिस्थिति में ऐसे उपन्यासों की रचना होने लगी जिनके पात्र सामाजिक मूल्यों के प्रति प्रश्न खड़ा करनेवाला और जीवन - मूल्यों को निषेधात्मक दृष्टि से देखनेवाले विद्रोही पात्र बन गये । पाश्चात्य देशों में दिखाई पड़नेवाली इस प्रवृत्ति का प्रभाव भारतीय साहित्य में भी आने लगा । व्यक्ति के जीवन के अनदेखे कोणों की ओर नयी रोशनी फेंकने का प्रयास हिन्दी साहित्य में भी दिखाई पड़ने लगा। विशेषकर अज्ञेय जैसे उपन्यासकारों की चेतना व्यक्ति के जीवन कुंठायें और विडम्बनायें चित्रित करने में ज्यादा जागरूक होने लगी । इस का यह परिणाम निकला कि अजीब अजनबी से पात्र जन्म लेने लगे और उनकी परिस्थितियाँ भी अजनबी सी लगने लगी । आम जीवन से कटे हुए मनुष्य आम परिस्थितियों से भिन्न परिस्थितियों साधारण लोगों से भिन्न प्रतिक्रियायें सब अज्ञेय जैसे उपन्यासकारों के उपन्यासों में इसलिए परिलक्षित होती है । उन्होंने "शेखर एक जीवनी", "नदी के द्वीप", "अपने अपने अजनबी" जैसे उपन्यासों में जिन व्यक्तियों का जिन परिस्थितियों का, जिन प्रतिक्रियाओं का चित्रण प्रस्तुत किया है वे सब बदलते हुए समाज की समस्याओं का सम[illegible] करने लगता है । अगर सामाजिक यथार्थ के धरातल पर खड़े होकर कोई समीक्षा करना चाहता है कि उसे लगा था कि यह सारी स्थितियाँ मानसिक प्रतिक्रियायें व्यक्तिगत अवलोकन सब रचनाकार की भावभूमि से ही जन्म लेते हैं, उनका यथार्थ से और आम जीवन से क्या सम्बन्ध रह गया है । चुने हुए लोगों की इनीगिनी प्रतिक्रियाओं के चित्रण को कभी भी हम सार्वजनिक साहित्य का स्वरूप नहीं मान सकेंगे अतः उपन्यासों में प्रतिबिम्बित व्यक्ति और समाज और मान्यतायें सब साहित्यकार की बदलती मनस्थितियों का ही स्वरूप हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं । इस दृष्टिकोण से ही हम उनके उपन्यासों का मूल्यांकन कर सकते हैं ।

अज्ञेय की सामाजिक मान्यतायें

अज्ञेय के समाज सम्बन्धी विचार साधारण से भिन्न है । व्यक्तिवादी चेतना के प्रकार में ही उनके विचारों का स मूल्यांकन हो सकता है । उनके अनुसार समाज रूपी नदी के मध्य में व्यक्ति द्वीप के समान होता है । अपने व्यक्तित्व को मिटाकर समाज में मिलना अज्ञेय को मान्य नहीं है । उनके तीनों उपन्यास पूर्णतः व्यक्तिवादी नहीं है । "शेखर एक जीवनी" की व्यक्तिवादिता के सम्बन्ध में डा. नगेन्द्र का मत देखिये- "समस्याओं के विश्लेषण की भू. में समाज जीवन का मंथन नहीं, उनका जो रूप हमारे सामने आता है वह शेखर की वैयक्तिक प्रतिक्रियाओं के पात्र में ढलकर तैयार हुआ है-केवल विचारित है"

"शेखर एक जीवनी" का प्रमुख पात्र शेखर जन्म से मृत्यु तक अपने अंतर्मन के आह्वान के अनुसार ही जीता है । वह किसी भी समाज का प्रतिनिधि नहीं है । शेखर अपने को एकाकी पाता है । व्यक्ति के रूप में देखता है और व्यक्तिगत आशा आकांक्षाओं की पूर्ति केलिए काम करता है । परन्तु समाज से वह बिल्कुल कटा नहीं है । समाज की अच्छाई केलिए कभी कभी काम करता है। शेखर ... केलिए काम करता है । बीमार लोगों की सहायता करता है । लेकिन हमेशा सामाजिक व्यवहार व्यक्ति की ओर उन्मुख है "शेखर एक जीवनी" में बौद्धिक भूमिका पर शेखर की मनःस्थितियों का विश्लेषण किया गया है ।

अज्ञेय का दूसरा उपन्यास है "नदी का द्वीप । पूर्ण रूप से यह कहा जा सकता है कि नदी के द्वीप उनकी व्यक्तिवादी चेतना का अभिव्यक्तीकरण है । उसके सभी पात्र समाज से कटे हुए हैं । उनके पात्रों का स्तर वर्ग का स्तर नहीं है, समूह का भी नहीं है बल्कि व्यक्तिगत है । भुवन और रेखा के चरित्र विशेषकर व्यक्तिवादी आधार पर है । इन दोनों पात्रों में संवेदनशीलता भावमयता, काव्यात्मकता और कला संगीत प्रति आकर्षण हम देखते है लेकिन ये सभी उदात्त प्रवृत्तियों के केन्द्र केवल है । स्वस्थ सामाजिक

निरूपण हमें पर परिलक्षित नहीं होता । शिक्षित और बुद्धिवादी जीवियों की प्रेम कहानी है नदी के द्वीप लेकिन वे अपने केंचुल में सिमटे हुए है । आदि से अन्त तक "नदी के द्वीप" के हर एक पात्र अपने ही बनाये हुए ताने बाने में उलझा हुआ है । इस एकांकी व्यस्तता का न तो पात्रों का कोई खेद है और न लेखक को । तभी जैसे अज्ञेय के नदी के स्वत: स्वतंत्र द्वीप हो जो परस्पर सम्बन्धित होते हुए भी पृथक: विभिन्न जल वीचियों से तरंगित रहकर पृथक भी है । घटनाओं की ये वियाँ इन द्वीपों को छूती तो है लेकिन उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व पर प्रभाव डालने में असमर्थ रह जाती है ।

नदी के द्वीप" शीर्षक ही समाज के बीच व्यक्ति की प्रतिष्ठा की भी अभिव्यक्ति देता है, पात्रों के माध्यम से ही व्यक्ति की महत्ता की स्थापना होती है। रेखा भुवन से कहती है- मुझे तो लगता है, जब आप मानव से र मानवता की बात करने लगते है,तभी आप जीवन से दूर चले जाते है क्योंकि जीवन मानव का है यथार्थ मानव है, मानवता केवल एक अनुभावना- एक गुणित सत्य-कुछ समीक्षकों ने अज्ञेय के इस व्यक्तिवादी दृष्टिकोण में मौलिकता निष्ठा विनम्रता सहज-भाव पूर्णता तथा सर्जनात्मकता की गतिशीलता परिलक्षित की है । "अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या" में भी श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी का वक्तव्य है - व्यक्तित्व जो गौ क और विशिष्ट है, पर विनम्र है जो नश्वरता अनुभव किये हुए बिना उसे सहज भाव से स्वीकार करता है और परिवेश से अलग रह अपनी सर्जनात्मकता से गतिशील रहता है । नदी के द्वीप की यह मूल परिकल्पना कृतिकार अज्ञेय की रचना दृष्टि के प्रमुख तत्वों में से है।" रचनाकार का वैयक्तिक दृष्टिकोण उसकी रचना दृष्टि होती है ।

अज्ञेय के उपन्यासों में सामाजिक सम्मान के योग्य पात्र है या न है उनके उपन्यासों के पात्र भावुक है, कुंठाओं के अंतरतम की प्रति छिन्न करनेवाले है । वे सामाजिक परिप्रेक्ष्य में सम्मान के योग्य नहीं है । जीवन में सेक्स की सार्थकता नकारा नहीं जा सकता लेकिन हमारे संपूर्ण जीवन केवल सेक्स मात्र पर आधारित करना सामान्य है । अहम और सेक्स से परिलक्षित है अज्ञेय के पात्र । यदि वे परस्पर मिलते है तो उसके मूल में सेक्स है ।

पात्रों की चिन्ता और व्यवहार में कहीं भी मानवीयता परिलक्षित नहीं होती है । कहीं भी उदात्त जीवन का प्रस्फुटन नहीं है । अन्तर्संघर्ष की चरमबिन्दु पर अपने ही व्यक्तित्व की स्थापना के लिये अपने सभी व्यक्तित्व को त्यागना पड़ता है। उनके जीवन कम्पलिकेटेड होते अवश्य है लेकिन वह कम्प्लिकेशेंट सेक्स का ही है ।

अज्ञेय का नवीन तम उपन्यास है "अपने अपने अजनबी" । अज्ञेय ने शेखर एक जीवनी के माध्यम से थोड़ा बहुत युगीन और सामाजिक जीवन का अंकन किया है । शेखर से "अपने अपने अजनबी" तक आते आते कथानक बहुत सीमित हो गया है । मृत्यु से संघर्षशील प्राणी समाज की बात करे भी तो कैसे उपन्यासकार ने अत्यन्त कलात्मकता के साथ ऐसे असाधारण वर्गों की मनोवृत्तियों का उद्घाटन किया है । यहाँ उपन्यासकार को समष्टि की ओर आने का अवकाश नहीं मिलता है । उपर्युक्त चर्चा से यह स्पष्ट होता है कि उपन्यासकार अज्ञेय की सामाजिक मान्यतायें बहुत ही निराली है । उनके समाज सम्बन्धी विचार अधिकतर व्यक्ति विचारों के परिप्रेक्ष्य में ही विकसित होते है । सामाजिक मान्यतायें उनके लिए प्रधान नहीं है । व्यक्ति के विचार उसके व्यक्तित्व सामाजिक संवेदनारूपी मुक्ति तत्व से बढ़कर है ।

परंपरा के प्रति व्यक्ति का विद्रोह

अनेक युगों से संचित सामाजिक मूल्यों के आधार पर परम्परा का स्वरूप बनता है । इसलिए परंपरा, विश्वास आचार और अनुष्ठान का सम्मिलित रूप है । वैसे समाज इनके पूर्णतया मान्यता प्रदान करता भी है । लेकिन परंपरागत मूल्यों के प्रति विद्रोह के स्वर भी मुखरित होने लगता है । समाज के बुद्धिजीवि जब विद्रोह का झण्डा उठाते है । तो परिवर्तन के आह्वान नज़र आने लगते है ।

अज्ञेय के शेखर एक जीवनी व्यक्ति शेखर के व्यक्तिगत जीवन की निजी दस्तावेज है। यहाँ नायक शेखर धीरोदात्त नहीं है। शेखर साधारण मानव की दुर्बलता से युक्त है। वह सामाजिक ढाँचे के प्रति विद्रोह करता है। अंग्रेजी शासन के प्रति शेखर के मन में विद्रोह है। वह विदेशी कपड़ों को त्याग देता है। माँ के विदेशी कपड़ों को वह राख कर देता है। अछूतों के प्रति अन्याय देखकर दुःखी है। स्वयं ब्राह्मण होने पर भी ब्राह्मणों के छात्रावास से जाकर, अछूतों के छात्रावास में बसता है। मलाबार जाकर वहाँ अछूतों के लिये स्कूल खुला देता है। इसी प्रकार परंपरा विद्रोह करने की प्रवृत्ति इस उपन्यास के नायक शेखर में स्पष्ट होती है।

अज्ञेय ने अपने भवन्ती के निवेदन में इस प्रकार लिखा है "भोगनेवाले व्यक्ति" और रचनेवाली मनीषा के अलगाव की पुरानी चर्चा में जब कहा गया था कि दोनों के बीच एक दूरी है और जितना बड़ा कलाकार होगा उतनी अधिक दूरी होगी, तब यह नहीं स्पष्ट किया गया था कि दूरी [illegible] की यह प्रक्रिया और वही तो सृजन प्रक्रिया है। कभी कभी कष्टमय है। न यही बताया गया था कि बड़ी दूरी [illegible] आवश्यक है था कि जो भोगा गया उसका भी बड़ा [illegible] आवश्यक है।? दूसरे शब्दों में क्या भावों से उन्मोचन ही महत्वपूर्ण है था कि इसका भी कुछ मूल्य है कि वे भाव कितने प्रबल थे।

अज्ञेय के उक्त विचार का अध्ययन करने पर यह विशेष निष्कर्ष युक्तिसंगत होगा कि अज्ञेय सच्चे अर्थ में कलाकार होने के कारण उनके पात्रों के बीच में दूरी का होना स्वाभाविक है। अज्ञेय के पात्रों में उनके व्यक्तित्व के प्रतिफलन का आरोप अनेक आलोचकों ने किया है। शेखर के बचपन की घटनाओं में से कुछ अज्ञेय के बचपन से मिलती जुलती है। कोट हुनआतर जाने पर माँ - बाप और शेखर का व्यवहार बोलचाल आदि अज्ञेय के बचपन की घटनाओं से एकता पाती है। शेखर के समान अज्ञेय भी माँ से घृणा करते थे और पिता से अधिक प्यारा फिर स्वतंत्रता संग्राम के प्रसंग और जेल का जीवन

[illegible]

"नदी के द्वीप" के प्रमुख पात्र भुवन शेखर का विकसित रूप है । भुवन के चरित्र में शेखर के चरित्र का विकसित रूप देख सकते है । शेखर का विद्रोह सब कहीं उभरता है । भुवन अपने जीवन के कुछ मार्मिक प्रसंगों में विद्रोह करता है । परंपरा का विद्रोह सामाजिक ढाँचे से विद्रोह और उसके ऊपर अपने मन के अनुसार जीने की उसकी चेतना विद्रोह की चरम काष्ठा है । विवाह प्रसंग पर भी वह परंपरा को नहीं मानता है । गर्भवती रेखा को अपना लेना और उसके गर्भ में होनेवाले शिशु को अपना बच्चा स्वीकार करना सशक्त उदाहरण है । रेखा के भविष्य की रक्षा केलिए उसे पत्नि बनाने केलिये भुवन तैयार होता है । परन्तु रेखा इस केलिये तैयार नहीं होती ।

रेखा के चरित्र में भी परंपरागत मान्यताओं का तिरस्कार लक्षित होता है । वह साधारण महिलाओं के समान भीरू नहीं है नही वह किसी की शरण में आकर अपने जीवन के सपनों को सजाना पसंद करती है । वह स्वयं कह देती है कि वह भुवन का भविष्य न लेगी । उसका प्यार मात्र उसका लक्ष्य था । फुलफिलमेंट का क्षण मात्र रेखा चाहती थी जो उसे अपने पति से न मिला था । पूर्णतः आधुनिका होकर रेखा विवाह प्रस्ताव को ठुकरा देती है । अपनी ही राहों पर चलना ही उसका लक्ष्य है । उसे परंपरा का भय नहीं है । व्यक्ति के व्यक्तिगत या सामाजिक जीवन पर परंपरा के भार को स्वीकारने केलिये अज्ञेय तैयार नहीं है । मनुष्य अपने अंतर के आलोक के अनुसार जीता रहे यही उनका ध्येय है । उनके सबके सब पात्र इसी कोठी में आते हैं । मानव के मन में स्वतः होनेवाली इस विद्रोही प्रवृत्ति के परिचायक है अज्ञेय के पात्र । उनके विद्रोह को पात्र मात्र का विद्रोह कहना गलत होगा । "शेखर एक जीवनी" और "नदी के द्वीप" के पात्रों में विद्रोही चेतना पनपती है । आधुनिकता के परिपेक्ष्य में परंपरा के पालन तो मुश्किल है । इसी प्रकार आधुनिक पात्रों के संदर्भ में परंपरा को स्वीकारना भी कठिन है ।

अज्ञेय के उपन्यासों में वैयक्तिकता

अज्ञेय के प्रथम उपन्यास "शेखर एक जीवनी के विवेचना विश्लेषण से स्पष्ट है कि इस कथा-पटल का नायक शेखर किसी भी समाज का प्रतिनिधि नहीं है । शेखर के मनोविश्लेषण ही कथा के प्रवाह में गिरते-हुए बहता है । प्रवाह में सामाजिक चेतना की योजना स्वयं लेखक इसीलिए न मानता है कि उपन्यासकार समाज को छोड़कर चलता है । समाज को प्रथम स्थान न देकर व्यक्ति को प्रधानता देते है । शेखर का बचपन उसका प्रेम, पारिवारिक जीवन, राजनीती बाद में जेलजीवन सब यही विशेषता है । ये विशेषतायें व्यक्ति शेखर की निजी है किसी भी परंपरा या समाज की न है । शेखर का प्रतिनिधित्व एक सीमित वर्ग से करना उचित है । शेखर के समान अन्य व्यक्तियों का निजुत अभाव समाज सत्य से विपरीत होगा । क्योंकि शेखर के जीवन के कुछ पक्ष लेखक में ही परिलक्षित है । शेखर के बचपन की कुछ घटनायें अज्ञेय के बचपन की घटनाओं से मेल खाती है । इसी प्रकार की मानसिकताओं से युक्त और भी कई व्यक्ति हो सकते हैं । ये वर्ग आभिजात्य वर्ग का प्रतिनिधि होगा । फिर भी शेखर की व्यक्तिता को और एक नया रूप प्रदान करने के लिए उसे व्यक्ति की सीमा से ऊँचे उठाने के लिए उसे आसपास के समाज को परखना अनिवार्य है । एक व्यक्ति के जन्म से मृत्यु तक व्यक्तिगत रास्तों पर चलना आसान काम नहीं है । व्यक्ति को अपनी जीविका के लिये समाज की भी आवश्यकता है और समाज के लिए व्यक्ति की भी । व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध अज्ञेय भी नकारते नहीं है । लेकिन समाज में फिर भी व्यक्ति के अलग अस्तित्व की आवश्यकता के बारे में वे ज़ोर देते है ।

अज्ञेय ने समाज निरपेक्ष व्यक्तियों की कहानी "नदी के द्वीप" में भी कही है । नदी के द्वीप के प्रधान पात्र रेखा भुवन चन्द्रमाधव

गौरा आदि । इस उपन्यास के सभी पात्र आभिजात्य हैं । आभिजात्य वर्ग का अपना संसार है । "नदी के द्वीप" के पात्र इस आभिजात्य बुद्धिजीवियों में से हैं । इसी वर्ग के जीवन की अभिव्यक्ति है सारा उपन्यास ।

इस उपन्यास का नायक भुवन वैज्ञानिक है, प्राध्यापक है और कास्मिक रश्मि का अनुसंधाता है । स्वच्छन्द प्रेम के लिए और स्वतंत्र जीवन बिताने के लिए अपने परिवार से अलग रहता है भुवन । रेखा अपने प्रति अधिक जागरूक है । अपने प्रथम परिचय में वह भुवन को नास्तिकों की भीड़ में किसी भक्त सी नये विश्वास से भरी हुई दिखलाई पड़ती है । उसे लगता है कि रेखा में एक दूरी है । एक अलगाव भी और जिसका वह केन्द्र है । उसमें अछूती भी है । रेखा का व्यक्तित्व भुवन को इतना अभिभूत कर देता है कि वह रेखा के व्यक्तित्व की रहस्यमयता की चुनौती को अपने में कहीं स्वीकार कर रहा सा अनुभव करता है । यद्यपि उनमें लोगों के व्यक्तित्व की चुनौती की प्रतिक्रिया प्रायः नकारात्मक ही होती है ।

गौरा को पत्र लिखते समय वह कहता है । दिशा निर्देश भीतर का आलोक ही कर सकता वही स्वाधीन नैतिक जीवन है बाकी सब गुलामी है । स्वच्छन्द जीवन के लिये स्वाधीनता आवश्यक है । स्वाधीनता और स्वच्छन्दता में अज्ञेय अन्तर नहीं देखते । वैयक्तिकता की आवश्यकता की घोषणा के साथ साथ वे उपन्यासों में सामाजिक बातों का भी अंकन है । महायुद्ध के आरंभ होने पर गौरा को भेजे गये पत्र में विज्ञान के फ्रान्केंस्टीन के साथ साथ वैज्ञानिक नैतिकता और वैज्ञानिक संस्कृति के फ्रान्केंस्टीन की बात इसका उदाहरण है । संस्कृति से अलग विज्ञान बिना सवार का घोड़ा है या बिना चालक का इंजिन । वह विनाश ही कर सकता है और संस्कृति से अलग विज्ञान केवल सुविधाओं और सुविधाओं का संचय है और वह संचय भी एक को वंचित करके दूसरे के हक में और इस प्रकार के नीचे मानव की आत्मा कुचली जाती है, उसकी नैतिकता

की दूरी पाठक के मन में एक अनोखी प्रतिक्रिया उत्पन्न करनेवाली है।

इतना सारा अध्ययन प्रस्तुत करने के बाद पाठक का मन कई प्रकार के संदेहों से भरने लगता है। सब से पहले जो सवाल हमारे मन में उठने लगता है वह यह है कि क्या अज्ञेय के उपन्यास में कोई सामसजिकता है? अगर है तो क्या वह आम लोगों के जीवन से सम्बन्धित है? सच्चे अर्थ में बदलते हुए सामाजिक परिकल्पनायें वहीं पर सार्थक होती हैं जहाँ साहित्यकार समाज की गतिविधियों का सक्षम चित्रण प्रस्तुत करता है, ऐसे संदर्भ में समाज की बदलती हुई मान्यतायें परिवर्तित मानसिकतायें और वैचारिक प्रतिक्रियायें एक नये रंग को लेकर उभरने लगती है। परन्तु अज्ञेय के साथ यह कमी रही है कि उन्होंने कभी भी समाज की जीवन गाथा को स्वरबद्ध करने का प्रयास नहीं किया है। इसलिए उनके उपन्यासों में सामाजिकता को ढूँढना और उसके बदलते हुए परिप्रेक्ष्य को आंकना बहुत ही कठिन कार्य लगता है। इसका मतलब यह है कि सामाजिक मान्यताओं के सीमित मानदण्डों के आधार पर अज्ञेय के उपन्यासों में कोई छानबीन नहीं की जा सकती। क्यों कि अज्ञेय की सामाजिकता जन सामान्य की सामाजिकता से भिन्न है। इन विशेष परिस्थितियों में अज्ञेय के उपन्यासों में बदलते हुए सामसजिक परिप्रेक्ष्य को ढूँढना तर्कसंगत बात नहीं है।

लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि चुने हुए व्यक्तियों के माध्यम से अज्ञेय ने समाज के बदलते परिप्रेक्ष्यों पर प्रकाश डालने की कोशिश की है। यह चित्रण उनके पात्रों की विशेष मानसिकताओं के संदर्भ में अत्यन्त स्वाभाविक है। औपन्यासिक सामाजिकता तत्कालीन जीवित समाज की मान्यताओं को ठुकरानेवाली है। वहाँ आते औपन्यासिक यथार्थ सामाजिक यथार्थ से काफी दूरी पर खड़ा होने लगता है। अज्ञेय ने चुने हुए पात्रों के माध्यम से जिस परिवर्तनोन्मुख समाज की परिकल्पना की है वह समाज हमारा न होने हुए भी हमारा अपना ही है क्यों कि इसमें जीवन बितानेवाले व्यक्ति हमारे प्रतिनिधि न होते हुए भी हमारे बीच जीनेवाले है।

निष्कर्ष

इस विश्लेषण परिप्रेक्ष्य में अज्ञेय के उपन्यासों की दुनिया में प्रतिबिंबित होनेवाले औपन्यासिक समाज की मान्यतायें तक सीमित हो जाता है। अपने चुने हुए पात्रों की विशेष मानसिकता आचरण और प्रतिक्रिया के माध्यम से कुछ बदलते हुए मूल्यों को अज्ञेय ने सामने रखा है। उसके आधार पर उन्होंने ऐसे व्यक्तियों की कल्पना की है जो समाज से कटे हुए है या जिनकेलिए "समाज" नामक कोई चीज़ नहीं है। समूह के नियमों को तोडते हुए व्यक्तियों के बीच नये सम्बन्धों को जोडना उनका लक्ष्य रहा है। यहाँ पर व्यक्ति नियति का चयन खुद करते है। सामाजिक बन्धन नैतिकता का बोध आदि उनकेलिए कोई भी महत्व नहीं रखता। "अपने अपने अजनबी" दुनिया में "नदी के द्वीप" बनकर जीवनी के पन्नों को अजीब रंगों से भरने केलिये वे बाध्य से किये गये है। इन पात्रों के आधार पर उपन्यासकार ने एकओर बदलते हुए सामाजिक मान्यताओं का संकेत किया है तो दूसरी ओर समाज के अस्तित्व को नकारा भी है। इसलिए अज्ञेय के उपन्यासों में प्रकट होनेवाले सामाजिक यथार्थ के बदलते हुए परिप्रेक्ष्य आम लोगों के समाज से कोई सम्बन्ध नहीं रखते। सीमित समाज के सीमित व्यक्तियों के सीमित मानसिक व्यापार ही अज्ञेय के उपन्यासों के प्रधान विषय। अतः व्यक्ति - मन के उद्‌गार या वैयक्तिक विचारधाराओं का प्रवाह कहना ही उचित है।

अध्याय - चार

अज्ञेय के कहानी साहित्य में व्यक्ति और समाज

[illegible] साहित्यकार प्रेमचन्द

प्रेमचन्द उपन्यासकार ही नहीं कहानीकार भी है । उनकी [illegible] तीन सौ कहानियाँ है "मानसरोवर" । भारत के किसानों के व[illegible] प्रेमचन्द का आविर्भाव एक नये युग की चेतना का स्पष्ट आहट है । इस युग के रचनाकारों ने हिन्दी कहानी को सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आधार स्थापित किया । कहानी में प्राचीन संस्कारों की रूढियों के प्रति विद्रोह और समाज के जीवित व्यक्तियों की जीवन्त समस्याओं को प्रधानता दी । उन्होंने नये संस्कारों की ज़मीन खोज निकल पडी । प्रेमचन्द और प्रसाद इस युग की अगली पंक्ति के लेखक है । प्रेमचन्द की कहानियों में सामाजिक समस्यायें और यथार्थ का [illegible]ण है । प्रसाद की कहानियाँ रूमानी तथा आदर्शवादी है । प्रेमचन्द के बड़े भाई साहब "बड़े घर की बेटी" पंच परमेश्वर" शतरंज के खिलाड़ी, नशा, कफन, पूस की रात आदि कहानियों में तत्कालीन समाज का मर्मस्पर्शी चित्रण है । प्रेमचन्द की कहानी "कफन" एक साधारण सा गरीब परिवार की कथा है । उस परिवार की "माँ" जो स्वयं दारिद्रता से पीडित एक दुबली पतली स्त्री है । वह भूख के कारण ही मर जाती है । उसकी मृत्यु के बाद उसकी अन्त्येष्टि क्रिया केलिये उसके पास पैसा न था । वे लोग आस पास के और अन्य लोगों से पैसा एकत्र करने केलिये निकलते है । उस पैसे से पिता कफन खरीदने

ि जाते है । लेकिन मृत का पति उस पैसे से ताड़ी पीने केलिये ताड़ी-घर जाता है । उसका पुत्र भी उसकी खोज में निकलता है और उसी प्रकार करता है । कितनी चिंतनीय स्थिति है । "पूस की रात" कहानी में कम्बल खरीदने केलिये जानेवाला पात्र इसी प्रकार की विवशता में पड़ जाता है । समाज की दुरवस्था का मार्मिक चित्रण है । प्रेमचन्द के सभी उपन्यासों में किसी न किसी प्रकार सामाजिक समस्या वर्तमान है । "गोदान" में पूँजीवादी व्यवस्थिति के फलस्वरूप जो शोषण है उसका मार्मिक चित्रण है । लेकिन होरी गोबर जैसे व्यक्तिगत पात्र भी वहाँ है । यह तो कहानी की मनोवैज्ञानिक तरीका है । ...

मनोवैज्ञानिक पद्धतियों का विकास धीरे धीरे अज्ञेय जैनेन्द्र जैसे मनोवैज्ञानिक कहानीकारों से हुआ ।

<u>अज्ञेय की कहानियाँ</u>

अज्ञेय की कहानियाँ वात्स्यायन के अनुसार सामाजिक संघर्षों के व्यक्तिगत पहलुओं का चित्रण है ।" [2]

अज्ञेय की कहानीकला के बारे में वात्स्यायन का मत है कि वह पहले कवि है, इनकी दृष्टि व्यक्तित चित्रण के सूक्ष्म विश्लेषण पर है । उनकी झुकाव बुनियादी नैतिक मूल्यों की ओर है जिसे वह आध्यात्मिक मूल्यों का नाम देते हैं ।" [3]

सामाजिक संघर्षों के व्यक्तिगत पहलुओं का चित्रण करते वक्त वात्स्यायन के इस मत पर गहरा ध्यान देना आवश्यक है । अज्ञेय की कहानियों में व्यक्ति और समाज कहाँ, कैसे और उसका सम्बन्ध जो है

यही अध्ययन करना है । यहाँ उनकी परिभाषा के अनुसार देखने पर एक अन्य तर्करहित है कि अज्ञेय के पात्रों को सामाजिक संघर्ष है । बिल्कुल समाज से कटे हुए नहीं है । समाज से अलग रहने-पर सामाजिक संघर्ष का वैयक्तिक पहलू नहीं है ।

कहानीकार अज्ञेय की सफल रचनाओं में शुद्ध मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति हा दिखाई पड़ती है । यह एक सत्य है । उनकी कहानी कला का मूल व्यक्ति चरित्र है । लेकिन व्यक्तियों के चरित्र के बिना, उनके जीवन के बिना कहानी किस प्रकार संभव है उन्होंने केवल व्यक्तिगत पहलू को प्रधानता देकर सभी प्रकार की कहानियाँ लिखी है । उन्होंने सामाजिक आलोचना सम्बन्धी, राजनीतिक जीवन सम्बन्धी, चरित्र-विश्लेषण सम्बन्धी प्रतीकों के सहारे मानसिक संघर्षों के अध्ययन सम्बन्धी सभी तरह की कहानियाँ लिखी है । इन कहानियों को अपनाने केलिए उनकी संपूर्ण कहानियाँ पढ़ना आवश्यक है । अज्ञेय ने ही कहा है "कहानी पर प्रत्यय रखो लेखक पर नहीं, कहानीकार पर भरोसा रखो ।

अज्ञेय की कोठरी की बात, विपथगा शरणार्थी पगोडावृक्ष, शत्रु, कड़ियाँ आदि कहानियाँ क्रांतिकारी जीवन की है, क्रांतिकारी समर्थन की है - और क्रांतिकारियों की मनोरचना और उनकी कर्म प्रेरणाओं के बारे में उभरती शंकाओं की है बन्दी जीवन कुछ को और भी तपाया और कुछ को तोड़ा, इसी को बढ़ता हुआ अनुभव उनकी कहानियों में है, "पुराने गुप्त कर्मी आतंकवादी का खुले समाज में एक जाने हुए व्यक्ति के रूप में जीने का समाज से मिलनेवाले सम्मान के बीच उस समाज के और उस सम्मान के खोखलेपन का अनुभव करने का यह कुछ कहानियों की दूसरी श्रेणी का रूप है । इसका आक्रोश व्यंग्य मिश्रित

है । क्रांतिकारिता का पहला दौर सर्वत्र हास्यरहित ह्यूमरलेस होता है हास्य का प्रकटन का लक्ष्य हास्य-रहित क्रांति कार्यदक्ष तो हो सकती है पर अमानवीय ।"[4]

तीसरी खेप की कहानियाँ सैनिक जीवन से सम्बन्धित है । और उन प्रदेशों के जीवन, समाज अथवा इतिहास से जिनमें सैनिक जीवन बिताया घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है । सन् 30 का क्रान्तिकारी महायुद्ध का सैनिक कैसे हो गया यह प्रश्न तब भी उठा था जब मैं सेना में गया था मैं ने तभी उत्तर भी दिया था जो मेरे सेना छोड़ने के बाद छपा भी {प्रतीक 4: बसन्त 1947} उसका ब्यौरा यहाँ दोहराना अनावश्यक जान पड़ता है । संक्षेप में यही कि मैं युद्ध का समर्थक नथा कि भारत क्योंकि पराधीन है इसलिए शत्रु से उसकी रक्षा हमारा काम नहीं है ।"[5]

इस के बाद कहानियों का एक और वर्ग है जिसे चौथी खेप भी कहा जा सकता है । ये कहानियाँ भारत-विभाजन के विग्रह और उससे जुड़ी हुई मन-स्थितियों की कहानियाँ है । एक बार फिर ये कहानियाँ आहत मानवीय संवेदन की और मानव मूल्यों के आग्रह की कहानियाँ है और मैं अभी तक आश्वस्त है कि जिन मूल्यों पर मैं ने बल दिया था, जिनके पतन के विरुद्ध आक्रोश व्यक्त करना चाहा था, वे सही मूल्य थे और उनकी प्रतिष्ठा आज भी हमें उन्नततर बना सकती है । निःसन्देह मेरा यह मानवतावाद फिर एक प्रकार का आदर्शवाद है । जिसकेलिए मैं लज्जित नहीं हूँ, न दीन होने का कोई कारण देखता हूँ, आज का फैशन मूल्यों का अस्तित्व भी मानने का नहीं है । पर मेरी समझ में यह कहना ही आज हम एक संपूर्णतः मूल्य-विराहित

समा में जीते हैं, उतना ही बड़ा पा...है मैं नहीं मानता कि हमारे समाज में सब शाश्वत मूल्य प्रतिष्ठित है । उतना ही बड़ा पाप अगर प्रतिकूल दिया का तो कह लीजिए पुरातन-पाखण्ड । मैं नहीं मानता कि मानव-समाज मूल्यों के बिना जी सकता है । अस्तित्व रख सकता है । जिस समाज में मूल्य नहीं है वह समाज नहीं है । मानव-समाज होना दूर की बात । मूल्य मानव की रचना है और मूल्य-रचना ही उसका मानवत्व है ।"[6]

ऊपर की चारों तरह की कहानियाँ अपने देश-काल परिस्थिति में इतनी विस्तृत व्यापक और गंभीर है । मानववाद अपने अधिक से अधिक रूपों में इनका उपजीव्य बन गया है । सामाजिक, नैतिक आलोचना की दृष्टि से रोज़ सभ्यता का एक दिन "परंपरा एक कहानी" शरणदाता, लेटरबक्स आदि प्रधान है । इन कहानियों की रचना दो स...ों का समान रूप से सहारा लिया गया है, आन्तरिक और बाह्य T..।

शरणदाता ...क कहानी पढ़ने पर इस संघर्ष की समस्या व्यक्त हो जायेगी । देवेन्द्रलाल आन्तरिक संघर्ष से पीड़ित है । यहाँ उनके मन में व्यक्तित संघर्ष है, रफीक उद्दीपन और शेख उताउल्ला के संघ. से इनके मन में आरोह-अवरोह की समस्या है । कथा के विकास तो स्वाभाविक लगता है । साम्प्रदायिक ... के कारण देवेन्द्रलाल रफीक उद्दीपन के घर छोड़ता है । और वह उत्ताउल्ला के आश्रम में जाता है । और वहाँ रहते समय उत्तउल्ला उसे विष मिलाकर भोजन देने का श्रम करता है । भगवान् की कृपा से उत्ताउल्ला की बच्ची वह जानकर देवेन्द्रलाल से कहती है । देवेन्द्रलाल पर के पालतू बिलार

को पहले ही उसे भोजन से कुछ भाग देता है । बिलार की मृत्यु हुई । देवेन्द्रलाल वहाँ से भाग गया । इसी प्रकार की बाह्य घटनायें कथानक को रूप और भाव देता है । राजनीतिक तथा बंदी जीवन से सम्बन्धित उनकी कहानियों में वह और भी विस्तृत है । शरणदाता कहानी के अंत में आते आते देवेन्द्रलाल का मानसिक संघर्ष सांप्रदायिक दंगे के कारण और भी पीडित हो जाता है । बाद को उसे मारने के श्रम से, वह विस्तार से सामाजिक हो जाता है । एक सांप्रदायिक दंगे के कारण ही देवेन्द्रलाल की हत्या का श्रम है । इसी प्रकार की हत्यायें कम नहीं है ।

छाया नामक कहानी में भी एक बन्दी का कारुणिक जीवन की कहानी है । उस कहानी के प्रधान पात्र है बन्दी अरुणा । उसे जेल में रहते समय ही उसकी बहन सुषमा भी आती है, और सुषमा को फाँसी का दण्ड देता है, अरुण के सामने ही । इसकी अतर्कता के रूप में आती है, जेल के वार्डर उसकी पत्नी, मेहरू आदि की संवेदनायें अरुण के बन्दी जीवन में जो जो अनुभव है वे उपकथाओं के रूप में आते हैं । सुषमा के राजनैतिक जीवन भी महत्वपूर्ण है ।

"अज्ञेय की कहानी कला की आत्मा व्यक्ति चरित्र के केन्द्र-बिन्दु से निर्मित हुई है, अर्थात् चरित्र-अवतरण, चरित्र-विश्लेषण, चरित्र-मनोविज्ञान इनके वे आधार शिलायें है, जिनपर कहानीकार अज्ञेय के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा हुई है । उन्होंने अपनी कहानियों में जितने भी सामाजिक नैतिक राजनीतिक आर्थिक और सांप्रदायिक समस्याओं, प्रश्नों को उठाया है, उन सबका अध्ययन उन्होंने व्यक्तिगत

पहलुओं से लिया है । अज्ञेय का यह व्यक्तिगत पहलू चाहे कवि के दृष्टिकोण से अनुशासित हो, चाहे एक दार्शनिक दृष्टिकोण से अनुशासित हो, लेकिन [illegible] तो [illegible] है कि वे सर्वत्र अपने व्यक्ति के चरित्र के अध्ययन में सफल मनोवैज्ञानिक रहे है । जिनपर उनके आदर्शवाद तथा मानववाद का गहरा और प्रत्यक्ष प्रभाव है ।"[7]

अज्ञेय की कहानियों के निर्माण में तीन प्रकार की प्रेरणायें है अहंरूप, विद्रोहात्मक रूप और विश्लेषणात्मक रूप । एक प्रकार से अज्ञेय के पात्रों में व्यक्तिबद्धता अधिक है कुछ कहानियों में ज़रूर है । उसमें विद्रोहात्मक प्रेरणा कहीं न कहीं मौजूद है । अहं [illegible] से ही चरित्रों का विकास है, फिर भी चरित्रों की पूर्ण आधारशिला मनो-वैज्ञानिक विश्लेषण ही है ।

व्यक्तिबद्धता कई रूपों में उनके चरित्रों [illegible] प्रस्तुत है । प्रायः चरित्र सामान्य [illegible] से [illegible] विशेष का हो गया है । उनके अधिक से अधिक पात्र अन्तर्मुखी है । क्योंकि चरित्रों के विकास अहं रूप "मैं" में ही दिखाया गया है इसी प्रकार "मैं" उसकेलिए चरित्रों का प्रतिनिधित्व करता है । लेकिन उनका चरित्र अहंरूप इतना उदात्त और समुन्नत है कि वह मानवतावाद को समेट कर चलता है। "रोज" की "मालती", परम्परा एक कहानी का "दरबान" जैसे चरित्र इसी प्रकार का है ।

इसलिए इनकी कहानियों का व्यक्तिवाद मानवतावाद का प्रतीक हो जाता है । चरित्र तो विद्रोह के धरातल पर आधारित होकर भी सामाजिक, राजनीतिक तथा व्यक्ति मूल्यों के परिचायक

रूप में आते हैं । कुछ कहानियों में विद्रोह तो पारिवारिक है, "रोज" में मालती की "मालती" "दूषित और भाषा" की "जसुमति" परम्परा एक आत्मा का दरबान, सभ्यता का एक दिन" का नरेन्द्र" आदि पूर्णतः विद्रोही नहीं है । लेकिन समाज की कुछ बातों से उनको कट्टर विद्रोह है । अज्ञेय के अनेक महान् चरित्र जैसे पगोडा वृक्ष की "स सुखदा", "एक घण्टे" का प्रभाकर, रजनी राजनैतिक विद्रोह का सुन्दर उदाहरण है । वे विद्रोह के प्रतीक से लगते हैं ।

अस्तित्ववाद और अज्ञेय की कहानियाँ

अज्ञेय को आलोचकों ने व्यक्तिवादी भी घोषित किया है । इसी प्रसंग पर व्यक्तिवाद और समाजवाद दोनों को मिलाने के क्रम में अज्ञेय कहाँ तक अस्तित्ववादी है यह कहना समीचीन है । पहले ही अस्तित्ववाद के बारे में एक अध्ययन आवश्यक है । "मनुष्य समाज का महत्वपूर्ण अंग है समाज के प्रति आक्रोश, विरोध और विक्षोभ का प्रदर्शन करते हुए भी अन्ततः मनुष्य को समाज में ही रहना है । व्यक्ति का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व हो सकता पर समाज उसकेलिए अनिवार्य है ।" धर्मवीर भारती की एक सुन्दर कहानी है "अगला अवतार" । इस कहानी का नायक इसी प्रकार कहता है कि "व्यक्ति का अस्तित्व समाज के बाहर तो है नहीं ।"[1]

मानवस्वतंत्रता

अस्तित्ववादी विचारधारा का मूलमंत्र है स्वतंत्रता । सार्त्र कहते है कि मानव पूर्ण स्वतंत्र है । मनुष्य स्वतंत्र होकर ही इस

संसार में जन्म लेता है । उसे स्वतंत्रता से काम करके अपने अस्तित्व को अर्थ प्रदान करना है । जैस्पर्स का कथन है कि हमारी स्वतंत्रता हमारी अन्तर्दृष्टि की अपेक्षा हमारे कार्य द्वारा सिद्ध होती है ।

अस्तित्ववाद के विचारक सार्त्र का कथन है "अस्तित्ववाद का प्रथम प्रयास यह है कि प्रत्येक मनुष्य को जो कुछ वह है उसके प्रति सजग किया जाए और उसके अ... पूर्ण उत्तरदायित्व को उसी पर स्थित कराया जाए ।" मनुष्य को अपना सार स्वयं चुनना है । नहीं तो वह दास के समान हो जाता है । "Yet the single fact that our essence has not been chosen by us shows that all this freedom in particular actually covers over a total slavery" 12
सार्त्र के अनुसार मनुष्य स्वतंत्र होना है उसका व्यवहार पूर्णतः स्वतंत्र हो । उसके विचार और भावना स्वतंत्र हो । वे फिर भी कहते हैं कि मनुष्य केवल स्वतंत्र ही नहीं वरन् स्वतंत्र होने केलिये अभिशप्त भी है ।-15

सार्त्र के अनुसार मनुष्य को स्वतंत्र होना ही पड़ता है । इससे बचना मुश्किल है । मौलिक सृष्टि की रचना केलिये मनुष्य की भावना स्वतंत्र होना ही चाहिए । अपने भविष्य के बारे में भी मनुष्य विशेष धारणायें रखता है । भविष्य के बारे में जो कल्पनायें, उनके मन में है उसके अनुसार अपने व्यक्तित्व को रूपायित करने केलिये वह लालायित है ।

"मनुष्य की स्वतंत्रता का तादात्म्य को विशेष स्थिति या लक्ष्य

से नहीं वह तो एक प्रवाह है जो स्वयं अपने आपको ढकेलता हुआ आगे बढ़ता जाता है । वह रुक नहीं सकता किसी एक रूप को अपना कर शान्त नहीं हो जाता ।"[14]

व्यक्ति और समाज के बारे में सार्त्र विचार

सार्त्र के अनुसार अन्य व्यक्तियों के अस्तित्ववृत्त एक व्यक्ति के अस्तित्ववृत्तों के मध्य आकार, भय संघर्ष घृणा प्रेम आदि अनेक मानवीय भावों के कारण हो जाता है । इन्हीं विरोध प्रेरक भावों के कारण व्यक्ति-व्यक्ति के बीच आकर्षण और विकर्षण हो जाती है ।" प्रेम करने का मतलब है या तो दूसरे के अनुकूल बनकर अपनी स्वतंत्रता खोना या दूसरे को अपने अनुकूल बनाकर उसकी स्वतंत्रता का अपहरण करना । स्वपीडन या पर पीडन इसके अतिरिक्त प्रेम की अन्य परिणति नहीं ."[15] तात्पर्य यही है कि जब तक मनुष्य सामाजिकता से बँधा रहता है तब तक उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता, या स्वतंत्र भावना लुप्त हो जाते है । लेकिन समाज में मनुष्य को रहना ही चाहिए इसी आधार पर समाज और व्यक्ति के प्रसंग को जोडने केलिये सार्त्र स्वयं अपना चयन करता है । इस निजी चयन में सभी मनुष्यों का चयन है । "किसी भी वस्तु का चयन करते हुए हमने जो कुछ चुना है उसके मूल्य की भी हमही प्रतिष्ठा करते हैं क्योंकि हम कभी भी अशिव का चयन नहीं कर सकते । अतः जो हमारे लिए शिव नहीं है वह दूसरों केलिए भी शिव नहीं हो सकता ।"[16]

सार्त्र के विचार हमारे प्रसंग में स्वयं अपने काम-काज अपने

व्यक्तित्व का निर्माण ठीक रास्ते पर करना है । जब हम अपना रास्ता ढूँढ निकालते है तब वह स्वयं समाज के हितकर हो जाता है । सोच लेना डाकू तो समाज के लिए हितकर नहीं है । वह समाज द्रोही है । डाकू स्वयं जो व्यक्तिगत रास्ता चुनता है वह तो गलत रास्ता है । इसलिए समाज को भी वह हानिकारक है अध्यापक, पुरोहित डाक्टर, इंजिनीयर, कलक्टर, पुलीस जैसे समाज के अन्य अनेक स्तरों के लोगों को देखिए । वे तो किसी न किसी प्रकार अपने व्यक्तित्व प्रशंसायोग्य काम करते हैं । समाज के हितकर सुधारक बन जाते हैं ।

"यदि [illegible] व्यक्ति को [illegible] ही शासित करें, किन्तु उसकी स्वतंत्रता तब भी अविजित रहती है ।"[17]

मनुष्य स्वयं परिस्थितियों का गुलाम हो जाना पसंद की बात [illegible] है । मनुष्य परिस्थितियों के नियंत्रण में हो जाने पर उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता एक हद तक नष्ट हो जाता है ।

सार्त्र यह भी मानता है कि क्योंकि मनुष्य स्वतंत्र है, अतः वह जब चाहे मूल्यों को परिवर्तित कर सकता है, ऐसा कोई मानउण्ड नहीं है जो चयन को सही या गलत कह सके । यह धारणा एकदम मिथ्या है कि मानवीय चेतना को समाज या कोई मनुष्य समर्थन प्रदान करे तभी वह उचित है ।"[18] चुनने की स्वतंत्रता मनुष्य की नितांत आवश्यकता है । व्यक्ति को अपने मन के इच्छा के अनुसार काम करना है ।

"तुम स्वतंत्र हो अतः स्वयं चुनाव करो स्वयं आविष्कार करो, निर्माण करो । सामान्य नैतिकता को कोई भी नियम तुमको यह नहीं बता सकता कि तुमको क्या करना चाहिए । संसार से तुमको कोई भी ऐसा अधिकृत नियम नहीं दिखाई पड़ेगा जो इस बात केलिये बाध्य करे कि अमुक चयन ही उपयुक्त है ।"[19] मानव जो करना है जो नहीं करना है इसके सूचक कोई सुनिश्चित नियम नहीं है । नैतिक नियम मनुष्य स्वयं बनाता है और मिटाता है । यह तो शाश्वत नहीं है । एक समाज केलिए, विशेषकर पाश्चात्य समाज केलिए, कुछ नियम लागू है । लेकिन पूर्वी सभ्यता उससे नहीं मिलती है । वैवाहिक जीवन के बारे में विचार करने पर यह समझ सकता है । पूर्वी लोग विवाह और वैवाहिक जीवन को जो पवित्रता से देखते हैं पश्चिमी सभ्यता उसे नकारते हैं । वस्त्र के समान अभी अभी वे पति पत्नि को बदलते है । अज्ञेय के साहित्य में, नदी के द्वीप जैसे उपन्यासों में इसका खूब प्रभाव है । व्यक्ति अपनी संस्कृति के अनुसार मूल्य को बदल देता है । सार्त्र के विचार का भी प्रभाव अज्ञेय के साहित्य में वर्तमान है ।" मेरे न होने पर कोई संसार नहीं है और संसार न होने पर मैं भी नहीं हूँ ।" There is no world without me or am I without the world"[20]

मनुष्य का सामाजिक सम्बन्ध का दर्शक होकर जीना उचित नहीं है । वह तो इसका निर्माता है । सामाजिक संपर्क की स्थापना में व्यक्ति और समाज का जो सम्बन्ध है ... उल्लेखनीय है ।

अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ पढ़कर उनमें से कुछ कहानियों को मैं ने चुन ली है । उनकी कहानियाँ पढ़नेपर उनकी वैयक्तिक धारणा ...

हो रही है । अज्ञेय को कोरे व्यक्तिवादी कहना ठीक नहीं है । अनेक आलोचक उन्हें वैयक्तिक स्थापित करते हैं । लेकिन उनकी कई कहानियों में सामाजिकता पर बल दिया गया है । उनके व्यक्ति समाज की ओर उन्मुख है । व्यक्ति उनका समाज में स्वतंत्र दिखाई पड़ता है लेकिन उनका व्यक्ति कहीं न कहीं समाज से जुड़ता है । उनका पगोडा वृक्ष अनखुले फूल, रोज़, सेब और देव, कोठरी की बात, जीजिविषा शरणदाता, कलाकार की मुक्ति, हजामत का साबुन, कविन, बाबू आदि कहानियाँ तत्कालीन सामाजिक समस्याओं की ओर इशारा करती है । उनकी अनेकों कहानियां पढ़ने पर सामाजिकता से भरी है ।

पगोडा वृक्ष

अज्ञेय के "पगोडा वृक्ष" की नायिका "सुखदा" एक विधवा है । उनकी जीवन कहानी से हमें इसका पता मिलता है कि वह प्रेमचन्द की विधवाओं से भिन्न नहीं है । भारत की एक आदर्श विधवा का वास्तविक चित्रण है सुखदा । अज्ञेय अपनी कहानी विधवा में विधवा की कहानी इसी प्रकार कहती है "विधवा हो जाने के बाद भी उसने वह घर नहीं छोड़ा, छोड़कर कहीं जाने को कोई स्थान ही नहीं था । वह समाज की ही नहीं व्यक्ति मात्र की परित्यक्ता थी, समाज की शरण की ही नहीं, किसी व्यक्ति के स्नेह से भी वंचिता थी, उसका अपना कोई नहीं था । जिस, झोंपड़े, में वह रहती थी, उसकी सफाई करने के लिये एक बुढ़िया नित्य सवेरे आती थी, और दो घंटे बाद चली जाती थी, सुखदा के संसार से कोई सम्बन्ध था तो इतना ही । वह अपना गुज़ारा कैसे करती थी,. कोई नहीं

जानता । स्त्रियाँ किस प्रकार गृहस्थी चलाती है, यह न आज तक किसी ने जाना है, न जानेगा ।"-21

"सुखदा" के ऊपर के शब्द ध्यान से सुनने पर यह समझ में आता है कि वह आज की अनेकों विधवाओं के समान है । अपने पति की मृत्यु के बाद वह कहीं भी नहीं जाती है । वह स्वयं कहती है कि उसे जाने को कोई स्थान भी नहीं है । उसे संसार से सम्बन्ध न था । स्त्रियों की दयनीय स्थिति का चित्रण है अंतिम पंक्तियों में, स्त्रियाँ किस प्रकार गृहस्थी चलाती है आज भी किसी ने जाना नहीं । "पगोडा वृक्ष" कहानी काल की निरंतर प्रवाह के साथ बहती है । यह तर्क के अतीत है । अज्ञेय को वैयक्तिक घोषित करनेवालों से यह पूछ लेना उचित होगा कि क्या "पगोडा वृक्ष" की सुखदा "अज्ञेय" है ? या हमारे समाज की कोई विधवा है ?

[illegible] भी इस कहानी की एक [illegible] भाग है "जिसके आधार पर [illegible] आठ वर्ष बीता दिये थे ! नित्य ही । वह अपने छोटे से स्वच्छ बगीचे में आकर बैठती तब मानो उसे इस रस का एक घूँट मिल जाता । जिस वृक्ष के नीचे वह नित्य बैठती थी वह उसके पति का लगाया हुआ था । वह उसे मद्रास से लाया था, यद्यपि सुखदा के इस वृक्ष-तले बैठने का कारण यह नहीं था, तथापि वह नित्य ही इस बात का स्मरण कर लिया करती थी । क्षण भर के लिये उसे यह विश्वास हो जाता था कि वह पति की स्मृति के लिये ही वहाँ बैठी है । इस विश्वास से उसके हृदय की पुरानी अशांति वह अनौचित्य की भावना मिट जाती थी ।" पति के स्मरण में मौन इस पगोडा वृक्ष, जो उसके पति से लगाया गया है, उसके नीचे बैठनेवाली इस विधवा क्या वैधव्य का

सफल उदाहरण है न ?

"यदि दुःख की अनुपस्थिति को अनुभूति की अचेतना को सुख कह सकते हैं तो सुखदा हुआ थी ! यदि- किन्तु वह स्वयं सोच कर... क्या ... जीवन धातु पर के ... ते हुए चिह्न से अधिक कुछ भी नहीं है ? पर इस प्रश्न से उसको शांति नहीं भंग होती थी, यद्यपि विषाद कुछ गहरा हो जाता था उसके हृदय से मानो असंतोष की क्षमता नष्ट हो गया था......"[25]

भारतीय समाज में एक विधवा के जीवन का जो दुख है उसे वह सुख के समान भोगती है और अपनी ... की याद में हमेशा इस "फलोडा वृक्ष" के नीचे बैठती है । दुख ... छाया में वैधव्य के आठ ... में एक दिन भी उसका नियम भंग नहीं हुआ था, वह उस नियम भंग ... में कल्पना भी नहीं करता था ।

समाज उस विधवा ... ओर पत्थर फेंकता है । विधवा से लोग अनौचित्य ... बातें कहते हैं । बुरा ... करता ... । ... चाहे जितना साफ-सुथरा हो लोग उसे बुरी समझते है । एक युवक ने मानो अन्दर ही अन्दर किसी निश्चय पर पहुँचकर कहा " आप मुझे थोड़ी देर के लिये अन्दर आने दें, तो आपको सन्तोष हो जायगा ।"[26] लेकिन इस बेचारे पर उसका प्रभाव नहीं पड़ता है ।

युवक सुखदा से फिर भी कहता है---इसलिए इस विराट् ब्रिटिश साम्राज्य में कहीं पैर रखने को भी स्थान नहीं रहता । तब हम इधर-

उधर मारे-मारे फिरते हैं कि कहीं कुछ समय केलिए हमें आश्रय मिल जाय, और फिर हम अपना अस्तित्व मिटाकर एक नया और मिथ्या रूप धारण करके ही उस साम्राज्य में स्थान पाते हैं, जिसमें हमारी सच्चाई केलिये स्थान नहीं है । इधर-उधर मारे मारे फिरने पर कुछ समय केलिए हमें आश्रय मिलता है । शाश्वत रूप में आश्रय कहीं भी नहीं है । विधवा जैसे असहाय नारियों केलिए कभी भी नहीं, समाज की इस दुरवस्था को, इस विडम्बना को हम खूब पहचानते हैं इस कहानी में । यहाँ व्यक्तिवादिता की अपेक्षा सामाजिकता का अधिक महत्व दिखाई पड़ता है ।

अछूते फूल

"मीरा" इस कहानी की नायिका है । उसने राजनीति में दिलचस्पी ली थी । राजनीति में सक्रिय भाग लेने के कारण मीरा जेल गयी थी । उसने सोसायटी में सभ्य समाज में भी मेल-जोल बढ़ाया था । और अपना स्थान बनाया था । "अछूते फूल" की मीरा के बारे में अज्ञेय जी लिखता है " पुरुष आते थे, कोई झुककर, कोई अकड़कर, कोई लोलुप भाव से, कोई कठोर उपेक्षा से, लेकिन फिर मानो उनपर कोई सम्मोहिनी सी छा जाती थी, मानो उनके पंख भीग जाते थे । और फड़फड़ाना बन्द हो जाता था, या यों कहें कि किसी विदेशी नस्ल के पालतू कुत्ते की तरह वे मीरा के पीछे दुम हिलाते हुए चल पड़े थे । मीरा उनसे खेलती थी उन्हें नचाती थी, उनसे काम लेती थी । कुलीनपन के कारण वे सेवा करते थे, यद्यपि शिक्षितपन के कारण वे मुँह-लगे भी होते थे और मानो थोड़ी-सी दुलार-पुचकार के भूखे भी ।

मीरा इस बात को जानती थी और उसका अनदेखी भी नहीं करती था।" [26]

मीरा के पीछे दुम हिलाकर चलनेवाले इन युवकों के समान अनेक ... आज के समाज में भी वर्तमान है । मीरा अज्ञेय के "अछूते फूल" की प्रधान स्त्री पात्र नहीं आधुनिक परिस्थितियों के मध्य में खिसकती गिरती जानेवाली अनेक नारियों का प्रतिनिधि लगता है ।

यह निर्विवाद है कि मीरा का अनुभव अज्ञेय का वैयक्तिक अनुभव नहीं है । व्यक्ति अज्ञेय के जीवन में भी इसका प्रतिफलन शायद होगा लेकिन व्यक्तिमात्र का कहना गलत है, समाज की एक इकाई की कहना ठीक है इसी प्रकार अनेक इकाईयाँ हमारे आमने सामने वर्तमान है । इसे अज्ञेय की वैयक्तिकता कहकर इसका अपमान करने से बढ़कर अधिक उचित हो जायेगा उसे अज्ञेय की सामाजिकता कहना, उसका मानववाद कहना । यह प्रवृत्ति तो समाज के उच्च, मध्य निम्न सभी वर्ग के पात्रों में वर्तमान है ।

"इतने पुरुषों के संपर्क में आकर उनसे मिल-जुलकर, उनसे "फ्लिर्ट" करके भी वह अछूती रह गयी थी । अछूती ही नहीं, अस्पृष्ट भी । उसे इसका अभिमान भी था । स्त्री केलिए पुरुष-समाज में आकर भी उससे बचे रहना एक बड़ी बात होती है, और फिर भारत आचार के पुराने शास्त्र नष्ट हो गये हैं और नये "स्टैण्डर्ड" बन नहीं पाये, स्त्री केलिये अपने शील की रक्षा करते हुए चलना तो बहुत ही बड़ी बात है । मीरा ने यही महान् कार्य बड़ी सफलता से किया था , और उसका अभिमान अनुचित नहीं था ।" [27]

मीरा के समान आज के समाज में भी स्त्री का शील-संरक्षण कठिनाई की बात है । अनेक प्रकार की विसंगतियों के मध्य नारी विवश निकलती है । यह लेखक का अपना अनुभव कहना गलत हो जायेगा । इसे वैयक्तिक कहना घोर अन्याय है । बल्कि सामाजिक कहना प्रतिनिधिवादी है !

"उसे अपनी डींग याद आयी" पंक में पंकज तो नहीं पर हां, वह मधुमक्खी अवश्य, जो अपने संचित किए हुए मधु में अपने पंख नहीं लपटाती, फंसती नहीं मुक्त ही रहती है, अछूती, अस्पृश्य ।.[21] मीरा रूपी वह पुष्प अछूती, अस्पृश्य अनाघ्रात रहने के लिये कितनी विवशता, कठिनाई, भोगनी पड़ी । समाज अभी भी इसी धारा से बहती जाती रही ।

प्रेत और देव

"प्रेत और देव" के प्रधान पात्र प्रो. साहब, अन्धविश्वासों के बारे में लोगों को याद दिलाना ही प्रस्तुत कहानी का लक्ष्य है । प्रो. साहब स्वयं इतना पढ़े-लिखे होने पर भी अन्धविश्वासों में फंसे है ।
प्रोफेसर साहब को ऐसा लगा जैसे वे डर रहे हैं । फिर उन्हें इस विचार पर हंसी सी भी आ गयी । वह पूछता है "इस किससे डरता हूं मैं ? प्रेतों से ? मैं भी क्या यहाँ के लोगों के तरह अन्धविश्वासी हूं जो प्रेतों को मानूंगा ? काव्यता के लिहाज से भले ही मुझे यह सोचना अच्छा लगे कि प्रेत बसते हैं । और रात को जब अंधेरे हो जाता है तब इस बन्द मंदिर में आकर देवी के आसपास नाचते है । देवी है, शिव है उन में ... ती तो होनी ही चाहिए रात को मूर्तियों को घेर-घेर

का नाचते होंगे और इन न जाने कब के बलि-पशुओं के भस्मीभूत सागे से प्रतोषित प्रसाद पाते होंगे।"[29] इतनी पैनी व्यवस्था से अज्ञेय के सम्बन्धित अन्धविश्वासों का चित्र है क्या हम मिलते हैं। केवल वह व्यक्ति ... का अन्धविश्वास है। अज्ञेय के समय समाज में प्रचलित अन्धविश्वासों की व्याख्या ही है।

कोठरी की बात

जेल जीवन से सम्बन्धित कहानी में, अज्ञेय सुशील और दिनमणि आदि के जरिये व्यक्तिगत समस्याओं और मूल्यों में विद्रोह की आवाज़ उठाता है। कोठरी की बात कारागृह इसी प्रकार कहता है--मैं हूँ एक नगण्य वस्तु सभ्यता के विकास का एक बड़े यत्न से छिपाया हुआ उच्छिष्ट अंश, जो उसी सभ्यता में विकास का एक बड़े यत्न से छिपाया हुआ उच्छिष्ट अंश, जो उसी सभ्यता में अपनी कुढ़न के उत्पन्न अकिंचन कीटाणु फैलाता जाता है बिना जाने ही नहीं वरं जान-बूझकर अपने से छिपाये गये साधनों द्वारा, चुपचाप चोरी-चोरी किसी भावी व्यापक चिरन्तन, घोर आतंकमय जीवन-विस्फोट के लिये।"[30] और इसके बाद फिर कहता है " मैं हूँ मुक्ति का एक साधन एक बन्धन- मैं संसार के किसी भी राज्य के किसी भी जेल की एक छोटी सी कोठरी हूँ।"[31]

प्रस्तुत वाक्यों से हमें यह स्पष्ट है कि इस कहानी का "मैं" विस्फोट के लिए, मुक्ति के लिए लालायित है। मैं सिमटने के बदले मुक्ति पाकर बाहर आने के लिये वह तड़पता है। जेल की कोठरी से बाहर आना उसे बहुत अधिक पसंद की बात है। लेकिन परिस्थिति उसके लिये प्रश्नचिह्न है। परिस्थिति की न परवाह करके अतः

सामाजिक बातों को नकारकर आगे बढ़ता है । व्यक्ति के मानसिक बन्धन से बाहर आकर समाज में मिलना उसे पसंद की बात है । व्यक्ति के व्यक्तित्व को मिटाना उसे पसंद नहीं है । एक विद्रोही व्यक्ति अपनी सारी दृष्टि और तेज भीतर से पाता है और उसी दृष्टि से संसार को परखता है, और साधारण व्यक्ति अपनी प्रेरणा संसार से पाता है और उसी आधार पर स्वयं परखा जाता है । "और साधारण व्यक्ति एक व्यक्ति एक इकाई होता है जो अपने आप को खोजता हुई अपनी निष्पत्ति की ओर बढ़ती है, किन्तु थोड़ी रहती है संसार की समष्टि में छिपी वितरित शक्ति किन्तु होता है अत्यन्त आत्म-सान्निहित और अकेला ।"[32]

यहाँ विद्रोही व्यक्ति को समाज में वितरित शक्ति कहता है कहानीकार । उसे आत्मसन्निहित और अकेला भी कहा है । समाज में होने पर भी वह अकेला लगता है आधुनिक व्यक्ति की यह बड़ी भयानक विभीषिका से अज्ञेय के पात्र भी इससे वंचित नहीं है । व्यक्ति-व्यक्ति के बीच, उनके हृदयों के बीच मीलों की दूरी है । यह व्यक्ति को समाज में होते वक्त भी लगता है । व्यक्ति और समाज सम्बन्धी उसकी धारणायें यहाँ व्यक्त हो जाती है । समाज में होकर अपने व्यक्तित्व को सुरक्षित रखने की अभिलाषा ।

जीजी विधा

पीसी जीजी की बारहवी अपने घुटनों तक ऊँची कमर के पास फटी हुई और छाती से सिर्फ बायें भाग को मुश्किल से ढांपने में असमर्थ मैली धोती का छोर पकड़कर उसे बदन से सटाती हुई चल रही है ।

वह चलना निरुद्देश्य है, लेकिन रस की अनुपस्थिति के कारण उसे टहलना नहीं कहा जा सकता । वह यों ही वहाँ चल रही है । क्योंकि उसे भूख तो लगी है, लेकिन भीख माँगने का उसका मन नहीं होता है । उसमें आत्मभिमान अभी तक थोड़ा-थोड़ा बाकी है ।[33]

५८-पुराने कपड़े पहनकर भूख के कारण इधर-उधर घूमनेवाला बातरा आज भी हमारे सामने कितनी बड़ी संख्या में है । वह चाहता है खाना । लेकिन ... न सकता । उसे खूब भूख है । लेकिन भीख माँगने को वह ि..कता है ।

बातारा, बच्ची थी, तभी इसके माँ बाँप इधर चले आये थे और ईसाई हो गये थे । पादरी ने ईसाइयत के पानी से लड़की की खोपड़ी सींचते हुए जब उसका नाम बीएट्रिस रख दिया था, तब=माता पिता भी बड़े चाव से उसे बातारा ! बातारा ! कहकर पुकारते थे ।[34]

लेकिन उसके माता"पिता मर गये और उसी समय बातरे ने चाहा मिशन में जाकर नौकरी कर लें, लेकिन मिशन की नौकरी उसे मंजूर न हुई और वह भाग गयी । मेंमा के चिक... घुपड़े मखमल में ... और प्लेट में "मगन" मछली खानेवाले कुत्ते देखे ... लगता है वह उस कुत्ते से भी गये बीते हैं क्या ? आज के समाज में भी धनी लोगों के घर के कुत्ते से भी गये बीते है, गरीब लोग । वे कुत्ते से भी नीचे तरीके का जीवन बिताते है । उस... मेमों के चिकने कुड़े म... में लिपटे और प्लेट में "मगन" मछली खान वाले कुत्ते देखे थे और इस समय अपने चिथड़े चिरे और उलझे हुए बू-भरे-

केश बाबा...वाले नंगे पैर और कलकत्ते की धूप, बारिश और मैले से बिल्कुल काला पड़ गया अपना पहले ही से सांवला शरीर, यह सब भी वह देख नहीं थी, फिर भी वह जानती थी कि कुत्ते से

[illegible] है, वह चाहती थी [illegible] अनुसार [illegible] की तरह जीवन बिताये चाहती थी कि उसका अपना घर हो, जिसके बाहर गामले में दो फूल लगाये और भीतर पालने में दो छोटे-छोटे बच्चों को झुलाते, और चाहती थी कि और कोई उसे पालने के पास खड़ा हुआ करें जिसके साथ वह उन बच्चों को देखने का सुख और अपने हाथ का सेका हुआ टुकड़ा बाँटकर भोगा करें कोई और जो उसका अपना हो-वैसे नहीं, जैसे मालिक कुत्ते का अपना होता है। अब तक यह सब हुआ नहीं था लेकिन बातरा जानती थी कि वह होगा, क्योंकि बातरा अभी जवान है और उस कीच कादों में पल रही है जिससे जीवन मिलता है, जीवन-शक्ति मिलती है।"[35] बातरा एक साधारण [illegible] साधारण बच्ची है। उसके जीवन की अभिलाषायें कहानीकार उपर के वाक्यों में सच्चाई से स्पष्ट करते हैं। अपना एक घर होना और अपने घर के बाहर गमले में फूल रखना, अपने बच्चे को पालने में हिलाना आदि कितनी रोचक कामनायें है। प्रेमचन्द के होरी की गाय खरीदने को सपना है। उससे भिन्न नहीं है। इस बेचारे बातरे की लालसा।

लेकिन अठारह वर्षों से संचित इस बेतरा की लालसा ने अपने घर के रूप में एक स्थान पाया था। वही था गिरीश पार्क के कुछ आगे एक अशोक का पेड़। उस पेड़ के नीचे करीब करीब उसने अपना स्थायी अड्डा जमा लिया। दूसरी ओर इस पेड़ के नीचे एक

भिखारी था "दागु" पास ही एक दुकान था उस दुकानदार वहाँ से जाने को दागू को विवश करता है । तभी उस दुकानदार से दागू ने कहा " लाला हमें भी रहने को जगह-चाहिए "[36] कारपरेशन के इन्स्पेक्टर आकर दागू से उस वृक्ष के नीचे से जाने को कहने पर दागू ने इन्स्पेक्टर से कुछ अनावश्यक बातें कहीं । बातरा कुछ न बोल सकी । उसकी आँखें उसका हृदय, उसका मन एक एक उस स्वप्न में पुलक उठ दो बच्चे दो गमले, दो एक फूल और.....और......"[37] प्रेमचन्द के गोदान "का" होरी से किस प्रकार बातरा भिन्न है । होरी से गो गये बीते है बातरे की समस्या । यह किसी वैयक्तिक समस्या नहीं है । समसामयिक परिदृश्य की ज्वलन्त समस्या है । जीवन की वास्तविक भूमि पर जीवन की कठिन विसंगतियों के मध्य जीनेवाले व्यक्ति की समस्या सामाजिक न है तो और क्या ? साधारण से साधारण एक मानव की जीवन समस्या सामाजिक न है तो और क्या ? ?

सबेरे चार बजे दागू और बातरा दोनों को कोठरी से निकाल दिया गया । बच्चा उसे नहीं दिया - साधनहीन लोगों के मुर्दे जलाने का पुण्यकार्य कारपरेशन कर देता है । तब उसी जलनकार्य की समस्या बच जाती है । "अपना" कहने को जमीन न होने के कारण जलनकार्य भी आखिर एक समस्या है । "दागू कुछ पुराने अखबारों के गट्ठर में से अखबार निकालकर एक के ऊपर एक बिछाया जा रहा है कि बैठने लायक जगह बन जाय, बातरा टीन की चादर को सम्हालनवाले स्तम्भों के सहारे खड़ी प्रतीक्षा कर रही है । मदद उससे की नहीं जाती, उसकी टांगे काँप रही है । वह फटी-फटी सी दृष्टिहीन-सी आँखों से बिछाते हुए कागज़ों की ओर देखती जाती है ऐसे मानों

आँखें बाहर की ओर नहीं भीतर की ओर देख रही हों, जहाँ उसमें दुर्बल असहाय लेकिन नया ... न छटपटा रहा है, जहाँ तक अदम्य जीवन-शक्ति नींद में मा ... छप उठता है अकथनीय सपने देखकर ... के आगे दो छोटे छोटे फूल-से गमले, ... पालने में दो छोटे-छोटे बच्चे और बातरे के पास एक और.....कोई एक और......" ।[38]

प्रस्तुत कहानी का अंतिम वाक्या देखिये, कोई एक और.... कहकर अधूरा रहता है । यहाँ कहानीकार का वह अंतिम वाक्य नहीं है बल्कि अधूरे जीवन की अभिलाषायें अधूरी ही चलती है । प्रेमचन्द का अंतिम उपन्यास "गोदान" के होरी की अभिलाषा था एक गाय को खरीदना । वह एक परिश्रमी कृषक था । जीवन के प्रभात से प्रदोष तक उसने काम किया । लेकिन एक गाय को खरीदने केलिये वह असमर्थ निकला । उसके पास ... था । पूँजीवादी शोषण की कठोरता का प्रत्यक्ष प्रमाण है होरी । इसी प्रकार जीवन में एक बड़े शोषण का, अधूरी जीवन-कहानी है दागू और बातरा । काल के प्रवाह के साथ वह निरंतरता से चलती है ।

शरणदाता भारत की स्वतंत्रता संग्राम के बाद की कहानी है । साम्प्रदायिक दंगों के फलस्वरूप बहुत अधिक शरणार्थियों का भारत में आना पड़े । इसी प्रकार का एक शरणार्थी है "शरणदाता" कहानी का नायक "देविन्दरलाल" । उसे अपने दोस्त रफ़ीकुद्दीन के घर से जाना पड़ा । वह अताउल्लाह के शरण में जाता है । लेकिन हिन्दु मुस्लिम दंगे के समय एक हिन्दु को मुस्लिम दोस्त के यहाँ छिपना पड़ता है । लेकिन धार्मिक विरोध के सामने मित्रता खराब हो जाती है । अताउल्लाह देवीन्दरलाल को विष मिलाकर भोजन देने की

तैयारियाँ करता है । सौभाग्य से उसकी बेटी उसे जान है । वह देवीन्दरलाल को खबर देती है । के अनुसार वह खाने से पहले रोटी का टुकड़ा उस घर के पालतू-बिल्ली को देता है । बिल्ली तड़पकर मर जाती है । और देविन्दरलाल उस घर से भाग जाता है ।

साम्प्रदायिक दंगे से पीड़ित और जर्जरित उसी समय के सामाजिक वातावरण में देवीन्दरलाल का जीना या रहना कितने मार्मिक ढंग से वर्णित किया है । उसी समय के एक साधारण व्यक्ति की दयनीय स्थिति का मर्मस्पर्शी चित्रण है यह कहानी । "देवीन्दरलाल का और बिस्तर जब कोठरी के कोने में रख दिया गया, और बाहर आंगन का फाटक बन्द करके उसमें भी ताला लगा दिया गया, तब थोड़ी देर वे हतबुद्धि रहे । यह है आज़ादी । पहले विदेशी सरकार लोगों को कैद करती थी वे आजादी के लिए लड़ते थे अपने ही कैद रहे हैं क्योंकि वे आज़ादी के लिए ही लड़ाई हैं कि मानव का स्वाभाविक और उन्हें कोठरी-आंगन का आरम्भ किया कि क्या क्या सुविधायें वे अपने लिए कर सकती है ।"[34]

स्वतंत्र भारत का स्वतंत्र नागरिक बन्द कमरे में रहता है । देविन्दरलाल के समान, कोठरी के अन्दर रहकर बाहर आंगन का फाटक बन्द करके उसमें भी ताला लगा दिया है । अभी हमारे वर्तमान समाज में जो हिन्दु मुस्लिम दंगे है, गलियों पर जाना ही मुश्किल हो गया है । घर के भीतर रहना भी मुश्किल है । ताला लगाये गये किवाड़ों को तोड़ कर मकानों को, कारखानों को खोलने के लिए, उसे राख कर देने के लिये उनके पास तो बम है । खतरनाक बम ।

शरणदाताओं की यह कथा, शरणार्थियों की यह विवशता काल के साथ हमेशा वर्तमान है । मानव ही जीवनदाता है, शरणार्थी हिन्दू है, मुस्लिम है, ईसाई है, भाई-भाई है लेकिन आपस में मिलनेकेलिये ... रखता है, अपने अपने पास । आधुनिक मानव दूसरों को मारने केलिये ... में हाथ मिलाकर देना भी मुक्ति ... है । ... करके ये मित्रता जोड़ना है वह मुश्किल की बात है । भोजन देने ... कितनों को दे सकते हैं उसे तो ... बम ... डना ही आसान है । जाति के नाम पर धर्म के नाम पर, मानव आपस में भाई भाई को मार डालता है । यही हमारे आसपास अभी चल रहे है । समस्यायें एक उत्तर रहित प्रश्न के समान हमारे सामने ... चिह्न ... है । हम सब इन प्रश्नों से कलंकित काल के प्रवाह के साथ ... शरणार्थी है ।

कलाकार की मुक्ति

प्रस्तुत ... कला की पूर्ति से एक प्रकार की मानसिक मुक्ति का अनुभव करनेवाले कलाकार की छाया ... । कला का सृष्टि करते समय उनके मन में एक प्रकार की रासायनिक प्रक्रिया चल रही है । "यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते मानो एक नई खिड़की खुल जाती है और पौराणिक गाथाओं के चरित्र नायक नये वेश में दीखने लगते हैं । वह खिड़की मानो जीवन की रंगस्थली में खुलनेवाली एक खिड़की है । अभिनेता रंगमंच पर ... रूप में आने से उससे कुछ पूर्व के सहज रूप में उन्हें इस खिड़की से देखा जा सकता है । या यह समझ लीजिए कि ... उन्हें कोई आदेश न देकर छोड़ दें तो वे पात्र सहज भाव से जो अभिनय करेंगे वह हमें देखने लगता है । और कैसे मान लें कि

सूत्रधार के निर्देश के बिना पात्र जिस रूप में सामने आते हैं-जीते है- यह अधिक सच्चा नहीं है ।" [40] सूत्रधार का निर्देश यहाँ महत्वपूर्ण है । किसी भी कलासृष्टि के लिए सूत्रधार सृष्टा एक महत्वपूर्ण अंग है । कलाकार के हृदय में भावनाओं से तपकर ही सृष्टि का वास्तविक रूप मिलता है । तपने की यह वृत्ति ... में एक नाटक ... सूत्रधार के निर्देश से कितनी ... है ।

"कलाकार की मुक्ति" किप्रदीप के महान् कलाकार पिंगमाल्य की कथा है । उसे सौन्दर्य की देवी अपरोदिता का वरदान मिला है । पिंगमाल्य जो कुछ करता है वह सुन्दर था । वह एक कुशल शिल्पकार था । उसके हाथ से असुन्दर कुछ बन ही नहीं सकता । पिंगमाल्य अनेक मूर्तियों की सृष्टि करता था । उसे देखकर दर्शक विस्मय से कहते है । इस व्यक्ति के हाथ ... न जाने कैसा जादू है पत्थर भी इतना सजीव दीखता है कि जीवित व्यक्ति भी कदाचित् उसकी बराबरी न कर सके । कहीं देवी अपरोदिता ... मूर्तियों में जान डाल देती । देश-देशान्तर के वीर और राजा उस नारी के चरण चूमते जिसके अंग पिंगमाल्य की छेनी न गढे हैं और जिसमें प्राण स्वयं अपरोदिता न फूंके है ।" पिंगमाल्य ने कला का जो अनश्वर नमूना बनाया देवी अपरोदिता ने उसे प्राण दिया । देवी अपरोदिता का यह दान पिंगमाल्य को पसंद न ... उसने कहा कि " मेरी जो कला अमर और अजर थी उसे आपने जरा मरण के नियमों के अधीन कर दिया। मैं ने तो सुख भोग नहीं माँगा-मैं तो यही जानता आया कि कला ... आनन्द ... [41] ... पिंगमाल्य ... मिट्टी की मूर्ति उस सुन्दरी स्त्री से अधिक प्यारी थी । क्योंकि

वह मूर्ति तो चिरतन है। स्त्री कितनी ही सुन्दरी हो, उसका सौन्दर्य नश्वर है वह मरणशील है। कला तो अनश्वर साधना है फिर अलौकिता देवी ने उसे मिट्टी की मूर्ति ही बनायी। उसमें प्राण डाल दिया। और पिंगलमाल्य से कहा कि वह चाहेगा तो उस मूर्ति को फिर दूसरी स्त्री बना देगा। लेकिन पिंगलमाल्य को यह पसंद न था। उसे उसकी मूर्ति ही अच्छी लगी। अंत में देवी ने भी पिंगलमाल्य के लिये व्यस्त होना अनावश्यक समझा क्योंकि कला-साधना की एक दूसरी देवी है, और निष्ठावान गृहस्थ जीवन की देवी उससे भी भिन्न है।" [43] इस घटना के बाद पिंगलमाल्य की कीर्ति बढ़ती रहती थी।

स्वयं अज्ञेय कहता है "कहानी मैं नहीं कहता। लेकिन मुझे कुतूहल होता है कि कहानियाँ आखिर बनती कैसे हैं ? पुराण-गाथाओं के प्रतीक सत्य क्या कभी बदलते नहीं ? क्या सामूहिक अनुभव में कभी कोई वृद्धि नहीं होती ? क्या कलाकार की कल्पना ने किसी नये सत्य का स्पर्श नहीं पाया ? आर के वाक्य "कलाकार की मुक्ति" कहानी का अंतिम वाक्य है। वास्तव में ... कलाकार ... से कुछ लेता है ... समाज को कुछ देता है।

शृंगार ... रोज़

... की कहानियाँ विशेषकर सामाजिक कहानियों को ढूँढ-निकालने पर रोज़ को छोड़कर जाना अजूरी निकलेगा। रोज़ के प्रधान पात्र हैं महेश्वर और मालती, जो पति और पत्नि हैं। महेश्वर एक डाक्टर है। जो गैंग्रीन का इलाज करता है, पाँव में काँटे की चुभन से इस रोग का जन्म हो सकती है। ... को काँटा चुभ गया है,

लेकिन विडम्बना की स्थिति यह है कि डाक्टर को इसका पता नहीं है। आज नगरबोध का परिणाम हो या हो। यह एक नंगी वास्तविकता है कि न से पीड़ित है और परिवेश से कटता जा रहा है।

महेश्वर हर दिन घर में वापस आते हैं बहुत देर में उ बच्चे और पत्नि के साथ बिताने को उ नहीं मिलता। इस कहानी की शुरुआत पढ़ने पर यह मालूम हो जायेगा। कहानीकार लिखते हैं " "दोपहर में उस सून आंगन में पैर रखते हुए मुझे ऐसा जान पड़ा, मानो उसपर किसी शाप की छाया मंडरा रही हो वातावरण में कुछ ऐसा अदृश्य अस्पृश्य, किन्तु फिर भी बोझल और प्रकम्पमय, और घना सा फैल रहा था......" शाप की छाया कितने घरों के भीतर और बाहर फैली है। अदृश्य अस्पृश्य, बोझल प्रकम्पमय और घना-सा जैसे शब्दों का प्रयोग आधुनिक परिवेश के लिए कितने प्रसंगानुकूल है। आधुनिक जगत् में हर एक व्यक्ति के भीतर प्रकम्पमय दुःख भरा है। चारों तरफ उसकी छाया है।

महेश्वर और मालती का एक बच्चा है वह रोता है। वह चिल्ला-चिल्लाकर रोनेपर महेश्वर कहता है " अब रो-रोकर सो जायेगा, तभी घर में शान्ति होगी।" उसके इस कथन से बच्चे के प्रति किसी प्रकार का भाव है। कितना अ है। महेश्वर को भोजन देने के लिये । मालती कहती है कि "अभी छुट्टी हुई जाती है" और मेरे कहने पर हाँ कि " ग्यारह बज जाते है" थी तो सिर हिलाकर बता रही थी कि रोज ही इतने बज जाते है ....मालती ने वह सब कुछ नहीं देखा मालती का जीवन अपनी रोज़ की नियत गति से बहा जा रहा था और एक की चंद्रिका देखने एक

संसार ...थे, स्कूल को तैयार नहीं 46

कहानीकार यही कहानी में ऊपर के वाक्यों में जो लिखा है वह पूर्ण से ठीक लगता है । अपनी रोज़ की नियत गति से बहा जा रहा मालती के जीवन में ही नहीं मेरे परिवेश के अनेकों नारियों की कथा यही ही है । अपने घर के सारा काम संभालकर, बच्चे और बूढे माँ बाप के भोजन वस्त्र बीमारी आदि अनेक बातों से थकी हारी कितनी स्त्रियाँ हमारे आसपास है । प्रभात से लेकर अनेक प्रकार के कामों में निरन्तर लगे रहती है । संध्या तक वे अपने पति की प्रतीक्षा में है । फिर भी कुछ न कुछ काम करके समय बिताती है । रात अधिक से अधिक अंधेरा पड़ जाता है । फिर भी पति न वापस आता है । वह प्रतीक्षारत है । ग्यारह बज के आने पति महोदय आता है । फिर उसे नहाने का प्रबन्ध, फिर सब कुछ इसी प्रकार रोज़ चलता है यही रोज़ हमारे बीसवीं शताब्दी के अनेकों स्त्री-पुरुषों के पति-पत्नियों का रोज़ है । अज्ञेय का अपना कुछ नहीं है । आज के पारिवारिक जीवन का वास्तविक रूप है । इस प्रकार से कहानियों में अज्ञेय ने सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया है ।

महेश्वर और मालती का एकमात्र बच्चा है टिटी । वह खिसककर खाट से नीचे गिर पड़ता है । बच्चे को चोट लगी । कहानीकार अधिकतर के स्तर पर वहीं था । बच्चे को वह उठा लेता है । उसी के बीच मालती दौड़ आती है । मालती ने बच्चे को लेने के लिए हाथ बढाते हुए कहा " इसको चोटें लगती ही रहती है । रोज़ ही गिर पड़ता है । " ऐसे सुनकर कहानीकार स्तब्ध हो जाता है ।

[illegible] उसके मन में विद्रोह का भाव उठता है, विद्रोह तो उसके मन में है-- "मेरे मन के भीतर ही, बाहर एक शब्द भी नहीं निकला-- मैं पूछती हूँ यह तुम्हारे हृदय को क्या हो गया है जो तुम अपने एक मात्र बच्चे के गिरने पर ऐसी बात कह सकती हो-और यह अभी जब तुम्हारा सारा जीवन तुम्हारे आगे [illegible] ।" इसी प्रकार की [illegible] माँ भी [illegible] जीवन [illegible] में बहुत बड़ी संख्या में ।

[illegible] कहानियों के विवेचन [illegible] से यह मालूम हो जाता है कि [illegible] की कहानियों में [illegible] दर्शन से प्रभावित [illegible] है । समाज के एक बड़ा वर्ग साधनहीन [illegible] वर्ग का [illegible] करने की पूजा चल रहा है । ये [illegible] भिन्न वर्ग के बीच से एक वैचारिक [illegible] का वैयक्तिक [illegible] का रूप उभरता है । स्वतंत्रता के बाद भी व्यक्ति [illegible] का [illegible] चलता रहता था । सामाजिक धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्रों में व्यक्ति अनजान में शोषण का पात्र बनता रहता था । समाज की विभिन्न इकाइयाँ इसके विरुद्ध उगने लगी । [illegible] और सुविधाओं की तलाश में दिशा-भ्रष्ट हो गये मानव । उनके व्यक्तित्व में वर्गीकृत चेतना आ गयी । वह चेतना सामाजिकता केलिये घातक [illegible] हुई । दलगत राजनीति उभर आयी यह धर्म भाषा व्यवसाय आदि पर आधारित चेतना का जन्म दिया । यहाँ भी सामाजिकता [illegible] विचारधारा आदि का स्थान कम हो गया । इसलिए व्यक्ति समाज [illegible] सिमटकर जाति धर्म भाषा आदि के आधार पर नयी दलों में जुड़ने लगा । समाज और राष्ट्र के स्थान पर जाति धर्म प्रदेश आदि के साथ जुड़कर जीवन की सुविधाओं को बढ़ाने की प्रवृत्ति प्रबल हुई । व्यापक संस्था या महत्तर आशय से [illegible] प्रकार

बढ़ जाने पर आदमी सेल्फसेंटर्ड, स्वार्थी, दंभी डिटेच्ड दिखाई पड़ा दूसरे महायुद्ध के साथ, व्यक्ति और समाज का यह जो व्यापार, प्रारम्भ [illegible] स्वतंत्रता के बाद के दशकों में चरमसीमा पर पहुँच गया। स्वतंत्रता के बाद और उसके पूर्व के समय जो व्यक्ति और समाज सम्बन्धित विचार धारायें वर्तमान थी, वही विचारधारायें [illegible] सामाजिक स्थिति ही अज्ञेय की कहानियों में दिखाई पड़ती है। शरणार्थी रोज़, कलाकार आदि कहानियाँ इसका वास्तविक प्रमाण है।

अज्ञेय की कहानियों के बारे में यह धारणा व्यापक हो गयी है कि उनकी कहानियाँ आत्मकेन्द्रित और घोर वैयक्तिक है। मैं निश्चय पूर्णतः नहीं करती हूँ। अज्ञेय [illegible] कहानियों में वैयक्तिकता की प्रधानता है। लेकिन उनकी कुछ समाज की समस्याओं पर प्रकाश डालनेवाली कहानियाँ भी मिलती है। अज्ञेय की उन्हीं सामाजिक कहानियों के वास्तविक महत्व को उद्घाटित करना मैं आवश्यक समझती हूँ। अज्ञेय की रोज़ कहानी यही व्यक्त कर चुके है। आधुनिक समाज में घर में विवश और परेशान रहनेवाली मालतियाँ बहुत है। स्त्री अब भी पुरुष की गुलामी से आज़ादी पाने में सफल नहीं है। वह किसी न किसी प्रकार पुरुष पर निर्भर है, वह अब भी पुरुष के मानसिक उत्पीड़न की चीज़ हो गयी है। स्त्री-पुरुष की समता सिर्फ किताबों के पन्नों में है। हमारी सामाजिक व्यवस्था में समता कहीं नहीं नज़र आता है। दहेज प्रथा के विरुद्ध संगोष्ठियाँ है। दण्ड देने का नियम है लेकिन लोग दहेज देते हैं और लेते हैं। संस्कृत सामाजिक विभीषिका को अनदेखाकर कहानीकार अज्ञेय लिखते हैं, ऐसा कहीं नहीं पा सकता। व्यापक तौर पर मानव-मूल्यों से सम्बन्धित कहानियाँ

उन्होंने लिखा । सामान्य आदमी के दुख दर्द और आकांक्षा उसकी कहानियों के केन्द्र में है । लेटर बाक्स शरणदाता जैसी कहानियां पढ़ने पर यह बात जाहिर हो जाती है । "लेटर बक्स का बालक" रोशन" भारत विभाजन के समय की कथा कितनी मर्मस्पर्शी ढंग से पाठक के सामने प्रस्तुत करता है । अनलंकृत सहज भाषा में भयंकर हत्याकाण्ड और नीच बलात्कार की कथा कहता है । पाठक की आँखों से आँसू बहने लगते हैं । "शरणदाता" में भी हम यह देखते हैं । अपने परिवार के रिश्तेदारों की भी न परवाह करके देवीन्द्रलाल को खाने में विष के बारे सचेत करने में, और फिर इनसानियत के नाम पर सिफारिश करना आदि बातों के द्वारा पाठक यह समझता है कि लेखक पात्र में मानवीय आदर्शों की स्थापना करता है । देवीन्दरलाल उस अपील की चिट्ठी को ... से मसलकर अपना परिवार नष्ट हुआ अपना जीवन ही बच गया है । इसलिए मानवीय मूल्यों का यहाँ स्थान नहीं है । इसलिए ऐसे कोई अपील इस प्रसंग पर व्यर्थ और बेकाम है । "मुस्लिम-मुस्लिम भाई-भाई में धर्मों की कृत्रिमता के बारे में नहीं बल दिया है ।

पवित्रता का भी अतिक्रम करता है । रेलगाड़ी में यात्रा करते समय अकेला, ... , ... स्त्रियों के पक्ष में हैं । वह इसलिए नहीं है कि वे मुस्लिम है । लेकिन कहानीकार साधनहीन साधारण नारियों के पक्ष में है । वह इसलिए नहीं है कि वे मुस्लिम है । लेकिन कहानीकार साधनहीन साधारण नारियों के पक्ष पर है । स्पेशल ट्रेन के सेकंड क्लास में अपने औद्योगिक दर्प से रंगी अमजद भाई और उनके साथ की औरतों को लेकर व्यंग्य, उच्चवर्ग और निम्नवर्ग की वह दरार को हीन समझनेवाला है । बड़े घर की वे रानियाँ आखिर क्या करती है, ... जैसी स्त्रियाँ जाहिल और गरीब समझकर उनसे

बुरा व्यवहार करता है ।

रमन्ते तत्र देवता "अज्ञेय की एक सामाजिक कहानी है । प्रस्तुत कहानी में तत्कालीन हिन्दु समाज में प्रचलित कुरीती का वर्णन है । हिन्दु समाज में स्त्री की पराधीनता स्त्री-पुरुषों को लेकर दोहरे विचार-मूल्यों का अस्तित्व आदि का परामर्श है । विभाजन के समय की उस भयंकर विभीषिका का विवरण देकर कहानीकार इनसानियत का महत्व स्थापित करता है । बूढे पि के साथ उनका जो व्यवहार है, उसके सन्दूक छीनकर उसे कष्ट उठानेवाले लोगों को दह सहायता करती है । यह तो बिल्कुल ईसाई मिशनरियों के काम जैसा है । औरत के दे रमतों का सवाल यहाँ उठता है । विभाजन के समय यह एक भयंकर समस्या है । कहानीकार प्रस्तुत कहानी से यह व्यक्त करता है कि इज्जत तो हिन्दु या मुसलमान का नहीं माँ और बहिन की है । इंसान ि है । यहाँ हिन्दु या मुसलमान से बढकर स्त्री की इज्जत, मानव की व्यापक पथ पर आती है । यही मानवतावाद है । वर्गवाद नहीं जातिवाद भी नहीं । यहाँ हानि र का थ या आलोल तत्वों के प्रति जो है तो परिलक्षित है ।

उपर्युक्त कहानियों को छोडकर अज्ञेय की कहानियों में जीजीविषा मिलनबाबू, "पहाडीजीवन" आदि मानवीय स्थितियों का सहज अंकन है । मिलनबाबू कहानी ठीक तरह से पढने पर बार बार पढने पर, चिरअमानव को देखने की उनकी अभिलाषा दिखाई पडती है । "मैं भी जब किसी एक चेहरे पर ध्यान केन्द्रित करना चाहता हूँ तो और अनेक चेहरे सामने आकर उलाहना देते हैं " क्या हम नहीं ? क्या हमें

तुम भूल गये हो ?" [49] कभी पुरुष है स्त्रियाँ है, बच्चे है, इतर प्राणी में ... है, कुत्ते हैं, तोते हैं, एक गिलहरी है, जो मैंने पाली थी और मेरी जेब में रहती थी, एक मुना... है, जो मेरी गोली से घायल होकर ची...ता हुआ मीलों दौड़ा था, एक कुत्ता है जो मेरी बीमारी ... सिरहाने बैठकर ... रोता था, एक टूटी चोंच और कटे ... वाला कौआ, जो मुलतान जेल में मेरा दोस्त बना था और "..." नाम से ...रने पर आधा उड़ता और उचकता हुआ आकर हाजिर हो जाता था -- कहाँ तक गिनाया जाए, पेड़-पौधों के हम चेहरे नहीं मानते, नहीं तो शायद वे भी सामने आ खड़े होते । कालिदास ने शकुन्तला के जाने पर रोती हुई वनस्पतियों का वर्णन किया है ।

...हूतपाण्डुपत्रा मु चति अश्रुव लता:" उपर्युक्त वाक्यों में अज्ञेय यही कहना है कि संसार के किसी एक चेहरे पर ध्यान देने लगने पर अनेकों चेहरे उसके पास आकर परिचय[पहचान] की बात कहते हैं । तात्पर्य है उसे संसार के अधिक से अधिक चेहरे परिचित है । उसे विश्वबन्धुत्व है । कहा ... मार ... मध्यवर्ग या उच्चमध्यवर्ग से ही ...ें परिचित है । अज्ञेय को उच्च...मध्यवर्ग के साहित्यकार माननना तो गलत है । उन्होंने निम्नवर्ग का भी चित्रण किया है । उन चेहरे में से वह एक चेहरा । चि...नबाबू का चेहरा न सुन्दर था, न ...रिम, न वह बड़े आदमी ही थे - साधारण पढ़े-लिखे साधारण क्लर्क ।" [50] यहाँ वह स्पष्ट हो जाता है कि चितीनबाबू जैसे साधारण क्लार्क से भी उसका बिलकुल स्नेह है सद्भाव है । उनसे परिचित चेहरों में स्त्री-पुरुष ही नहीं बल्कि जानवर है । घोड़े कुत्ते गिलहरी जैसे जानवर भी उनके सामने प्रत्यक्ष हो जाते हैं । कहानीकार कहते है कि वे भी

और परिचित है । इससे यह सत्य पहचान सकते हैं कि उनका प्रेम या प्यार मानवमात्र से नहीं जानवरों तक है । वह कहता है उन परिचित चेहरों में एक कुत्ता है जो उसकी बीमारी के समय उसके सिरहाने बैठकर आंसू बहाता था । कुत्ते का अपने मालिक के प्रति जो प्रेम है उसकी ओर संकेत किया गया है । उसकी बीमारी के समय उसके पास बैठने को एक कुत्ता ही था । जानवरों के बीच जो स्नेह है उसका विवरण कितना स्वाभाविक हो गया है । एक टूटी चोंच और कटे पंखवाले कौए के बारे में वह कहता है जो जेल में उसका दोस्त था । प्रस्तुत कौए की बात से हम यह जान सकते हैं कि जानवरों का आघात करना उचित नहीं है । वे हमारे दोस्त है । पेड़-पौधों के बारे में भी वे कहते हैं । उन्हें मानव से ही नहीं पेड़-पौधों से ही प्रेम है । शकुन्तला के जाने पर रोती वनस्पति का भी वह वर्णन करता है महान् कवि कालिदास तक पहुँचने की क्षमता उसमें है । इतना ही नहीं सार्वलौकिकता से मण्डित होकर वह सोचता है "मेरी सहानुभूति उतनी दूर तक शायद नहीं है, लेकिन चेहरों का मेरे पास पर्याप्त संग्रह है --सभी अविस्मरणीय, सभी स्मरणीय, अगर एक चुनता हूँ एक अत्यन्त साधारण व्यक्ति का अत्यन्त साधारण चेहरा, क्योंकि यही तो मैं कहना चाहता हूँ- साधारण ही, स्मरणीय नहीं है, हर गुदड़ी में लाल है, जरा उसे उलट कर झाँकने का कष्ट तो करो ।"[51]

"जीजीविषा" की बातरा अपने जीवन की साधारण सी अभिलाषा की पूर्ति न करके अधूरे सपनों से मर जाती है । इसी प्रकार के अनेक पात्र अज्ञेय की कहानियों में उभरते है । उसके अपने जीवन से ही नहीं बल्कि आस पास या तत्कालीन समाज से चुने हुए है । वे आज भी हमारे चिरपरिचित है ।

निष्कर्ष

वास्तव में कहानिकार अज्ञेय की कहानियाँ अमर-वल्लरी की प्रेमी प्रेमिका की [illegible] प्रतीक्षा के एक प्रतीक की है, गैंग्रीन से पीडित मालती की है, "पगोडा वृक्ष" के नीचे अपने मृत पति [illegible] याद में बैठी विधवा सुखदा की है- मालती रूपी "अछूते [illegible]" है, अताउल्ला के आश्रय में आनेवाले देविन्द्रलाल की है, "शरणदाता" अताउल्ला की है, होली-बोन् [illegible] [illegible]ें, को देखते रहते समय, "साँप" को देखकर डरकर वहाँ से [illegible]कर "[illegible] [illegible]ाबू" के साथ "इजाजत का सा[illegible]न" खरीदकर वहाँ से वापस [illegible]नेवाला एक "कलाकार की मुक्ति" है। साहित्यकार अ[illegible] [illegible]पास के इस नटखटे समाज से [illegible] पाता [illegible] अपने व्य[illegible] [illegible] सुरक्षित रखकर समाज से मिलकर [illegible]ाना वे चा[illegible] हैं।

xxxxxxxxx

अध्याय - पाँच

अज्ञेय की कविता में व्यक्ति और समाज

साहित्य में वैयक्तिकता का स्थान

"वैयक्तिक अनुभूतियाँ ही संपूर्ण मानवीय साहित्य का आधार है। अनुभूति विचार या कल्पना साहित्यकार के व्यक्तित्व से संप्रभावित होना स्वाभाविक है। यह ठीक है कि वह मानवमात्र की भावनाओं, आकांक्षाओं तथा इच्छाओं की अभिव्यंजना करता है। परन्तु उस साहित्यिक अभिव्यंजना पर उसकी अपनी रुचि तथा स्वभाव का प्रभाव बराबर विद्यमान रहता है। किसी भी पुस्तक की उत्कृष्टता का कारण उसकी रचना का साहित्यकार के व्यक्तित्व की महत्ता तथा उत्कृष्टता ही है। इस प्रकार साहित्य की मूलभूत प्रेरणा अभिव्यक्ति की इच्छा मानी जा सकती है।"[1] आदिकवि वाल्मीकी का प्रथम काव्य जो साहित्य का आदिकाव्य है "मा निषाद प्रतिष्ठा त्वं" पढ़ने पर उपर का सत्य मालूम हो जाता है। तपस्या करते रहते उन क्रौंच पक्षियों से एक को गिरते देखकर वाल्मीकी का कवि हृदय उबलता है और अहेरी के प्रति काव्य रूप में शाप निकलता है। यही कविता की वास्तविक शुरूआत है। यहाँ निस्सन्देह व्यक्ति की निजी अनुभूति वाल्मीकी की मानसिक व्यथा ही कविता का बीज

है । नई कविता में, साहित्य में वैयक्तिकता का स्थान है । वैयक्तिकता या व्यक्ति के मन की अनुभूतियों का प्रतिफलन उनके आशा-निराशा पूर्ण ... संघर्ष सभी का शब्दचित्र साहित्यकार रूपी व्यक्ति के कलारूपी प्रयास में उभरता है तो इसमें अद्भुत का स्थान नहीं है । हर एक साहित्यकार समाज का सजीव प्राणी है । उसकी अनुभूतियाँ हर्ष-विषाद वह समाज का अपना है । ... समाज से, परिस्थिति से अप्रभावित साहित्यकार बिल्कुल पागल है ।

परिस्थिति का प्रभाव कवि के व्यक्ति मन को जिस प्रकार स्वाधीन करता है वही वैयक्तिक अनुभूतियों के रूप में प्रवहित होता है । मुक्तिबोध ने ही कहा है बाह्य से प्राप्त ज्ञान और भाव लेखक के अन्तर्व्यक्तित्व में ऐसे घुल-मिल जाते है कि ... उसके निजी हो जाते है । इसलिये कोई भी लेखक अपने युग का अंग होता है ।"[2] इस प्रकार कलाकार के मन के अन्दर जो विकार है वही अन्य सदस्यों के मन में भी वर्तमान है । "सृजन सामाजिक शक्तियों से प्रभावित होता है, किन्तु अन्ततोगत्वा वह सृजन व्यक्ति के द्वारा होता है । इसके गहन, अनेक स्तरोंवाले अन्तर्जगत से उद्भूत होता है ....यदि वह व्यक्ति और उसका वह जटिल अन्तर्जगत न हो तो सृष्टि के आदि से ... र आज तक की समस्त सामाजिक शक्तियाँ और राज-सत्तायें महान कविता की एक भी पंक्ति या एक भी सप्राण या सजीव चित्र नहीं रच सकती थी"[3] डा. धर्मवीर भारती के अनुसार भी कला-सृष्टि की आदि से अभी तक की रचनाओं में कवि या साहित्यकार का जटिल अन्तर्जगत दृश्यमान है । कवि का अंतर्जगत जिसप्रकार पाठक का अपना हो जाता है वही काव्यकला है । सृजनप्रक्रिया है ।

इस प्रक्रिया में व जितना दूरी से अपने मन और पाठक के मन को ... रखता है वहाँ कवि की सफलता है। यही ... का भी मत है। टी. एस. एलियट का ... मत यही है।

हिन्दी कविता में यह व्यक्तिवादिता छायावाद से ही अधिक दिखाई पड़ती है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पीड़ित और प्रेरित मानव मन अपनी आन्तरिक भावनाओं की अभिव्यक्ति केलिए लालायित रहा। इसके फलस्वरूप काव्य में व्यक्ति की मनोदशायें अभिव्यक्त होने लगी जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत सूर्यकान्तत्रिपाठी निराला ... वि सारि... व में प्रति... हो गये। वैयक्तिकता के स्वच्छन्द प्रवाह के रूप में प्रसाद ने "आँसू" बहाये ... निराला ने "सरोज स्मृति" में ... रचा। प्रकृति के सुकुमार कवि पंत भी गुञ्जन, ग्राम्या जैसी कविताओं में अपनी संवेदनशीलता खूब प्रकट करता है। प्रिय-विरह से ... कवयित्री महादेवीवर्मा नीहार, नीरजा जैसी कृतियाँ ... अपनी मानसिक ... आदि व्यक्त करती है। रहस्य... कवयित्री महादेवीवर्मा ... अलौकिक प्रियतम को पाने के लिए ... है। और इससे आगे बढ़कर बच्चन अंचल नरेन्द्रशर्मा जैसा कवि आता है। बच्चन की "मधुशाला" और मधुबाला से छायावाद का भोगवादी दृष्टिकोण उभर आता है। छायावाद की अति-व्यक्तिवादिता के विरुद्ध, स्वप्निल और वायविक जगत से मानव को उतारकर यथार्थ के धरातल पर लाने का यह प्रयत्न कवियों में ही आरम्भ हुआ। वही प्रवृत्ति प्रगतिवाद है छायावादी कवि पंत की प्रगति युगवाणी जैसी कृतियों से ही इसका आरंम्भ है। कवि पंत ताजमहल को देखकर उसकी सौन्दर्य का अनुभव नहीं करता है। वह तो वहाँ पसीना बहाते श्रमिकों को देखता है। इससे उसका

प्रगतिवादी काव्य "ताज" फूटता है । मजदूरों की पसीने से उसे धोंपता है । वह फूर सामाजिक होकर व्यक्ति-व्यक्ति के हृदय को आलोकि करता है ।

अज्ञेय की कविता में समाज

कला का श्रेष्ठतम पुजारी कलाकार भी एक समाज का सदस्य अवश्य है । समाज का सदस्य होने के नाते उसे सामाजिक उत्तरदायित्व भी है । कलाकार जितना समर्थ हो या सृजन की शक्ति जितने अधिक हो, उसका दायित्व बढ़ता जाता है । "एकान्त सुखाय" रचना करने में कोई सफलता नहीं है । रचयिता होने के पहले वह मानव है । इसलिए मानव और मानव समाज से ऊपर उठने के क्रम से समाज से जोडने का फल देता है । अज्ञेय जैसे प्रयोगवादी कवि एक ओर अपनी सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति हमेशा बोधवान् है लेकिन दूसरी ओर अपनी नयी राहों की खोज में भटकती है इस खोज में उन्हें कहीं कहीं भूल जाना पडता है कि वह अकेला जाता है लेकिन पूछ लेता है दूसरों से । समय के निरन्तर प्रवाह में रास्ता बदल जाता है । धारा तोडता मरोडता चलता है । समाज बदल जाता है । परिस्थिति बदल जाती है । प्रयोगवाद नयी कविता का यह प्रवाह है । अज्ञेय के शब्दों में "नयी कविता सबसे पहले एक नयी मनःस्थिति का प्रतिबिम्ब है एक नये मूड का- एक नये राग सम्बन्ध का नये कवि कुछ समाज से स्वीकार करते हैं । समाज को नहीं नकारते है । "नये कवि आत्मस्वीकार" में अज्ञेय ने स्वयं कहा है -

किसी का सत्य था
मैं ने असन्दर्भ में जोड दिया
कोई मधुकोष काट लाया था
मैं ने निचोड लिया
किसी की आस्था में गरिमा थी ।
मैं ने उसे धीरे-धीरे सा संवार दिया
किसी की सम्वेदना में आग का ताप था
मैं ने दूर हटते-हटते- उसे धिक्कार दिया

यों मैं कवि हूँ आधुनिक हूँ नया हूँ
काव्य तत्व की खोज में कहीं नहीं गया हूँ
चाहता हूँ आप मुझे
एक एक शब्द पर सराहते हुए पढ़ें
पर प्रतिमा, अरे वह तो
जैसे आप को रुचे, आप स्वयं गढ़ें ।

अज्ञेय जी कविता में ढूँढकर समाज का प्रभाव या परिस्थिति का प्रभाव न देखनेवालों से मेरी यह अपेक्षा है कि उसे खुब पढ लें एक एक शब्द सराहते हुए पढ़े । नये आशयों को पुराने शब्दों में कहना मुश्किल है उसके "शब्द और सत्य" कहना पडता । नये भावों के लिए नये शब्द आवश्यक है ।

कवि जो होंगे हों जो कुछ करने करें
प्रयोजन मेरा बस इतना है
ये दोनों जो
सदा एक दूसरे से तनकर रहते हैं

पर कैसे किस ... लोक-रपु.. में इन्हें मिला दूँ -
दोनों जो हैं बन्धु, सखा, चिर सहचर मेरे ।

शब्द और सत्य में शब्द का अर्थ इसको ढूँढ निकालने के लिए कवि हमें ... है । ... पाठकों को वे ... सखा और सहचर शब्दों से सम्बोधित करते हैं । इस हमारा चारि... जहाँ समाज है वहाँ व्यक्ति है यह ... परम्परा ... ारा कर्तव्य है । बाहर से देखकर अज्ञेय को घोर अहंवादी कहनेवाले आलोचकों के साथ होकर उसे व्यक्तिवादी कहना गलत है । वे तो व्यक्ति को उचित प्राधान्य देते हैं यह ठीक है । वे समाज को नहीं नकारते हैं ।

कवि ... से स्व... ...त सत्य को व्यापक सत्य में बदलने की ... करता है वही सृजन प्रक्रिया है । यहाँ कवि की आत्मा के सत्य को, अनुभूत सत्य को, व्यक्त करने को, सब बनाने को भाषा के ...ों की कमी अनुभव हो जाती है । कवि परिचित शब्दों से नवीन अर्थ भरने को प्रेरित है । कवि अज्ञेय ही कहता है सामाजिक रूढ़ियों में स्थिति-परिवर्तन के साथ विकास ... ... परिवर्तन से होने के कारण आधुनिक मनुष्य का मन यौन ... से ... है और व्यक्ति चेतना एवं वर्जना के ... से भी एक प्रकार की अन्य वर्जनायें उत्पन्न ... हैं । ये सभी मनस्थितियाँ आज की कविता में पायी जाती हैं । उसके साथ ही समाज भी चलता है ।

अज्ञेय की स्वातंत्र्योत्तर कवितायें सामाजिक शोषण देश की सभ्यता, विशेषकर, नागरीसभ्यता, दफ्तर के जीवन सब कुछ ... है । हमारा देश" नामक कविता में हमारे ग्रामों की दुर्दशा यह शब्दों से ... है ।

इन तृण फूस छप्पर से
ढंके ढुलमुल गँवारू

... में ही ... देश बसता है ।"
क्या यह भारतीय ... नहीं है ?
फूलर है ... भारतीय गाँवों के ... भोली भाली नारी ... का चित्र यहाँ ... है ।

"अरी ओ करुणा प्रभामय" नामक अज्ञेय के काव्य संकलन की हिरोशिमा कविता में द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के ... भूमि का ज्यों ... है । "हिरोशिमा" की पंक्तियाँ देखिए -

छायायें मानव-जन की
नहीं मिटी लम्बी हो-होकर
मानव-ही सब भाप हो गये
छूटे हुए-पत्थरों पर
उजड़ी ... की गच पर
मानव का रचा हुआ सूरज
मानव को भाप बनाकर सोख गया ।

हिरोशिमा में बम से जला हुआ मानव को या वहाँ के प्रकृति से ऊँचे उड़नेवाले भाप या धुआँ को देखकर कवि का हृदय पिघल हो जाता है । उसे वह शब्दबद्ध करता है फूलर वह उसका वैयक्तिक अनुभूति है लेकिन तत्कालीन समाज का नग्नचित्र है । जीवन कथा है । यही व्यक्तिगत अनुभव, सामाजिक अनुभव और कवि अनुभव का अनोखा बन्धन है ।

" औद्योगिक बस्ती" नामक उनकी कविता में ... योगीकरण ...

प्रदूषित वातावरण का [illegible] है ।

पहाड़ियों से घिरी हुई इस छोटी-सी घाटी में
ये मुँहझौंसी चिमनियाँ बराबर
धुआँ उगलती जाती हैं ।
भीतर जलते लाल धातु के साथ
कमकर की दुस्साध्य विषमतायें भी
तप्त उबलती जाती हैं ।

यहाँ कवि की सामाजिक चेतना ही परिलक्षित है ।
अज्ञेय की "मैं वहाँ हूँ" कविता देखिए,

दूर दूर मैं वहाँ हूँ ।
यह नहीं कि मैं भागता हूँ
मैं सेतु हूँ-
जो है और जो होगा दोनों को मिलाता हूँ।
मैं हूँ मैं यहाँ हूँ
पर [illegible]
दूर दूर मैं [illegible] हूँ ।

परम्परा के प्रति अज्ञेय का आग्रह यहाँ व्यक्त है । वह परम्परा को [illegible] है । [illegible] भूत और भविष्य को जोड़नेवाला सेतु हो जाता है ।

[illegible] यह जो मिट्टी गोड़ता है
को [illegible] है और मेरे [illegible] है
उसी मैं [illegible] हूँ

अज्ञेय का कविहृदय यही स्वीकार करता है कि वह मिट्टी गोड़नेवालों की गेहूँ खिलानेवाली माताओं की भी साधना है ।

यह जो मिट्टी गोड़ता है
मड़िया में रहता और महलों को बनाता है
उसी में आस्था हूँ ।

यहाँ अनास्था का स्वर नहीं है । आस्था का स्वर है । यहाँ कवि और जीवन के बीच [illegible] था है ।

जो भी जहाँ भी पिराता है
[illegible]र हारता [illegible] न मानता [illegible] –
पीड़ित श्रमरत मानव
[illegible] दुर्दम मानव
कमकर श्रमकर शिल्पी, स्रष्टा
उसी में कथा हूँ ।

यहाँ कवि श्रमिकों को स्फूर्ति प्रदान करता है । वह परिश्रमी लोगों के, प्रतिनिधि के रूप में उसे आशा देकर महान कवि वर्तमान को छूता हुआ भविष्य की ओर जाता है । वह कर्मनिरत आत्मा का अभिनन्दन करता है । प्रस्तुत कविता में कवि कहता है कि वर्तमान स्थिति में मुझे अतृप्ति है । लेकिन भविष्य में मुझे प्रतीक्षा है । अतृप्ति आविष्कार की जननी है । कवि वर्तमान से तृप्त नहीं है इसलिए भविष्य का निर्माण करना चाहता है । अनास्था के भीतर भी आस्था का स्वर है । प्रयोगशील एवं नये कवि के बीच को जो अन्तर है वही यहाँ [illegible]त है । कवि फिर भी गाता है –

मैं संघर्ष हूँ जिसे विश्राम नहीं
जो है मैं उसे बदलता हूँ ।

समाहर "बावरा अहेरी" से उनके दार्शनिक विचार व्यक्त है। वे विराट तत्व के अन्वेषण में भटकते हैं। "आँगन के पार द्वार" "इन्द्रधनु रौंदे हुए", आदि काव्य समाहारों के अनश्वर काव्यों में वह ..ी जहाज पर चढ़कर इन्द्रधनुष तक पहुँचने की छायावादी ..की कल्पना नहीं करता है लेकिन उनके अन्व..के बौद्धिक धरातल प्रस्तुत करता है। इसके बाद बाद के काव्य समाहारों में उनका रहस्यानु.. और अ.. .. ..न्तन व्यक्त .. । उ.. बाद वह "सुनहले शै..." के बीच से "क्या कभी मैं उसे जानता हूँ" कहकर" कितनी नावों में कितनी बार" यात्रा करता है। यह उनकी रहस्यवादी विचारधारा का प्रत्यक्ष प्रमाण है। वह विराट् तत्व की खोज में है। अज्ञेय के आर के काव्यसमाहारों को पढ़ने पर यह ज़रूर मालूम हो जायेगा कि उनके काव्य में, प्रकृतिप्रेम, नारी के प्रति आकर्षण अ..बोध, वैयक्ति.. चेतना, बौद्धिकता रहस्यानुभूति आदि आवश्यक मात्रा से अ..क वर्तमान है। उनके काव्य में सब कहीं एक अन्वेषक की ... है।

उनके काव्य में प्रणय.. .. ते का मान्यता व्यक्त है। वह इन्द्रि.. .. प्रणय को अ.. ..ल नहीं समझता है। उ.. ..े विश्वास है कि अश्लील.. .. ..ों की दृ.. .. के अनुसार .. । वह प्रेमतत्व को ..शुद्ध और ..पमेय मानता है। प्रेम की गतिविधियों के प्रत्यक्ष शब्दों में अभिव्यक्त करने को वह नहीं हिचकता है। उसकी अभिव्यक्ति के.. .. ..कोश के शब्दों को वे अपूर्ण स..ते हैं। यहाँ प्रणयानुभूति से ..ा उनकी .. ..ना प्रमुख हो जाती .. ।

अज्ञेय काव्य में व्यक्ति

अज्ञेय की वैयक्तिकता प्रणयानुभूति से ही फूटती है । उनके अहं अंतर्मुखता आदि उसका फल है । "इत्यलम्" काव्य समाहार के "आज थका हिय हारिल मेरा" कविता इसका उदाहरण है । इस कविता की प्रारंभिक पंक्तियों में कवि की अभिलाषा है कि अपने प्रियतम की स्मृति में लीन रहना । कवि कहता है इस सुखी दुनिया में इससे बढ़कर किसी भी सुख नहीं है ।

> इस सूखी दुनिया में प्रियतम
> मुझको और कहीं रस होगा ।
> तुझे [illegible] तुम्हारी स्मृति के सुख से
> प्लावित [illegible] मेरा मानस होगा

उधर [illegible] से आते वह प्रियहारिल की प्रतीक्षा में है "संध्या के समय तक वह थका हुआ उसकी प्रतीक्षा में बैठता है । पर अन्त को वह हारिल पंछी उड़ [illegible] उड़ते गगन में खो जाते हैं । इसी स्थिति में कवि की अन्तर्मुखी प्रवृत्ति जागती हैं । उसे अकेलापन महसूस करता है । उसका अहं पीडित हो जाता है । वह सूने में डूब जाता है और हारिल से कहता है--

> पर प्रिय [illegible] अन्त समय में क्या तुम
> [illegible] तुम [illegible] दोगे-
> [illegible] सूने में लूट चला
> [illegible] भी [illegible] ?

मैं ने देखा" एक बूंद" [illegible] उनकी कविता काव्य [illegible]

वर्तमान की जर्जरित अवस्था से कवि के मन में द्वन्द्व है फिर भी उनके मन में जरूर उसे बदलने की अदम्य अभिलाषा है। यह तो व्यक्ति अज्ञेय की ही नहीं, सामाजिक परिवर्तन के लिए कवि का लालायित मन ... कांपा है। ... कविता के अंत ... और ... गाता है-

मुड़ती, ... खाती
... ...
नये कगारे तोड़ती
चिरपरिवर्तनशील सागर की ओर जाती जाती-
मैं वहाँ हूँ -दूर, दूर, दूर।

कवि के विशिष्ट व्यक्तित्व के सेतु के नीचे ... जीवन का प्रवाह बहता है। सामाजिक धार्मिक, राजनैतिक और व्यावसायि शोषण के प्रति अज्ञेय की कविताओं में आक्रोश गूँजता है। "शोषक भैया" शीर्षक उनकी कविता में शोषक पर मार्मिक व्यंग्य किया गया है-

डरो मत शोषक भैया
पीलो
मेरा रक्त ताजा है
मीठा है
... है
पी ... शोषक भैया
डरो मत
शायद तुम्हें पचे नहीं
अपना मेवा तुम देखो, मेरा क्या दोष है।

" हरि घास पर क्षण भर " नामक उनके काव्य समाहार में उनकी वैयक्तिक भावना फूटती हैं। काव्य प्रकृति के प्रति और नारी

की विषमता या अद्वितीय अनुभूति का वर्णन है । कवि के जीवन रूपी सागर से उनकी अनुभूति या अद्वितीय अनुभूति रूपी एक बूँद कल्पनारूपी सूर्यकिरण से रंगीन हो जाता है । इसी प्रकार कवि का अनुभव कल्पना से रंगीन होकर एक अद्वितीय निमिष पर कविता हो जाता है ।

यही--

मैं ने देखा
एक बूँद सहसा
उछली सागर के झाग से-
रँगी गयी क्षण-भर
ढलते सूरज की आग से ।

अद्वितीय अनुभूति के क्षण को वाणी देकर कवि न नश्वरता की ... न को भी टालता है ।

अज्ञेय के अहं का विकसित रूप उनकी प्रसिद्ध कविता "नदी के द्वीप" में मिलता है । यह एक प्रतीकात्मक कविता है । प्रस्तुत कविता में कवि समाज के एक नदी के रूप में और व्यक्ति को द्वीप के रूप में चित्रित करता है । व्यक्ति और समाज सम्बन्धी उनके विचार ... परोक्ष न होकर प्रत्यक्ष रूप से यहाँ व्यक्त करते हैं । अज्ञेय कहता है हम नदी के द्वीप है । नदी ही या समाज ही हमें व्यक्तित्व को आकार देता है । नदी तो माँ है ।

किन्तु हम है द्वीप । हम धारा नहीं है
स्थिर समर्पण है हमारा । हम सदा से द्वीप है
स्रोत स्विनी के

किन्तु हम बहते नहीं हैं । क्योंकि बहना रेत होना है ।

ये रेत समाजरूपी नदी का द्वीप है । यह स्थिर समर्पित है । कहता है कि हम ...ी नहीं बहते हैं बहने पर भी फिर रेत हो जायेगा ।

बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं ।

फिर उखड़ेंगे, प्लावन होगा, ढहेंगे, सहेंगे बह जायेंगे ।

यदि हमारा व्यक्तित्व छोड़कर हम बहते हैं तो नदी में मिल जायेंगे, कहीं पैर उखड़ेंगे, उमड़ते जल प्रवाह में व्यक्ति का नाश या द्वीप का नाश हो जायेगा । इसलिए समाज से मिलने पर भी व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व को सुरक्षित रखना है । यही उनकी अहं भावना है । व्यक्ति सिमटकर "मैं" में सीमित हो रहा है । "पूँजीवादी व्यवस्था विज्ञान ... एक शक्ति और जीवन के बढ़ते हुए अभावों ने व्यक्तिवाद को बढ़ावा दिया है । इसलिए आज का सामाजिक जीवन ... व्यक्ति है । हम अपनी स्वार्थ लिप्साओं की पूर्ति को व्यक्तिगत ... प्रकार की वस्तु मानने लगे हैं और इस प्रकार अपने हृदय को झूठा विश्वास दिलाकर प्रवंचित करते रहे हैं--क्योंकि जो व्यक्तिगत है वह समाज से कहीं टकरायेगा नहीं, इसके विपरीत समाज के प्रति सदय होगा । व्यक्ति स्वयं यह समझ पाने में असमर्थ है कि जो ... व्यक्तिगत है उसी किस प्रकार वह सामाजिक संकट का कारण बन गया है" । व्यक्ति के अपनत्व को पूर्ण रूप से छोड़ना उसे पसन्द नहीं है । समाज से मिलकर ही रहना उसे स्वीकार है । लेकिन व्यक्ति "स्व" को पूर्ण रूप से नहीं भूलता है ।

कवि और काव्य-सृजन के समय भी यह विचार स्वीकार्य है । अज्ञेय ने त्रिशंकु में यह धारणा व्यक्त की थी " वास्तव में कलाकार का मन एक भंडार है जिसमें अनेक प्रकार की अनुभूतियाँ, शब्द, विचार आदि इकट्ठे होते रहते हैं" । समय के अनुसार सृजन के अवसर पर वह फूटता है काव्य के रूप में ।

पश्चिम के व्यक्तिवाद का प्रभाव ... अज्ञेय की कविताओं पर पड़ा है । इसी धारणा के अनुसार व्यक्ति हर प्रकार से स्वतंत्र है । वह किसी से प्रतिबद्ध नहीं है । न समाज से, न ईश्वर से, न देश से न परिवार ... वह प्रतिबद्ध है । अज्ञेय के अनेक आलोचकों ने ... ... और असामाजिक ... है । लेकिन उन्होंने अपने ... को, काव्य... ... ...आधारित किया है अनेक स्थलों पर । अपने विचारों और कृतित्व से एक प्रकार से उत्तरदायित्वपूर्ण स्वाधीनता ही उन्होंने ... ...र की । वह स्वयं मानव से मानव को मिलाता है । लेकिन वे ... की प्रतिष्ठा ... उपलब्धि का साधन मानते हैं । "... ... सत्य" कविता में उन्होंने स्वीकार किया है —

अच्छी कुण्ठा रहित इकाई
साँचे ढले समाज से
अच्छा
अपना ठाठ फ़कीरी
मँगनी के सुख-साज से

युगों से दूषित इस समाज की विभीषिकाओं को देखकर पीड़ित हताश कवि की आत्मा ही कहता है कि कुण्ठारहित इकाई, मानव ही अच्छा है । समाज के प्रति समर्पण और व्यक्ति की स्वतंत्रता

अज्ञेय के काव्य की निजी विशेषता है । अज्ञेय का व्यक्तिवाद, सामाजिकता को पुष्ट करनेवाला है । समाज की अच्छाई केलिये काम करनेवाला एक स्वतंत्र इकाई के रूप में वह व्यक्ति को स्वीकार करता है । वह अपनी व्यक्तिगत आकांक्षाओं की पूर्ति केलिये "स्वान्त सुखाय" नहीं लिखता है । वह गाता है सभी के पक्ष में होकर । उनकी कविता में संसार के श्रमरत मानव की कथा अधिक मात्रा में वर्तमान है । "इन्द्रधनु रौंदे हुए" काव्य संग्रह की "मैं वहाँ हूँ" कविता में वे इसी प्रकार लिखते है--

> यह जो कचरा ढोता है
> यह जो झल्ली लिये फिरता है और बेघर [illegible] पर सोता
> है
> यह जो गदहे हाँकता है
> यह जो [illegible] [illegible] [illegible] बेचता है
> यह जो कीचड़ उलीचती है
> यह जो मनियार [illegible] सजाता है
> यह जो कंधे पर चुन्नियों की पोटली रखे केलिए
> गली-गली झाँकती है
>
> [illegible] मैं क्या हूँ

प्रस्तुत कविता से यह स्पष्ट है कि अज्ञेय की कविता में मात्र वैयक्तिकता ही नहीं सामाजिकता भी ओतप्रोत है ।

अज्ञेय के काव्य में आत्मसंघर्ष

अज्ञेय अपने काव्य में व्यक्ति की अंतर वृत्तियों को चित्रित करने केलिये अधिक आत्मोन्मुखी हो जाता है साथ ही साथ वह समाजोन्मुखी भी है । अज्ञेय केवल व्यक्तिवाद की अभिव्यक्ति नहीं करता है बल्कि समाज के एक आवश्यक सत्य की अभिव्यक्ति करता है । यहाँ उनकी काव्य-चेतना अनेक सीमाओं को पार कर सामाजिक मूल्यों की अभिव्यंजना करती है । उसी अभिव्यक्ति करते समय कविता का व्यक्ति केन्द्रित होना मुश्किल है । सर्वत्र सामाजीकरण की प्रवृत्ति है । जीवन के सत्यों को यथार्थ व्याख्या ही समाज का सत्य हो जाता है । कवि का आत्मसंघर्ष चाहे पारिवारिक हो, सामाजिक हो, रचनात्मक हो, विध्वंसात्मक हो, इसी प्रकार के अनेक व्यक्तियों का एक पुंज कवि के चारों तरफ है । कवि अपनी व्यक्ति-चेतना में सामाजिक अनुभूतियाँ लेकर ही जाती है । समाज और व्यक्ति के ब्राह्य और आंतरिक अनुभूतियों को एक नई व्याख्या करके अभि... करता है । ... ...त के फलस्वरूप का... से अन्तर के सत्य सामाजिक संवेदनाओं से भरा हुआ दिखाई पड़ता है । यहाँ व्यक्ति-सत्य केवल अस्तित्व संघर्ष से ही प्रभावित नहीं है अपितु उनका सामा... ...कृत से बाहर आता है ।

"अरी ओ करुणा प्रभामय" काव्य संग्रह की "मछली" कविता की नीचे की पंक्तियाँ देखो--

उछली मछली
मानो पानी का आवेग ही
कांप भरा हो

यहाँ "मछली" प्रतीकात्मक है । जीजीविषा का प्रतीक है, स्वतंत्रता का प्रतीक है, अस्तित्वबोध का प्रतीक है । व्यक्ति रूपी मछली स्वतंत्रता की खोज में कूदती है, उछलती है । मछली के चारों तरफ पानी बहते हैं । मछली उछलती है, उसी की शक्ति से पानी का अंतरंग काँपता है । व्यक्ति के स्वा... की ... समाज के बंधन का ... बन जाता है ।

"मछली" कविता में जो ... कुंठा के बारे में लिखा है, कुं... व्यक्तिचेतना से ... नहीं है, वर्तमान जीवन मूल्यों से ... है । यह निर्विवाद है कि अज्ञेय की कविताओं में बाह्यमूल्यों और आ... संबंध का समन्वय अभिव्यक्त हुआ है । मानवीय ...नाओं की उद्भावना भी व्यक्तिक ... का ... प्रतिफल है । व्यक्ति जीवन के भयानक सत्यों की व्याख्या, सामाजि... से अधिक निकट आ गयी है । आंतरिक मू... बाह्य रूपों के साथ समायोजित होकर बाह्य मूल्यों का ही अ... करता है । अ... ही दूसरे सप्तक की भूमिका में इसी प्रकार लिखा है-- कवि नये मूल्यों को उ... के साथ नये रागात्मक संबंध जोड़कर ... सत्य ... , उन ... सत्यों ... उनका साधारणीकरण कर ... नहीं रहता है "।

व्यक्तित्व और स्वातंत्र्य की ...

अज्ञेय की कविता में ... की जो खोज है वह दुर्गापित स्वा... है "... " कविता में यही विचार ... स्पष्ट हो गई है--

हम निहारते रहे
काँच के पीछे
हाँफ रही है मछली
... भी ... रूप तृष्णा भी
है ... बी ...

हारिल भी ... व का प्रिय प्रतीक है, हारिल उड़ने केलिये विवश है, ... चारों तरफ ... आकाश ... है । यहाँ अस्तित्व की ... की ... हुआ समाज ही हम देखते है समाज से ... पर भी वह स्व... रूप से ... चाहता है ।

हम नदी के साथ-साथ
... की ओर गये
पर नदी ... में ...
हम ... रहे

"... स्वप्न" कविता के ... बन्दी ... कवि अज्ञेय का ही ... है । यह साधारण बन्दी के स्वातंत्र्य को खोज के रूप में ... स्वीकार करता है । स्वातंत्र्य केलिये ... की चिर आ...या यहाँ स्पन्दित है । कवि कारावास से बाहर आना नहीं चाहता है । क्योंकि वह देखता है ... स्व... का ... है -

बंदी हूँ मैं मान गया हूँ
मेरी सत्ता ... गया
अचिर निराशा के ... में फिर वह ... ।
... मेरी ... है
... है
... ... हूँ ... पूर्ण ... ।

इस कविता में स्वतंत्रता केलिये कवि की प्रखर अभिलाषा प्रष्फुटित है। कवि कारागृह में एक बन्दी की यातनाओं का अनुभवी शिकार हो जाता है। लोगों में देशभक्ति जगाने केलिये कवि-हृदय लालायित है। यहाँ कवि कारावास में रहते समय जो जो कठिनाइयाँ भोगने पड़े उन्हें पाठकों तक पहुँचाने की अभिलाषा नहीं बल्कि परतंत्र भारत को स्वतंत्र बनाने केलिये श्रमरत एक सर्जक का आत्मा... हम ... हैं। कवि के मन में सामाजिक व्यवस्था को बदलने की ...पतियों से गरीब लोगों को बचाने की अदम्य अभिलाषा है। ऊँचे-ऊँचे मह... में रहनेवाले ...पतियों को अज्ञेय ललकार... -

> ... मानवता, ... पर आ...
> ... के चिर-... के प्रतिक... प्रा...
> ... दब (... यह रण मेरी ...
> आज ... ललकार रहा हूँ, ... घृणा का भाग (
>
> (पूर्वा पृ. 49)

अज्ञेय साहि... वैयक्तिक कह... वह ललकारता है। उनके काव्य, उपन्यास, कथा निबन्ध सब कहीं समाज से मिलकर जाने की उसकी अदम्य अभिलाषा झलकती है। व्यक्ति मन की अभिलाषा सामाजिक परिदृश्य में ... होना यही उनके पूरे साहित्य की ... है, आकांक्षा है।

लघुमानव का चि...

"यह दीप अकेला" कविता में व्यक्ति और समाज सम्बन्धी अज्ञेय की धारणायें व्यक्त है। एक सृजनरत व्यक्ति का प्रतीक है दीप। यहाँ सत्य की तलाश है, सर्जना है दोनों वैयक्तिक शक्तियाँ है। व्यक्ति ...

अपने गर्व को छोड़कर पंक्ति में मिलने भी वह अपनी विशेषता बना रखता है। उसी के साथ ही आत्मदान का रूप यहाँ दिखाई पड़ता है। आत्मदान का विशेष नीचे की पंक्तियों से स्पष्ट है --

कुत्सा, अपमान, अवज्ञा के धुँधुआते कडुवे तम में
यह सदा द्रवित, चिर - जागरूक अनुरक्त नेत्र
उल्लंब बाहु, यह चिर - अखंड अपनापा
जिज्ञासु, प्रबुद्ध, सदा श्रद्धामय
इसको भक्ति को दे दो
यह दीप, अकेला स्नेहभरा
इसको भी पंक्ति को दे दो
(बावरा अहेरी)

मैं से हम की ओर की यात्रा

अज्ञेय की कविताओं में जो मैं से हम समाजीकरण की यात्रा है वह अन्तर की ओर की यात्रा है। यहाँ मैं की व्यक्तिगत चेतना हम की समूहगत चेतना में परिणत हो गई। अज्ञेय का काव्य गहन एकान्तिकता और आत्यंतिक आत्मनिष्ठता का परिचय देता है उसके केन्द्र में मानवीय अस्तित्व वर्तमान है। वह व्यक्ति की गरिमा को महत्व देता है व्यक्तिवादी चेतना उन्हें अंतर्मुखी बनाती है। लेकिन वह आत्म केन्द्रित नहीं बन जाता है। व्यक्तित्व के परिमार्जन से वह सामाजिक बोध से जुड़ता है। एक बार वैयक्तिक जीवन की उदात्त और गम्भीर अनुभूतियों का प्रत्यय हो जाने पर, कोई भी कवि क्रमशः बहिर्मुख हो सकता है। आत्मपरितोष का अर्थ केवल कवि व्यक्ति के परितोष से नहीं वह एक बृहत्तर और व्यापक परितोष है।"
(नई कविता - आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी पृ:3।)

अज्ञेय के "जनाह्वान" कविता से हम की ओर जाने का सन्दर्भित है।

अज्ञेय के "जनाह्वान" कविता में हम की ओर जाने का शब्द चित्र है। वह बुलाता है –

ठहर ठहर आततायी ! ज़रा सुन ले
मेरे क्रुद्ध वीर्य की पुकार आज सुन जा
दीन दुःखी पददलित पराजित
आज जो कि क्रुद्ध सर्प से अतीत को जगाता
"मैं" से हम हो गया।
"मैं" के झूठे अहंकार ने हराया मुझे,
किन्तु आज मेरे इन बाहुओं में शक्ति है,
मेरे इस पागल हृदय में भी शक्ति है

(अज्ञेय जनाह्वान)

अज्ञेय का ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त प्रसिद्ध काव्य संकलन है "कितनी नावों में कितनी बार"। इस संकलन की एक प्रधान कविता है "कितनी नावों में कितनी बार"। इस कविता में कवि सत्य की खोज में भटकता है। कवि की अन्वेषण कुशलता इस काव्य में अर्थगर्भित हो गई है। कवि जीवन के शाश्वत सत्य की खोज में अधिक दूरी से डगमग नावों में भटकता है।

Contd.....

और कितनी बार कितने कारण अज्ञात
मुझे खींचकर ले गये हैं कितनी दूर
भिन्न पराये देशों की बर्फ़ हवाओं में
जहाँ भी अँधेरों को
और भी उघाड़ता रहा है
एक नंगा तीखा निर्मम प्रकाश

सत्य के अन्वेषण में भटकता हुआ कवि अनेक जागतिक आकर्षणों में फँस जाता है । सत्य और ज्ञान केलिये विवश मानव भ्रान्ति और अज्ञान से भ्रमित हो जाता है । यह रचयिता की वैयक्तिक खोज नहीं है । आज मानवता पूर्णतः इसी खोज में मार्ग भ्रमित हो जाती है । वास्तव में यह कविता पूरी मानवता की भटकनों की साक्षी है, जो सत्यान्वेषण की राह में आती रहती है ।

कविता है 'उधार'। कवि प्रभात में उठकर चिड़िया-धूप, घास, पत्ती, आकाश सभी से उधार माँगता है । वह धूप से गरमायी, चिड़िया से मिठास, घास से हरियाली, लहर से उल्लास आकाश से असीमता उधार में माँगता है । हिचकते बिना सब उधार देती है—

सबसे उधारी माँगा, सबने दिया
यों मैं जिया और जीता हूँ
क्योंकि यही सब तो है जीवन
गरमाई, मिठास, हरियाली, उजाला,
गन्धवाही मुक्त खुलापन
लोच उल्लास, लहरिल प्रवाह

और ...ये भव्य

...व्यक्तित्व ...

ये सब उधार पाये हुए द्रव्य

उधार पाये हुए इन द्रव्यों ... जीता है मानव । यहाँ व्यक्ति मानव को जीने केलिये प्रकृति का समाज के दूसरे व्यक्तियों ... अवश्य दिखाई पडता है । कवि ने इस कविता के अंतिम भाग में एक अनदेखा रूप कवि से आकर प्यार उधार माँगता है । इस प्यार की याचना सुनते समय कवि के मन में, कविरूपी मनुष्य के मन में यही ... आती है क्या हम प्यार रूपी वस्तु ...पार दे सकते हैं । मनुष्य ... हो जाता है । कवि ...अतार्किक, ... और विरह व्यथा का अनुभव करता है । उस रूप ने कवि से बताया है कि "... है, ... है ।" इस बोध से बडी सफलता इस जीवन और ... ... भी नहीं है । यहाँ कवि ... की ओर भी कवि की यात्रा है, मानव की यात्रा है । निष्कर्ष कहा जा सकता है कि अज्ञेय व्यक्ति से ... की ओर जाते हैं । वे समाजरूपी नदी में हमेशा रहना चाहते हैं । लेकिन द्वीप बनकर रहना चाहते हैं । समाज से मिलकर रहना चाहते हैं लेकिन अपने व्यक्तित्व को सुरक्षित रखकर--

... नदी की ... हैं

हम नहीं कहते कि हम को छोडकर

स्रोतस्विनी बह जाय

वहीं ... ... है ।

हमारे ... ... अनुतोष, उभार, ...

सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं,

मां है वह, हैं ... ...

किन्तु हम है दीप । हम धारा नहीं है ।
स्थिर समर्पण है हमारा । हम सदा से दीप है -
स्रोतस्विनी के
किन्तु हम बहते नहीं है, क्यों कि बहना रेत होना है ।"

निष्कर्ष

अज्ञेय की अधिकतर कविताओं में [illegible] समाजसम्बन्धी विचार उभारते है । अज्ञेय समाज से मिलकर जाना चाहते है, समाज से अलग होकर नहीं है । लेकिन अपने व्यक्तित्व को पूर्ण: समाज के लिये खोना उन्हें पसंद नहीं है ।

xxxxxxxxxxx

उपसंहार

अज्ञेय का प्रथम काव्यसंग्रह है "भग्नदूत" व्यक्ति के अनुभूत सत्य को समष्टि तक पहुँचाने का श्रम इस संग्रह की अनेक कविताओं में है। उन्होंने "नान यू" तत्व का प्रयोग निसंकोच उनकी रचनाओं में किया है। इस संग्रह की कविताओं में वे धीरे धीरे प्रवाह में पड़कर उद्दीप्त होता है और अन्त में अवसाद के समय में भी वे अनुभवों को वाणी देने के लिए आकुल दिखाई पड़ते हैं। वे लिखते हैं -"मैं अखिल विश्व की पीड़ा संचित कर रहा हूँ - क्योंकि मैं जीवन का कवि हूँ। (भग्नदूत पृ. १५)

यद्यपि रचना में रचनाकार के अनुभवों को वाणी दी जाती है, लेकिन व्यक्ति सम्बद्धता के स्थान पर लोक सम्बद्ध रखने पर बल दिया है कवि लोकानुभवों को आत्मानिष्ठ करके प्रस्तुत करता है। उनका लोकचेतना का मार्ग व्यक्तिगत राग की भूमि से टकराकर रचनात्मक शक्ति देता है। उनकी पूरी रचना में वैयक्तिक अनुभूतियों का विसर्जन समष्टिगत रूप में करती है। उनकी सामाजिक निष्ठा अन्तः सम्बद्ध होकर भी सामाजिक तत्व बिम्ब रूप में होकर ... चमत्कारिता में प्रभावित होकर बैठता है -

> सुन्दरता की रज ले ले, मानस कोषों में भरते हैं
> संचित सब कुछ क होजाती हूँ, फूलों सी लगने है -
> उसके कण-कण जो बिखरा, कविता में कवि कहलाते हैं।
>
> (भग्नदूत पृष्ठ. ९८-९९)

"चिन्ता" अज्ञेय का दूसरा काव्यसंग्रह है। "चिन्ता" की भूमिका में ही समकालीन कवियों को सचेत करते हुए वे लिखते है कि कवियों को अभिव्यक्तिवादी प्रवृत्तियों में उलझकर काव्य रचना करना, अपना प्रयोजन नहीं मान लेना चाहिए क्योंकि काव्य कवि के अनुभवों का

कर का प्रयत्न है--अपने ही भावों के निर्वैयक्तिकरण की चेष्टा । ... इनके काव्य निरा आत्मनिवेदन है, और सत होकर भी इतना व्यक्तिगत है कि काव्य की अभिधा के योग्य नहीं है -- सार्वजनीनता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता ।"

"हरी घास पर क्षण भर" अज्ञेय की सिद्ध कृति है ।
प्रत्येक स्वप्नदर्शी के आगे
... से अलग नहीं पथ की गति कोई ।
अपने से बाहर आने को छोड़
नहीं आवाप ... ।
लेकिन बाहर आने का अर्थ ... में
अपनी ... का खो ... नहीं, बल्कि उसी
... को ... करना भी है ।
ये ... है
... से ... गये ... "

... की "साँप" कविता ... सभ्यता के प्रति तीखा व्यंग्य है । वे कहते हैं कि नागरी परिवेश सर्प के विष से भी अधिकाधिक घातक है । हमारा देश कविता में भी नागरी सभ्यता पर प्रहार है । ... कहते हैं कि नागरी सभ्यता गाँवों के शोषण से ही ... है । समाज के दलितों और शोषक ... प्रति आक्रोश ... की कविताओं की ... है । ... के ... से ... की ... भी वे ... । ... अहेरी ... काव्य ... है । ... में सूर्य को अहेरी के रूप में ... करता है । ... लाल-लाल कलियों को ... अपने ... ।

लालायित देखता है--

"भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है
आलोक की लाल कनियाँ
पर जब खींचता है जाल को
बाँध लेता है सभी को साथ"

बावरा अहेरी का कवि यहाँ समाज से कटा हुआ नहीं बल्कि दीपक के समान समाज से प्रतिबद्ध है। "शोषक भैया" कविता में शोषक की मनोवृत्ति पर प्रहार करता है। वे काव्य को पर-सुख का उपाधि मानते है। इसलिए वे शारीरिक स्तर पर व्यक्तिगत सुख की ... पर-सुख को अधिक बल देते है। इसलिए वे कवि की सफलता केलिए लोक संगठन और मनःसंगठन की ... से ... मानते है--

... गाता
... कर ... गाता ...
अनिवार्य ... चुकाता हूँ.

अरी ओ करुणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार आदि अज्ञेय के अन्य काव्य संग्रह है। ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है। कितनी नावों में कितनी बार काव्य संग्रह केलिये। प्रस्तुत संग्रह की "उधार" कविता में कवि पुष्प से गरमाई, चिड़िया से मिठास, घास की पत्ती से हरियाली, आकाश से ..., ... से ... से उजास माँगते है। यह प्रकार आत्मनिष्ठता का सामाजिक पक्ष है

सवेरे उठा तो धूप खिलकर छा गयी थी
और एक चिड़िया अभी-अभी गा गयी थी ।
मैं ने धूप से कहा: मुझे थोड़ी गरमाई दोगी उधार ?
चिड़िया से कहा: थोड़ी मिठास उधार दोगी ?
मैं ने घास की पत्ती से पूछा: तनिक हरियाली दोगी ?
तिनके की नोक-भर ?
शंखपुष्पी से पूछा:उजास दोगी-
किरण की ओक-भर ?
मैं ने हवा से माँगा: थोड़ा खुलापन-बस एक प्रश्वास,
लहर से: एक रोम की सिहरन-भर उल्लास ।
मैं ने आकाश से माँगी
आँख की झपकी-भर असीमता-उधार ।

"क्यों कि मैं उसे जानता हूँ", "ऐसे मैं सन्नाटा बुनता हूँ", "महावृक्ष के नीचे" आदि उनके काव्य संग्रह हैं ।

गद्य के क्षेत्र में भी अज्ञेय ने अपनी सफलता प्रकट की । विपथगा, परम्परा, कोठरी की बात, शरणार्थी, जयदोल, अमरवल्लरी, ये तेरे प्रतिरूप आदि उनके कहानी संग्रह है । "शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप और अपने अपने अजनबी" उनके उपन्यास है । वे तारसप्तक, दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक, चौथा सप्तक, प्रतीक पत्रिका आदि का सम्पादक थे । त्रिशंकु, आत्मनेपद, अद्यतन, संवत्सर आदि उनके आलोचनात्मक ग्रन्थ है । उनका जर्नल है भवन्ती । अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछली आदि यात्रावृत्तांत है ।

अज्ञेय के कथासाहित्य को परखने पर, छाया रोग, गृहत्याग

[illegible] कहानियों में पात्रों का चित्रण इतना समर्थ किया है कि लगता है पात्र सामाजिक [illegible] का [illegible] करता है । "शेखर एक जीवनी" उपन्यास में शेखर का चरित्र मानव [illegible] के [illegible] आरोह का चित्रण है । [illegible] परिवार समाज, और शासन के [illegible] से अपने चरित्र को [illegible] रूप में उभारता है । समाज [illegible] कठोरता [illegible] करता है । शेखर की [illegible] में वह स्वयं समाज जीवन की [illegible] । और विद्रूपता को अभिव्यक्त भी करते हैं । फिर भी वह जीवन संग्राम में हारता नहीं है । वह [illegible] को आशापूर्ण [illegible] से देखता रहता है ।

"नदी के द्वीप" में व्यक्ति और समाज वास्तव में द्वीप और नदी के समान है । रेखा, भुवन गौरा चन्द्रमाधव जैसे पात्र इसका प्रमाण है । रेखा एक [illegible] भुवन से कहती है" मैं समझती हूँ हम अधिक से अधिक इस प्रवाह में छोटे-छोटे द्वीप हैं, उस प्रवाह से घिरे हुए भी, [illegible] कटे हुए भी, [illegible] से बंधे और [illegible] भी, पर प्रवाह में सदा असहाय [illegible] ने कब प्रवाह की [illegible] लहर आकर मिटा दे, बहा ले [illegible] द्वीप का फूल-पत्तों का अच्छादन कितना ही सुन्दर क्यों न रहा हो ।" [नदी के द्वीप-पृ. 28] मानव [illegible] की विवशता और सबलता का चित्रण करने में उपन्यासकार सफल हुए है । अपने अपने अजनबी के पात्र [illegible] यो के और सेल्मा वे कुछ अपनी अपनी अजनबी दुनिया में जी रहे हैं । लेकिन उन्हीं का एक समाज वहाँ वर्तमान है । समाज और व्यक्ति का सम्बन्ध वास्तविक जीवन में जिस प्रकार है उसी प्रकार साहित्य में ढूँढना अर्थशून्य है । क्योंकि कला जीवन की अनुकृति है । अनुकृति कभी भी जीवन न होगा । जीवन की यथार्थ से भिन्न होगा । अज्ञेय होने

कलाकार है जो जीवन के चुने हुए रंगों को आभास मात्र दिखाकर एक अनोखी दुनिया की सृष्टि करने के लिये चल पड़े है ।

अज्ञेय के साहित्य में व्यक्ति और समाज सम्बन्धी विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने के बाद उनके साहित्य को और अज्ञेय के बारे में कुछ कहना आवश्यक बन जाता है । अज्ञेय के सम्बन्ध में विभिन्न आलोचकों ने अपने अनोखे मत प्रकट किये हैं उनमें से कई कम पूर्वाग्रहपूर्ण रहे है और कई निष्पक्ष रही है ।

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अज्ञेय का योगदान एक विशेष प्रकार का है । प्रेमचन्दोत्तर साहित्य को उन्होंने एक नया मोड़ दिया था । लेकिन यह मोड सब लोगों के लिये स्वीकार्य नहीं है । व्यक्तियों की विशेष मानसिकता को कथा का आधार बनाकर जिन जिन पात्रों की सृष्टि उन्होंने की है, वे पात्र हमारे बीच जीते हुए भी हम से काफ़ी दूर लगते है । समाज से इन पात्रों की दूरी पाठक के मन में एक अनोखी प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है ।

अज्ञेय के उपन्यास कहानी, कविता आदि साहित्यिक रचनाओं के विशेष अध्ययन के बाद पाठक के मन में ज़रूर यह विचार उभरेगा कि क्या अज्ञेय के साहित्य में व्यक्ति की प्रधानता है या समाज की ? उत्तर यही होगा कि वे वैयक्तिक ही नहीं सामाजिक भी है । लेकिन हमारे मन में यह सवाल उभरेगा कि क्या यह समाज आम लोगों के जीवन से सम्बन्धित है ? अज्ञेय ने कभी भी समाज की जीवन गाथा को शब्दबद्ध करने का प्रयास नहीं किया है । सामाजिक मान्यताओं के सीमित मानदण्डों के आधार पर अज्ञेय के साहित्य में कोई खामी

नहीं की जा सकती । क्योंकि अज्ञेय की सामाजिकता जन-सामान्य की सामाजिकता से भिन्न है ।

महत्वपूर्ण बात तो यह है कि व्यक्तियों के माध्यम से अज्ञेय ने समाज के बदलनेवाले मानदण्डों पर प्रकाश डालने की कोशिश की है । यह चित्रण उनके पात्रों की विशेष मानसिकताओं के संदर्भ में अत्यन्त स्वाभाविक भी है । जहाँ साहित्यक सामाजिकता तत्कालीन जीवित समाज की मान्यताओं को ... रनेवाली है वहाँ आते-आते साहित्यक यथार्थ सामाजिक यथार्थ से काफी दूरी पर खड़ा होना लगता है । अज्ञेय ने चुने हुए पात्रों के माध्यम से जिस परिवर्तनोन्मुख समाज परिकल्पना की है वह समाज हमारा न होते हुए भी हमारा अपना ही है क्योंकि उनमें जीवन बितानेवाले व्यक्ति हमारे प्रतिनिधि न होते हुए भी हमारे बीच जानेवाले हैं ।

इस विशेष परिप्रेक्ष्य में हमारा अध्ययन अज्ञेय के रचना संसार में प्रतिबिंबित होनेवाले साहित्यक समाज की मान्यताओं तक सीमित हो जाता है आपने चुने हुए पात्रों की विशेष मानसिक आचरण और प्रतिक्रिया के माध्यम से कुछ बदलते हुए मूल्यों को अज्ञेय ने सामने रखा है । उसके आधार पर उन्होंने ऐसे व्यक्तियों की कल्पना की है जो समाज से कटे हुए हैं या जिनके लिए समूह नामक कोई चीज़ नहीं है । समूह के नियमों को तोड़ते हुए व्यक्तियों के बीच नये सम्बन्धों को जोड़ना उनका लक्ष्य रहा है । यहाँ पर व्यक्ति अपने नियति का चयन स्वयं करता है । सामाजिक बन्धन नैतिकता का बोध आदि उस केलिए कोई भी महत्व नहीं रखता । इसी दृष्टि से देखने पर प्रत्येक कलात्मक रचना जीवन से जुड़ी भी होती है और कटती भी, कटती

इसलिए है कि उसमें आनेवाले पात्र या परिस्थिति या रंगों के चयन या रेखायें यथार्थ के आभास मात्र दिखानेवाली होती है । तो इस यथार्थ के "आभास" में यथार्थ को ढूंढना समीचीन नहीं है । यानि कला की यथार्थता जीवन की यथार्थता से भिन्न है । यहाँ तक पहुँचते पहुँचते साहित्यकार की संरचनात्मक चेतना [illegible] जीवन के किसी विशेष परिवेश से न जुड़कर समूचे जीवन के मूल भूत यथार्थ पर आधारित बन जाती है । समूचे मानवता को मिलानेवाले सेतु के रूप में वे [illegible] को चित्रित करते हैं —

मैं सेतु हूँ
जो है और जो होगा, दोनों को मिलाता हूँ
मैं हूँ, मैं यहाँ हूँ
पर सेतु हूँ, इसलिए
दूर दूर दूर....मैं वहाँ हूँ
........मैं वहाँ हूँ
तो ऐसा नहीं कि मैं यहाँ नहीं हूँ
मैं दूर हूँ जो है और जो होगा उसके बीच सेतु हूँ
(इन्द्रधनु रौंदे हुए, मैं वहाँ हूँ)

इस प्रकार की रचनात्मकता कवि अज्ञेय को व्यष्टि से समष्टि की ओर, मानवीय संवेदना से मिलाती है । [illegible], धर्म जाति और धर्म की व्याख्या उदात्त वैयक्तिक दायरे से मिलकर समष्टिगत कल्याणमयी रूप में करते है । उनके शब्द रहस्यात्मक है । भाव उदात्त है । इस रहस्यात्मकता के कारण उनका रचनात्मक सत्य अप्राप्य जैसा है । वे कभी भी धारा को या समाज को छोड़ने के पक्ष में नहीं है । दीप अकेला कविता में उसको भी पंक्ति में जोड़ने के लिए वे परिक्रमा निकलते है—

यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व-भरा मदमाता पर
इसको भी पंक्ति को दे दो ।

"नदी के दीप" कविता में भी यही व्यक्त किया है । नदी से दीप का दीप से नदी का नदी से सागर की यह-यात्रा वास्तव में व्यष्टि से समष्टि की यात्रा है । नदी से सागर की ओर की यात्रा के बीच मानव जाते है । इस अध्ययन के बाद हम यह निष्कर्ष पर पहुँचते है कि अज्ञेय व्यक्ति की सत्ता को सुरक्षित रखकर समष्टि की ओर जाते है ।

XXXXXXXXXXXX

सन्दर्भ

अध्याय - 1

1. अज्ञेय - आँगन के पार द्वार पृ. 11
(1) - आत्मनेपद प्र. सं. 1960 178
2. विद्यानिवास मिश्र -आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि अज्ञेय 70
राजपाल एण्ड सन्स काश्मीरी गेट-दिल्ली
2() () विद्यानिवास मिश्र - आज के लोकप्रिय कवि - अज्ञेय 22
3() () विद्यानिवास मिश्र -आज के लोकप्रिय कवि - अज्ञेय 22
4. अज्ञेय - अन्तरा
5. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी -अज्ञेय -असाध्यवीणा काव्य (आँगन के पार द्वार) 97
6. अज्ञेय -आँगन के पार द्वार - असाध्यवीणा
7. डा. गोपालराय - अज्ञेय और उनके उपन्यास 11
8. अज्ञेय -आत्मनेपद
8. अज्ञेय आत्मनेपद 173
9. अज्ञेय - लिखी कागद कोरे 34
10. अज्ञेय - [illegible] 109-111
11. अज्ञेय - आत्मनेपद 174
12. डा. पूनम चन्द तिवारी - अज्ञेय और उनका साहित्य
सत्य श्री प्रकाशन [illegible] भोपाल
14. अज्ञेय -[illegible] 7
15. अज्ञेय - पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ 11
16. ट्रेडिशन एण्ड दि इन्डिविजुअल टैलेंट (हलधारी [illegible] की पुस्तक से 66
उद्धृत)

17. अज्ञेय - चिन्ता पृ. 63
18. अज्ञेय - आत्मनेपद 57
19. अज्ञेय - इन्द्रधनु रौंदे हुए 33-34
20. अज्ञेय - इन्द्रधनु रौंदे हुए 98-99
21. अज्ञेय - विश्वप्रिया 46
22. अज्ञेय - विद्यानिवास मिश्र-संस्करण
23. विद्यानिवास मिश्र - आज के लोकप्रिय कवि अज्ञेय 45
24 विद्यानिवास मिश्र - 52
25. विद्यानिवास मिश्र - अज्ञेय 46
27. अज्ञेय - चिन्ता 47
28. अज्ञेय - चिन्ता 55
28 (क) इन्द्रधनु रौंदे हुए (भूमिका) अज्ञेय 54
29. विद्यानिवास मिश्र -अज्ञेय - इन्द्रधनु रौंदे हुए के संकलन 98
30. आत्मनेपद - अज्ञेय - शेखर से साक्षात्कार 58-60
31. अज्ञेय - शेखर एक जीवनी 15-16
32. अज्ञेय - शेखर एक जीवनी 146
33. अज्ञेय - अपने अपने अजनबी 39
34. अज्ञेय - शेखर एक जीवनी भूमिका

xxxxxxx

सन्दर्भ

अध्याय - II

I.	अज्ञेय	-	अन्तरा	पृ. सं.
II.	अज्ञेय	-	स्रोत और सेतु	112
III.	साहित्यसन्देश अक्तूबर			1944
4.	अज्ञेय	-	जोगलिखी राजपाल एण्ड सन्ज कश्मीरी गेट दिल्ली	66
5.	अज्ञेय	-	जोगलिखी	
6.	अज्ञेय	-	स्रोत और सेतु	112
7.	अज्ञेय	-	भवन्ती	70
8.	अज्ञेय	-	अन्तरा	28
9.	अज्ञेय	-	अन्तरा	112
10.	डा. कुंवरपालसिंह	-	हिन्दी उपन्यास सामाजिक चेतना	16
11.	अज्ञेय	-	अन्तरा - राजपाल एण्ड सन्ज कश्मीरी गेट दिल्ली	17
11 (i)	डॉ. नागेन्द्र	=	साहित्य का समाजशास्त्र नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली	6
12.	अदोल्फो सांचेज वास्केज	-	आर्ट एण्ड सोसाइटी (साहित्य का समाजशास्त्र से)	112-13
13.	डायना लारेंसन और ऐलन स्विंगवुड	-	द सोशियोलॉजी ऑफ लिटरेचर (1971) साहित्य का समाजशास्त्र से	

14. अज्ञेय - अन्तरा - राजपाल एण्ड सन्ज़,
कश्मीरी गेट दिल्ली

15. अज्ञेय - आलवाल 69

16. अज्ञेय - अन्तरा - राजपाल एण्ड सन्ज़
नई दिल्ली

17. अज्ञेय - त्रिशंकु - सूर्यप्रकाश मन्दिर बीकानेर 1973

18. अज्ञेय - त्रिशंकु 32

19. श्री वेदप्रकाश जुनेजा - अज्ञेय और सर्जना के क्षण

20. अज्ञेय - अन्तरा 24

21. अज्ञेय - स्रोत और सेतु 145

22. अज्ञेय आस्था और [illegible] 10

23. अज्ञेय - आलवाल 2[illegible]

24. अज्ञेय - आत्मनेपद 6[illegible]

25. अज्ञेय - जोगलिखी 15[illegible]

26. अज्ञेय - अरी ओ करुणा प्रभामय 68

27. डा॰ देवेश ठाकुर [illegible] के बीच रचना प्रक्रिया 10[illegible]

अध्याय – 3

1. महेन्द्र चतुर्वेदी – हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण 46
2. प्रेमचन्द – कुछ विचार 41
3. जैनेन्द्र कुमार – साहित्य का श्रेय और प्रेय 131
4. नलिनविलोचन शर्मा – लेख – हिन्दी उपन्यास – आलोचना पर्व 2 अंक 11
5. अज्ञेय – आत्मनेपद 86
6. अज्ञेय – आत्मनेपद 73
7. अज्ञेय – आत्मनेपद 64
8. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी – भूमिका 4
9. अज्ञेय – आत्मनेपद 63
10. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी 21
11. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी – भूमिका 2
12. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी, प्रथम भाग 110-111
13. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी 61
14. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी दूसरा भाग 113
15. अज्ञेय – शेखर एक जीवनी 211
16. अज्ञेय – आत्मनेपद 69
17. अज्ञेय – आत्मनेपद 67
18. ??? त्रिशंकु 52
19. डा. सुषमा प्रियदर्शिनी – हिन्दी उपन्यास 231
20. अज्ञेय – आत्मनेपद 86
21. अज्ञेय – आत्मनेपद 73

22.	डॉ. त्रिभुवनसिंह	-	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	पृ. 439
23.	शिवनारायण श्रीवास्तव	-	हिन्दी उपन्यास	316
24.	शिवनारायण श्रीवास्तव	-	हिन्दी उपन्यास	320
25.	अज्ञेय	-	नदी के द्वीप	156
26.	अज्ञेय	-	नदी के द्वीप	156
27.		-	.	
28.	.	-	.	
29.		-	.	
30.		-	.	119
31.	.	-	.	180
32.		-		253-254
33.		-		416
34.		-	.	73
35.		-	.	296
36.		-		294
37.	अज्ञेय	-	अपने अपने अजनबी	43
38.		-		52
39.		-		45
40.		-		45
41.		-	.	21
42.		-		31
43.		-		81
44.		-		24
45.		-		4

46.		-		116
47.		-		50
48.		-		50
49.		-		50
50.		-		105
51.		-		105
52		-		105
53.		-		109
53	[illegible]	-	[illegible] के द्वीप	416
54.	[illegible]	-	[illegible]	203
55.	[illegible]	-	[illegible]	5
56.	[illegible]	-	नदी के द्वीप	17
57.	[illegible]	-	नदी के द्वीप	73
58.	[illegible]	-	[illegible] के द्वीप	80- 81
59.	[illegible]	-	अधूरे साक्षात्कार	25

xxxxxxxxxxx

अध्याय - 4

1. अज्ञेय - विपथगा, "छाड़ियाँ" शीर्षक कहानी में पृ. 22
2. इन्द्रनाथ मदान - हिन्दी कहानी : एक नयी दृष्टि
3. इन्द्रनाथ मदान - हिन्दी कहानी : एक नयी दृष्टि
4. अज्ञेय - अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ - राजपाल एण्ड सन्ज़ कश्मीरी गेट, दिल्ली 20 6
5. अज्ञेय - संपूर्ण कहानियाँ - 21
6. अज्ञेय - अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ 21
7. लक्ष्मी नारायण लाल - आधुनिक हिन्दी कहानी वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
8. डा. लालचन्द्र गुप्त मंगल = अस्तित्ववाद और नयी कहानी 62
9. धर्मवीर भारती - चाँद और टूटे हुए लोग 43
10.

15. अस्तित्ववाद और नयी कविता - आलोचना, पूर्णांक 40

21. अज्ञेय - अज्ञेय की कहानियाँ - राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली 1989
22. अज्ञेय - संपूर्ण कहानियाँ - परिशिष्ट 305

23. अज्ञेय – संपूर्ण कहानियाँ – "पगोडा वृक्ष" 307

24. " 307

2[illegible]. 307

[illegible] अज्ञेय – सं.क. 349

27. अज्ञेय – सं.क. 350

28. अज्ञेय – सं. क. 353

29. अज्ञेय – सं. क. 380-81

30. अज्ञेय – सं. क. 407

32. अज्ञेय– सं. क. 407

32. [illegible] अज्ञेय– संपूर्ण कहानियाँ – [[illegible] की बात से]–

33. अज्ञेय – संपूर्ण कहानियाँ – [जीजी [illegible] से] 431

34. अज्ञेय– " 431

35. अज्ञेय – " [जीजी [illegible]] 431

35. – संपूर्ण कहानियाँ 431

3[illegible]. 437

37. 437

38. " 438

39. [शरणदाता से] 485

40. [[illegible]कार की मुक्ति से] 599

41. 600

42. 601

43. 6[illegible]3

44. [मिलरीन से] संपूर्ण कहानियाँ 207

45. 212

46.	अज्ञेय – संपूर्ण कहानियाँ (ऐन्द्रीन [illegible])	213
47.		214
48.		214
49.	(खतीन बाबू से)	594
50.		595
51.		5[illegible]

xxxxxxxxx

अध्याय – पाँच (कविता में व्यक्ति और समाज)

1.	क्षेमेन्द्र सुमन और मल्लिका	– साहित्य चिन्तन	13
2.	गजानन माधव मुक्तिबोध	– नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र	82
3.	धर्मवीर भारती	– मानव मूल्य और साहित्य	158

xxxxxxx

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हिन्दी उपन्यास समाज और व्यक्ति का द्वन्द -

डा. मंजुलागुप्ता, सूर्यप्रकाशन, नई सड़क दिल्ली

2. हिन्दी उपन्यास सृजन और सिद्धांत -

नरेन्द्र कोहली, सौरभ प्रकाशन, दिल्ली-32

3. हिन्दी उपन्[illegible]ों का शास्त्रीय विवेचन -

डा. [illegible] लोढा, रोशनलाला एण्ड सन्स जयपुर

4. [illegible] के [illegible] -

डा. राजेन्द्र प्रसाद, वाणी प्रकाशन 1987.

5. अ[illegible]क वाजपेयी - [illegible] -राजकमल, प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

6. [illegible] परिप्रेक्ष्य - [illegible] चन्द्र जैन

[illegible] - कविता के नये प्र[illegible]ान,

8. आत्मपरक - [illegible]

9. [illegible] - डा. देशराजसिंह भाटी,

अशोक प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली

10. डा. शिवप्रसाद सिंह- आधुनिक परिवेश और नवलेखन-लोकभारती प्रकाशन

महात्मा गांधी मार्ग इलाहाबाद

11.

1[illegible] श्री उपेन्द्रनाथ अश्क - हिन्दी कहानी एक अंतरंग परिचय-

नीलाभ प्रकाशन -1967

12. डा. [illegible] शर्मा - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक

परिवर्तन, [illegible] प्रकाशन, इलाहाबाद

1[illegible]. डा. रघुवरदयाल वार्ष्णेय - हिन्दी कहानी, बदलते प्रतिमान

14. लक्ष्मीनारायण लाल- आधुनिक हिन्दी कहानी, लेडर प्रेस इलाहाबाद,
पृ. सं.

15. डा. प्रभाकर माचवे - नयी हिन्दी कविता के प्रयोगी अज्ञेय

16. डा. रणवीर रांग्रा - साहित्य साधना और संघर्ष,
भारतीय साहित्य मन्दिर फव्वारा, दिल्ली -6

17. अज्ञेय - शाश्वती - राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली-1979

18. अज्ञेय - पूर्वा-राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली 1968

19. अज्ञेय - स्रोत और सेतु

20. अज्ञेय - [illegible]

21. अज्ञेय - साहित्य और समाज

22. डा. [illegible] - साहित्य का समाज शास्त्र

23. अज्ञेय - हिन्दी साहित्य आधुनिक परिदृश्य

24. प्रभाकर माचवे - हिन्दी साहित्य निर्माता, अज्ञेय, राजपाल एण्ड सन्स,
काश्मीरी गेट, दिल्ली द्वारा 1991

25. डा. ओमप्रकाश अवस्थी - अज्ञेय गद्य में राम बाग कानपुर 1982.

26. बद्री दास [illegible] सिंह - अज्ञेय का [illegible] कोश, अशोक प्रकाशन, दिल्ली

27. [illegible] - अज्ञेय के जीवन यात्रा

28. [illegible] - अज्ञेय

29. अज्ञेय - ऐसा कोई घर अपने देखा है

30. डा. सावित्री सिन्हा - प्रयोगवाद और अज्ञेय

31. अज्ञेय - सदानीरा - संपूर्ण कवितायें

32. अज्ञेय - जनदोल

33. रामकमलराय - शिखर से सागर तक - अज्ञेय की जीवनयात्रा
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली -1986.

34. डा॰ विश्वनाथ सिंह - नयी कविता का इतिहास, संजय प्रकाशन, दिल्ली 1977

35. डा॰ सं... कुमार तिवारी - नयी कविता का प्रमुख हस्ताक्षर, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा

36. डा॰ कृष्ण... - ... की काव्य चेतना, ... प्रकाशन, दिल्ली 1972

37. गजानन माधव मुक्तिबोध - नयी कविता का आत्मसंघर्ष, राजकमल प्रकाशन दिल्ली

38. गंगाप्रसाद विमल - अज्ञेय के रचना संसार सुषमा पुस्तकालय, दिल्ली

39. ... का ... - नयी कविता के प्रतिमान

40. ... - समसामयिकता और आधुनिक हिन्दी कविता, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा 5, 1972

41. डा॰ रघा... कुमार - तत्कालीन हिन्दी कविता - राधा... प्रकाशन, दिल्ली -51

42. अज्ञेय - आत्मपरक - नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली -1 ...5

43. डा॰ ...दी गुप्त - नयी कविता - ...महल, इ...

डा॰ संतोषकुमार - नयी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर, जवाहर पुस्तकालय मथुरा

45. डा॰ ... - आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ - नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी सड़क, दिल्ली 1962

4... डा॰ नगेन्द्र - हिन्दी साहित्य का इतिहास - नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ...3

47. डा॰ गंगाप्रसाद विमल - अज्ञेय का रचना संसार

48. डा॰ नरेन्द्र देव वर्मा - नयी कविता सिद्धान्त और सृजन वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1978.

49. डा. रमाशंकर तिवारी - प्रयोगवादी काव्यधारा,
चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी

50. अनुशी... - 1985 - कोचिन विश्वविद्यालय

5... डा. ...ा पैठणकर- स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता,
गांधी नगर, कानपुर -12

52. डा. अवधनारायण त्रिपाठी - नयी कविता में ... ...
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा-1979

53. डा. अजय ... - ... उन्दराबाद - विश्वविद्यालय प्रकाशन,
वाराणसी 19..

54. ...नाथ चतुर्वेदी - नया हिन्दी काव्य और विवेचना
नन्दकिशोर एण्ड सन्स वाराणसी 1964

56. अज्ञेय - ... के नीचे - राजपाल एण्ड ... ...

57. ... - सुनहले शैवाल - ... प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड - 1966

... डा. रामशंकर तिवारी - प्रयोगवादी काव्य धारा

61. अज्ञेय - ... ... प्रायश - भारतीय ज्ञानपीठ काशी

62. ... - ... ... संपादक अज्ञेय

63. दूसरा स... -

64. तीसरा ...

65. चौथा सप्तक

66. डा. राजेन्द्रमोहन भटनागर

67. डा. राजेन्द्र मोहन भटनागर - आधुनिक हिन्दी कविता और विचार
भारतीय ग्रन्थ निकेतन - दरियागंज, नयी दिल्ली

68. रामस्वरूप चतुर्वेदी - नयी कविताएँ एक साक्ष्य लोक भारती प्रकाशन
महात्मागाँधी मार्ग - इलाहाबाद

69. डा. लक्ष्मीनारायण, कविता कालयात्रिक-प्रकाश प्रकाशन, नई दिल्ली

70. डा. ... सोनटक्के – समकालीन परिवेश और प्रासंगिक रचना संदर्भ
मधुर प्रिन्टर्स कानपुर

71. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी – – नेशनल पब्लिशिंग हाउस-
नई दिल्ली

72. मंजु सिन्हा स्वातं...ोत्तर हिन्दी और गुजराती नयी कविता
नाशनल पब्लि...शिंग हाउस, दिल्ली

73. डा. रघुवंश – ...मानिकता और आधुनिक हिन्दी कविता,
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा 1972

74. विश्वम्भर मानव – आधुनिक काव्य – लोकभारती प्रकाशन, महात्मा
गांधी मार्ग इलाहा.

75. ...श सक्सेना – नयी कविता के मूल्य बोध, ...िव प्रका... दिल्ली 1976

76. गगनांचल वर्ष 10, अंक 2

77. डा. कृष्ण ...ातुक – अज्ञेय की काव्य चेतना, नई ... दिल्ली

78. डा. प्रेमसिंह – अज्ञेय चिन्तन और साहित्य सोहन प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली 32

79. डा. मुरारिलाल शर्मा – हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि,
दिनमान प्रकाशन

80. वे... ...जा – अ...य और सर्जना के ...ज ज्योति बुक डिपो,
करवाल

81. अज्ञेय – चिन्ता – सरस्वती प्रेस बनारस

82. अज्ञेय – इत्यलम्-प्रतीक प्रकाशन दिल्ली – 1946

83. " हरी घास पर क्षण भर – प्रगति प्रकाशन, दिल्ली

84. बावरा अहेरी – सरस्वती प्रेस इलाहाबाद 1954

85. " इन्द्रधनु रौंदे हुए ये सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद 1957

86. " अरी ओ करुणा प्रभामय – भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

87. आंगन के पार द्वार – भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

88. अज्ञेय – पूर्वा – [illegible] लाल एण्ड सन्स दिल्ली
अज्ञेय – कितनी नावों में कितनी बार – भारतीय ज्ञानपीठ 1967

90. क्योंकि मैं उसे जानता हूँ – •

91. सागर मुद्रा – 1971

92. पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ 1974

93. महावृक्ष के नीचे 1977

94. सर्जना के क्षण 1982

95. पूर्वग्रह– अज्ञेय के साथ अन्तिम दिन [illegible]
[28, 29, 30 मार्च 1987 को भारत भवन भोपाल में आयोजित भारतीय कविता को पहला त्रैवार्षिक जो साहित्य रत्न अज्ञेय का अन्तिम [illegible] संवाद था]

96. डा॰ प्रेमसिंह– अज्ञेय चिन्तन और साहित्य
विश्व [illegible] पब्लिकेशंस 1987

97. डा॰ मथुरेश नन्दन कुलश्रेष्ठ – अज्ञेय का अन्तः – प्रक्रिया साहित्य
चित्रलेखा प्रकाशन

98. डा॰ अमरसिंह [illegible] लोधा – प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना
चिन्तन प्रकाशन विश्वबैंककालोनी गुजैनी – कानपुर

99. प्रतापनारायण टंडन – हिन्दी उपन्यासों में [illegible]

100. डा॰ दवेश ठाकुर – नदी के द्वीप की रचना प्रक्रिया , वाणी प्रकाशन

101. [illegible] नारायण श्रीवास्तव–हिन्दी उपन्यास

102. महेन्द्र चतुर्वेदी – हिन्दी उपन्यास एक [illegible] नाशनल पब्लिशिंग हाउस

103. डा॰ कुँवरपालसिंह– हिन्दी उपन्यास सामाजिक चेतना,
पाण्डुलिपी प्रकाशन कृष्णनगर दिल्ली

104. डा॰ चन्द्रभानु सोनवणे – हिन्दी उपन्यास, विविध आयाम,
पुस्तक संस्थान, नेहरु नगर कानपुर

105. लक्ष्मी नारायण वार्ष्णेय – राधाकृष्ण प्रकाशन, हीन्दी उपन्यास

[illegible]

106. डा. मदन [illegible] - अज्ञेय की काव्य चेतना और संवेदना के [illegible]
निर्माण पब्लिकेशन [illegible] अर्बन स्टेट करनाल 1987

107. डा. [illegible] कुमार - काव्य परम्परा और नयी कविता की भूमिका
प्रेम प्रकाशन मंदिर - दिल्ली

108. डा. कृष्णाकुमार - अज्ञेय [illegible] काव्य चेतना अशोक प्रकाशन [illegible]
दिल्ली

109. [illegible] रामकुमार खण्डेलवाल - हिन्दी काव्य और प्रयोगवाद,
प्रकाशन [illegible] एवं संस्कृति - नई दिल्ली 1984

110. डा. मत्स्येन्द्र शुक्ल - आचार्य प्रकाशन - इलाहाबाद 1989

111. डा. [illegible] चतुर्वेदी - अज्ञेय का काव्य रूप - [illegible]
राष्ट्रीय [illegible]

112. अज्ञेय - आत्मनेपद - रा[illegible] प्रकाशन दिल्ली

113. अज्ञेय - केन्द्र और परिधि

114. " - आत्मनेपद

115. डा. [illegible] कुमार विश्वनाथ अय्यर [illegible] सम्पूर्ण [illegible]
[illegible] शाहदरा

116. डा. [illegible] - हिन्दी के [illegible] उपन्यास,
[illegible], कानपुर

117. डा. नन्दकुमार राय - अज्ञेय की औ[illegible] सचेतना शारदा प्रकाशन
नई दिल्ली

118. डा. कृष्णलाल हंस - हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी
साहित्य [illegible]

119. गंगाप्रसाद विमल - आधुनिकता [illegible] के सन्दर्भ में
दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया म लिमिटेड

120. प्रकाश चन्द्रगुप्त - आज का हिन्दी साहित्य, नावेल्टी पब्लिशिंग हाउस
दिल्ली

121. आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी - आधुनिक साहित्य सृजन और समीक्षा
दी मैकमिलन कम्पनी आफ इण्डिया
लिमिटेड

122. डा. नगेन्द्र - आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ - नेशनल [illegible]

123. डा. रामचन्द्र देव - हिन्दी सगुण भक्ति काव्य के दार्शनिक स्रोत

124. महेन्द्रनाथ राय - नवजागरण और छायावाद राधाकृष्ण प्रकाशन इलाहाबाद

125. डा. जीवनसिंह - कविता की लोक प्रकृति
[illegible] प्रकाशन, अहमदाबाद

126. डा. राजेन्द्रसिंह = नागार्जुन [illegible] उपन्यासों में सामाजिक और
राजनीतिक [illegible]

127. डा. चन्द्रिका प्रसाद [illegible] - रामकुमार वर्मा की साहित्य साधना
साहित्यभवन इलाहाबाद

128. रेखा अवस्थी प्रगतिवाद और समानान्तर साहित्य दि मैकमिलन कम्पनी
आफ इंडिया लिमिटेड

129. [illegible] और [illegible] का द्वन्द्व डा. [illegible] गुप्ता,
[illegible] नई सड़क दिल्ली-6

130. नरेन्द्र कोहली - हिन्दी उपन्यास सृजन और सिद्धांत सौरभ प्रकाशन दिल्ली

131. डा. महावीरमल लोढ़ा - हिन्दी उपन्यासों का शास्त्रीय विवेचन
श्री[illegible]लाल जैन एण्ड सन्स जयपुर

132. डा. मुकुन्द द्विवेदी - हिन्दी उपन्यास प्रयोगधर्मिता और [illegible]
लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद-1

133. साक्षात्कार पत्रिका - दिसम्बर 1987

134. डा० देवराज उपाध्याय - जैनेन्द्र के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक
अध्ययन पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली

135. डा० कुंवरपालसिंह - हिन्दी उपन्यास सामाजिक चेतना पांडुलिपि
प्रकाशन - दिल्ली

1 डा० चन्द्रभानु सोनवणे - हिन्दी उपन्यास विविध आयाम पुस्तक
संस्थान नेहरू नगर कानपुर

137. साहित्यिक निबंध - डा० वेदप्रकाश अमिताभ जवाहर पुस्तकालय
सदर बाजार मथुरा

138. शिवनारायण श्रीवास्तव - हिन्दी उपन्यास सरस्वती मन्दिरवाराणसी

139. श्रीमती कुसुम त्रिवेदी - अज्ञेय की औपन्यासिक कृतियाँ
साहित्य संस्थान कानपुर

140. जैनेन्द्रकुमार - साहित्य और संस्कृति पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली

141. डा० रत्नाकर पाण्डेय - हिन्दी साहित्य सामाजिक चेतना पाण्डुलिपि
प्रकाशन कानपुर दिल्ली

142. डा० प्रेमचन्द ... सिन्हा - आधुनिक हिन्दी साहित्य सामाजिक,
जीवन की अभिव्यक्ति सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस
पटना

143. अज्ञेय - आत्मनेपद - भारतीय ज्ञानपीठ काशी

144. डा० शंभुनाथ चतुर्वेदी - अज्ञेय काव्य का पुन मूल्यांकन राष्ट्रीय साहित्य
सदन लखनऊ

145. इन्द्रनाथ मदान - आधुनिक कविता का मूल्यांकन हिन्दी भवन जलंधर
1962

146. प्रेमसिंह - अज्ञेय चिन्तन और साहित्य - पिंकल डायमंड पब्लिकेशन

147. नरेन्द्र कोहली - हिन्दी उपन्यास सृजन और सिद्धांत
सामना प्रकाशन दिल्ली

148. डा. मनमोहन सहगल - हिन्दी उपन्यास के पादचिह्न सूर्य
प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली

149. डा. नागेन्द्र - साहित्य का समाजशास्त्र
नाशनल पब्लिशिंग हाउस

15 [illegible] हित्य [illegible] र समाज परिवर्तन की प्रक्रिया - सम्पादक वात्स्यायन
नाशनल पब्लिशिंग हाउस

151. डा. दुर्गाशंकर मिश्र - अज्ञेय का उपन्यास साहित्य - हिन्दी
बुक सेंटर

152. डा. [illegible]गुलाटी - अज्ञेय की व्यक्ति[illegible]ता [illegible] र सर्जना के क्षण

153. अ[illegible] - जोगलिखी - राजपाल एण्ड सन्स
कश्मीरी गेट दिल्ली

154. अमरसिंह जाराम लोधा - हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना
चिन्तन प्रकाशन कानपुर

155. डा. इन्द्रनाथ मदान - आज का हिन्दी उपन्यास
राजपाल प्रकाशन दिल्ली - 6

156. डा. दे[illegible] - उपन्यासकार अज्ञेय - राजकमल [illegible] न एण्ड सन्स

157. एन. के. जोश[illegible] - हिन्दी उपन्यासों में व्यक्तिवादी चेतना
जवाहर पुस्तकालय मथुरा

158. डा. गं[illegible]ा गुप्त - हिन्दी उपन्यास समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व
[illegible] प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली

159. डा. किरणबाला - समकालीन हिन्दी कहानी और समाजवादी
[illegible]ना, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर

160. डा. सोनटक्के - समकालीन परिवेश और प्रासंगिक रचना सन्दर्भ
अशोक हजारी

161. अज्ञेय - पुष्करिणी - [illegible]

16[illegible]. श्यामशंकर मिश्र - नयी कविता संस्कार और शिल्प
सांची प्रकाशन सागर मध्यप्रदेश

164. डा. कृष्ण भावुक - अज्ञेय की काव्य चेतना अशोक प्रकाशन
दिल्ली

165. गजानन माधव मुक्तिबोध - नयी कविता का आत्मसंघर्ष
राजपाल प्रकाशन दिल्ली

166. डा. शान्ति [illegible]र - हिन्दी उपन्यास प्रेम और सुशील प्रकाशन
पुरानी मंडी अजमेर

167. डा. कृष्ण भावुक - अज्ञेय की काव्य चेतना, अशोक प्रकाशन,
नयी सड़क दिल्ली - 6

168. डा. इन्द्रनाथ मदान - हिन्दी कहानी एक नयी दृष्टि
संभावना प्रकाशन

[illegible]. डा. कृ[illegible]क - अज्ञेय की काव्य चेतना अशोक प्रकाशन, दिल्ली

xxxxxxxxxxxxxxxx

UNIVERSITY LIBRARY ★ COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY ★
COCHIN - 682 022